सोलहवीं से अठारहवीं सदी के मध्य उत्तर भारत में कबीरपंथ का इतिहास

इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डी. फिल् उपाधि
हेतु प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध

प्रस्तुतकर्ता

अनन्त राम

निर्देशक

डॉ0 संजय श्रीवास्तव
वरिष्ठ प्रवक्ता, मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।
2005

प्रमाण-पत्र

मै प्रमाणित करता हूँ कि अनन्त राम द्वारा लिखित शोध-प्रबन्ध 'सोलहवी रो अठारहवी रादी के गध्य उत्तर भारत मे कवीरपथ का इतिहारा' उनका गौलिक कार्य है। इस सागग्री का उपयोग वे यहॉ पहली बार कर रहे हैं।

Anant Ram
(अनन्त राग)

(डॉ0 सजय श्रीवास्तव)
वरिष्ठ प्रवक्ता मध्यकालीन एव
आधुनिक इतिहास विभाग,
इलाहावाद विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद।

प्राक्कथन

मैं परमादरणीय शोध निर्देशक डॉ० संजय श्रीवास्तव, वरिष्ठ प्रवक्ता, मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद के श्रद्धावनत् हूँ, जिनके कुशल निर्देशन में प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध पूर्ण हो सका है। आपके उत्तम निर्देशन, अनाविल, अंजस, अप्रतिम व्यक्तित्व की छत्रछाया एवं सदाशयता के परिणाम स्वरूप ही मै शोधकार्य के दुस्तर अम्बुधि का सहजता से उत्तरण कर सका हूँ। आपने अपने व्यस्त क्षणों मे भी लिखित सामग्री के अन्वीक्षण एव विविध सुरूचिपूर्ण प्रक्रियाओं द्वारा अति दुरुह कार्य को भी अतीव सरस बनाने का प्रयत्न किया है।

शोधकार्य में प्रदत्त सुविधाओ और अनेक त्रुटियों के निवारण में प्रदत्त अमूल्य योगदान हेतु मैं परम् पूज्य गुरुवर डॉ० भुवनेश्वर सिंह गहलौत, प्रोफेसर हेरम्ब चतुर्वेदी, मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद और श्रीमती (डॉ०) गायत्री सिंह, रीडर एवं विभागाध्यक्ष-मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग, ईश्वर शरण डिग्री कालेज, इलाहाबाद का सदैव आभारी रहूँगा। मेरी उत्कट अभिलाषा है कि आप लोगों का यह अनन्य प्रेम एवं अतुलनीय सहयोग मुझे जीवनपर्यन्त प्राप्त होता रहे।

शोधकार्य में प्रदत्त विभागीय सुविधाओं हेतु मै प्रोफेसर एन०आर० फारूकी, विभागाध्यक्ष- मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद का अन्तर्मन से आभारी हूँ।

मै अपने विभाग के समस्त गुरुजनो को हार्दिक धन्यवाद देता हूँ, जिन्होने अपने उत्तम सुझावों द्वारा मेरे मार्ग को प्रशस्त करने का सतत् सद्प्रयास किया है।

प्रत्येक क्षण स्मरणीय एवं वन्दनीय जनक श्री रामसिह और जननी श्रीमती श्यामकली देवी के स्नेह एव आशीर्वाद से मिली अनन्त ऊर्जा से ही मै अपना शोधकार्य पूरा कर सका। आपने मुझे पारिवारिक दायित्वो से मुक्त करके शोधकार्य को पूर्ण करने मे जो अनन्य सहयोग दिया है, उसे व्यक्त करना मेरी सामर्थ्य से परे है। अग्रज श्री सतीशचन्द्र डिप्टी एस०पी०, (उत्तर प्रदेश, पुलिस) द्वारा शोधकार्य पूर्ण करने में प्रदत्त सहयोग को शब्दों में अभिव्यक्त करना असभव है। अग्रज तुल्य श्री पुष्पसेन सत्यार्थी, ए०आर०टी०ओ०, ने शोधकार्य के दौरान मुझे न केवल नैतिक सम्बल प्रदान किया है, अपितु समय-समय पर विविध रूपों में मेरा उत्साहवर्धन भी किया है।

शोधकार्य से सम्बन्धित तथ्यों के संग्रहण में सहयोग प्रदान करने के लिए अग्रज तुल्य श्री महेन्द्र पाल डिप्टी जेलर, श्री कपिल कुमार, खण्ड विकास अधिकारी, भाई अजीत कुमार भारती, भाई रवीन्द्र कुमार गौतम, श्री आशुतोष तिवारी, श्रीमती निर्मला आदि विभागीय रिसर्च स्कॉलरों को धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ। आप लोगों के अमूल्य योगदान को भुलाना कभी भी सभव नहीं है।

मैं नलनी कम्प्यूटर, मनमोहन पार्क के श्री राम अवतार भारद्वाज के प्रति भी अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ, जिन्होने अल्प समय मे तत्परता के साथ टकण कार्य को पूर्ण किया। मैं उन सभी लोगों और सस्थाओ के प्रति आभारी हूँ, जिन्होने मेरे इस शोधकार्य में प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से सहायता दी है।

अनन्त चतुर्दशी
दिनाक १७ ०९ २००५

Anant Ram
(अनन्त राम)

विषयानुक्रम

प्रथम अध्याय

विषय प्रवेश

भक्ति आन्दोलन के एक विशिष्ट स्तम्भ के रूप में कबीर उत्तर भारतीय निर्गुण भक्ति शाखा के पुरोधा ही नही वरन् शोषित, उत्पीडित तथा उपेक्षित दलित जातियो की बहुसख्यक जनता के प्रतिनिधि भी थे। कबीर को उत्पन्न हुए लगभग छ. सौ वर्ष बीत चुके है, परन्तु उनके संदर्भ आज भी अतीत नही लगते। उनके सवाल आज भी हमारे जवाब की तलाश में दिखायी देते है। कबीर ने जाति–व्यवस्था में व्याप्त उच्चावचता–क्रम के भाव तथा अस्पृश्यता का निषेध करते हुए मानवमात्र की समानता का जो सदेश दिया था,[1] वह आज भी प्रासागिक है। शास्त्रीय मान्यताओ की स्वार्थपरक एवं वैमनस्यकारी व्याख्याओ को उन्होने तार्किक ढग से अस्वीकार कर दिया था। वह एक उच्चकोटि के साधक, क्रान्तिकारी समाज–सुधारक, मानवतावादी मूल्यों के पोषक तथा श्रेष्ठ कवि के रूप मे आदरणीय एव वन्दनीय है। आज हमारे बीच मे वह उपस्थित नही है, फिर भी अपनी शिक्षाओं, मानवतावादी विचारों और सिद्धान्तों के माध्यम से वह हमारे समीप है।

कबीर का आविर्भाव, ऐसी विषम परिस्थितियो में हुआ था, जब भारत में राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक आदि सभी क्षेत्रो में भयानक अराजकता का साम्राज्य था।[2] कबीर के व्यक्तित्व का विकास ऐसे ही वातावरण मे हुआ। सामाजिक और धार्मिक झंझावातों से प्रताडित और प्रभावित होकर कबीर का असाधारण व्यक्तित्व एक शक्ति–पुज के रूप मे उद्भूत हुआ। कबीर का काल तुगलक वश के अन्त से प्रारम्भ होकर सैय्यद वश एव लोदी वश, विशेषकर, सिकन्दरलोदी के शासन के मध्य पडता है, जो राजनीतिक रूप से सक्रमण का काल था। सिकन्दर लोदी इस्लाम का कट्टर समर्थक था। सिकन्दर लोदी का शासनकाल हिन्दू धर्म एवं हिन्दू जनता के लिये अभिशाप के समान था। ऐसी

---

1 डॉ० केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीर पंथ', पृष्ठ 153

2 सम्पादक डॉ० वासुदेव सिह, 'कबीर', पृष्ठ 9

मान्यता है कि सिकन्दर लोदी अत्याचारो के प्रभाव से कबीर भी न बच सके जिसके कारण उन्होने तत्कालीन देशी और विदेशी शासको को मिथ्याभिमान और धार्मिक कट्टरता आदि को त्यागकर अनासक्तिपूर्ण और अभिमान हीन किन्तु सम्मानपूर्ण जीवन–यापन की शिक्षा दी। उन्होने अपने पदो मे तत्कालीन कठोर दण्ड–व्यवस्था एव क्षणभगुर राज्य–सत्ता का भी उल्लेख किया है। कबीर के समय आर्थिक क्षेत्र मे शोषण और उत्पीडन का बोलवाला था। शोषक और शोषित वर्ग का अस्तित्व था। शोषक वर्ग मे शासक वर्ग, जागीरदार, सूबेदार, उच्चवर्ग के व्यापारी, सैनिक और न्यायिक अधिकारियों की गणना की जा सकती है। शोषित वर्ग मे किसान, मजदूर, दलित आदि लोग थे। कबीर ने शोषित वर्ग की उत्पीड़न की दशा को देखा और भोगा तभी तो उन्होंने अपनी रचनाओ मे अनेकश इनको रेखांकित किया है। कबीर समाज की विषम स्थिति से अवश्य द्रवित थे। गरीबी की मार उन्होंने स्वय झेली उन्होंने धन के अधिक संकेन्द्रण की भर्त्सना की और धन की कमी को भी समाज के लिए अहितकर बताया। कबीर ने इन दोनो वर्गों मे सामंजस्य की भावना को पल्लवित और पुष्पित करने का प्रयास किया। उनका अर्थ–सम्बन्धी दर्शन, सामाजिक समरसता पर आधारित था। कबीर के युग मे हिन्दुओ और मुसलमानो के बीच किसी भी प्रकार के धार्मिक समन्वय की सभावना नही थी और सभवत: इसी कारण देश मे समानान्तर दो समाज स्पष्टत: परिलक्षित होते थे। समानान्तर रूप से खडे हुए हिन्दू और मुसलमान दोनो धर्मो मे व्यावहारिक और धार्मिक वास्तविकता का अभाव था तथा आडम्बरो का बोलबाला था। हिन्दू धर्म मे जाति–प्रथा के कारण जड़ता आ गयी थी। खान–पान एव हुक्का–पानी विषयक नियम इतनी दृढ़ता से निभाए जाते थे कि जैसे कि वे ईश्वरीय नियम हो। इससे समाज का विकास अवरुद्ध हुआ, सभ्यता का ह्रास हुआ और एक संकुचित मनोवृत्ति का विकास हुआ। कबीर ने हिन्दू समाज की इन कमियो को दूर करने का काम पूरी दृढता से किया। मुस्लिम–समाज मे शासक–वर्ग विलासी था। शराब और कबाब उनके

प्रिय भोजन थे। मुल्ला और मौलवी, मुसलमान–जनता को हिन्दुओ के विरुद्ध भडकाकर अपना उल्लू सीधा कर रहे थे। ऐसे विषाक्त वातावरण मे कबीर ने प्रेम की ज्वाला फूँकी। कबीर की साधना, आचार–विचार और आदर्शो ने जनता को सोचने हेतु बाध्य किया। कवीर की वाणी ने समाज की इस दशा पर नश्तर का काम किया और धर्म के ठेकेदारो को आडे हाथो लिया।

कवीर–युगीन धार्मिक वातावरण भी अस्थिरता का था। धार्मिक अन्धविश्वासो के सतत आघात के कारण हिन्दू समाज विखंडित हो रहा था। शासक वर्ग के इस्लाम के अनुयायी होने के कारण भी हिन्दू धर्म को उपेक्षा मिलती रही। इसी भावना के कारण मध्यकालीन भक्ति भावना का उदय और विकास हुआ। वज्रयान–सहजयान, नाथपन्थ और निरजन सम्प्रदाय भी उस समय अस्तित्व में थे। निरजन सम्प्रदाय बाद मे कबीरपंथ मे अन्तर्लीन हो गया और उसकी सारी पौराणिक कथाए कबीर मत मे सग्रहीत हो गयी।[1] मुस्लिम भक्ति धारा की एक पद्धति सूफी साधना–पद्धति उस समय भारतीय जनमानस मे अपना स्थान बनाये हुए थी। कबीर ने समाज को देखा, यथार्थ को भोगा और उपर्युक्त विषम परिस्थितियो के जाल में आकण्ठ डूबे और फँसे मानव–जीवन, मानव प्रेम को मानव के लिए व्यापक रूप में स्थापित करते हुए मानव प्रेम को ही ईश्वर प्रेग के पर्याय रूप मे निरूपित किया। कबीर ने कर्गगार्ग, ज्ञानमार्ग और योगमार्ग के बीच चलने वाले द्वन्द्वो की समाप्त किया और ज्ञान तथा योग की सजीवनी से भक्ति भूमि का सिचन करके उसे पुष्पित ओर पल्लवित कर मानवमात्र के निमित्त कल्याणकारी स्वरूप मे प्रतिष्ठित किया। शोषित दलित निम्नवर्गीय जन समुदाय ही सामाजिक प्रगति की आधारभूत शक्ति थी। इस विशाल जन समुदाय की प्रगति पर ही समाज की वास्तविक प्रगति निर्भर करती थी अत इसकी पक्षधरता के माध्यम से कबीर ने प्रगतिवादी चेतना का परिचय

---

1 सम्पादक डॉ0 वासुदेव सिह, 'कबीर' पृष्ठ 26

देकर एक युग प्रवर्तक का दर्जा हासिल किया। कबीर को हुए 600 वर्ष बीत चुके है मगर फिर भी अपने विचारों को रूप मे आज भी जिन्दा है और आज भी समाज को नयी दिशा दे रहे है। उनको उच्चकोटि का महापुरूष ही समझा जाना चाहिए न कि देव या अवतार।

कबीर और कबीरपथ पर हिन्दी एव अग्रेजी साहित्य मे काफी शोध कार्य हुआ है। डॉ0 परशुराम चतुर्वेदी ने 'उत्तरीभारत की रात परपरा' मे कबीर और कबीरपथ के बारे सटीक और दुर्लभ जानकारी दी है। उन्होने कबीर के शिष्यो और पथ की शुरूआत और प्रवर्तक के बारे मे निष्पक्ष रूप से मूल्याकन किया है। इसी प्रकार डॉ0 केदार नाथ द्विवेदी ने 'कबीर और कबीरपथ, तुलनात्मक अध्ययन' मे त्रुटियो और विवादों से बचते हुए काफी सामग्री हमे प्रदान की है। उन्होने कबीरपंथ की विविध शाखाओ के अनुसार विभाजन करके विषयानुसार वर्गीकरण द्वारा अध्ययन को काफी आसान बना दिया है। डॉ0 द्विवेदी द्वारा निकाले गये निष्कर्षो पर मतभेद हो सकता है परन्तु नि.सन्देह उन्होने अपने प्रयास द्वारा कबीर और कबीरपथ के अध्ययन के काफी आगे बढा दिया है उन्होंने इस सम्बन्ध मे जो प्रचुर सामग्री हमे प्रस्तुत की है उसकी कभी भी उपेक्षा नहीं की जा सकती है।

डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कबीर पर काफी कार्य किया है, उनका 'कबीर' नामक ग्रन्थ भावुक विद्वान के पाण्डित्य एवं खोज मूलक प्रवृत्ति का परिचायक है। उन्होने कबीर साहित्य पर पडे हुए विभिन्न प्रभाव और कबीर के दार्शनिक विचारो की विद्वत्तापूर्वक जानकारी दी है। उनके द्वारा कबीर की जाति, साधना और उनकी रचनाओ के बारे मे दिये निष्कर्षो पर काफी मतभेद भी है। डॉ0 धर्मवीर ने अपने ग्रन्थ 'कबीर बाज भी, कपोत भी और पपीहा भी,' मे डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी के निष्कर्षो से असहमति प्रकट की है। डॉ धर्मवीर ने हमे काफी मेहनत करके विश्लेषणात्मक ढग से कबीर के सम्बन्ध मे असाधारण

सामग्री प्रदान की है। डॉ0 धर्मवीर ने जोरदार ढंग से कबीरपथ की धारणा का खण्डन किया है।[1] उन्होने कबीरपथ की धारणा को कबीर के प्रभाव को कम करने की साजिश बताया है। उनके अनुसार कबीर ने किसी पथ की स्थापना नही की थी। कबीर और कबीरपथ पर विदेशी विद्वानो ने काफी कार्य किया है। 19वी सदी आरम्भ मे डेनमार्क के विशप गुटर ने कबीर और उनके मत के सम्बन्ध में 'मूलपेसी' नामक ग्रन्थ इटालियन भाषा में लिखा था जो 'माइन्स आफ दि ईस्ट' नाम की ग्रन्थमाला के तृतीय भाग में प्रकाशित हुआ था। 1907 ई0 मे रेवरेण्ड वेस्टकाट नामक पादरी ने सर्वप्रथम स्पष्ट रूप से कबीर और कबीरपथ का अध्ययन एक साथ करके नयी राह दिखाई। वेस्टकाट ने 'बीजक' और आदि ग्रन्थ' को आधार बनाकर निष्कर्ष निकाले हैं। उनका निष्कर्ष है कि कबीर के उपदेश मे हिन्दुओ और मुसलमानों को पृथक् करने वाली दीवारो को तोड़ना दीख पडता है जहॉ कबीरपंथ की विचारधारा, सम्भवतः हिन्दुओं, मुसलमानों और ईसाईयो के धार्मिक सिद्धान्तो पर आधारित कही जा सकती है। वेस्टकाट ने अपने ग्रन्थ 'कबीर एण्ड कबीरपंथ' मे कबीर के दाम्पत्य जीवन पर भी प्रकाश डाला है। वेस्टकाट के बाद एक अन्य पादरी विद्वान डॉ0 की ने इस सम्बन्ध मे और विचार किया। इन्होने भी 'कबीर एण्ड हिन्द फालोवर्स, शीर्षक से एक निबन्ध लिखा, जिसके आधार पर इन्हे लंदन विश्वविद्यालय से डी0 लिट् की उपाधि मिली। उन्होंने अपने अध्ययन का विषय, कबीर की रचना 'बीजक' तथा 'आदिग्रन्थ', 'वन हर्डेड पोएम्स आफ कबीर' 'सुख–निधान' और 'अमरमूल' आदि को बनाया। उन्होने रेवरैण्ड वेस्टकाट की पुस्तक से भी काफी सहायता ली है, किन्तु कई बातों मे डॉ0 की धारणा वेस्टकाट की धारणा से भिन्न भी है उन्होने कबीर के दार्शनिक सिद्धान्तो एवं विचारो पर प्रकाश डालकर कबीर के जीवन वृत्त और कबीरपथ का ही ख़ोजपूर्ण विवेचन प्रस्तुत दिया है। डॉ0 की का

---

1 डॉ0 धर्मवीर, 'कबीर बाज भी, कपोत भी और पपीहा भी', पृष्ठ 15

निष्कर्ष था कि "कबीरपथ की मान्यताए आज कबीर के मत से बहुत आगे बढ जाने का प्रदर्शन करती है, और इसमें सदेह नही की इस सम्प्रदाय के आधुनिक नेता किसी विकासपरक सिद्धान्त के द्वारा उसके साथ अपने विचारों का सादृश्य भी सिद्ध कर सकते है। सम्भव तो यह भी है कि कबीर की प्रामाणिक रचनाओ में से भी कुछ ऐसी पक्तियाँ चुनी जा सकती हैं, जिनका इनके प्रस्तुत मत से मेल भी खा जाय, परन्तु सभी बातों पर विचार करते हुए यह कहा जा सकता है कि जो कुछ कबीर ने उपदेश दिये थे। उनसे वह निश्चित रूप से भिन्न है।[1]

सन्त कबीर के पश्चात् उनके दर्शन, विचारो, कार्यो तथा सदेशो को जन–जन तक पहुँचाने के लिये क्षेत्रीय स्तर पर अनेक सगठन बने। जिन्हें कालान्तर मे कबीरपथ की शाखाएँ घोषित कर दिया गया। यह सगठन अपनी विशिष्ट शैली मे भारतीय समाज के अतिरिक्त विदेशियो को भी उद्वेलित करता रहा। ससाधनो की कमी, पद लिप्सा और आपसी मतभेदों इत्यादि कारणो से इन संगठनो को अपेक्षित सफलता नही मिल सकी फिर भी उन्होने तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और धार्मिक क्षेत्रों मे अमिट प्रभाव छोडा। अकबर की नीतियो को कबीर की शिक्षाओं से प्रभावित माना जाता है। 16वी सदी से 18वी सदी के मध्य कबीरपथ के विकास पर ऐतिहासिक दृष्टिकोण से किये गये शोधकार्यों का अभाव है, अत. इस अति महत्वपूर्ण विषय पर शोध करने की महती आवश्यकता थी। इस विषय पर शोध करने का उद्देश्य कबीर और उनके विश्वव्यापी मानवतावादी धर्म को इतिहास विषय मे सम्मानपूर्ण स्थान दिलाना है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध '16वी सदी से 18वीं सदी के मध्य उत्तर भारत मे कबीरपथ का ऐतिहासिक अध्ययन' मे ऐतिहासिक दृष्टिकोण को अपनाते हुए विश्लेषणात्मक पद्धति द्वारा सटीक और अविवादित निष्कर्ष निकालने का प्रयास

1 एफ0ई0 की 'कबीर एण्ड हिज फालोवर्स', पृष्ठ 143–144

किया गया है। इतिहास के अन्तर्गत मानव जीवन के सभी पहलुओं का अध्ययन किया जाता है। धर्म, राजनीति, समाज, साहित्य और अर्थ इत्यादि सभी का अपना इतिहास होता है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध मे कालजयी महापुरुष कबीर के धर्म की महत्ता को रेखाकित करते हुए उनकी मृत्यु के उपरान्त उनके सिद्धान्तो के प्रचार–प्रसार एवं लोकप्रियता के वृत्त को देने की कोशिश की गयी है। कबीर के अनुयायी सतो श्रुति गोपाल, धर्मदास, भगवान गोसाई के बारे मे सटीक जानकारी देने का प्रयास किया गया है। कबीर की जीवनी के बारे में विवादित तथ्यों को भी नये आलोक मे विवाद से परे रखने की चेष्टा की गयी है। 'कबीर और कबीरपथ' दोनो के साहित्य, दर्शन और सिद्धान्तों के साम्य और वैषम्य का भी उल्लेख किया गया है। कबीर के उपरान्त किस प्रकार उनके अनुयायियो ने शासको की नीतियो को प्रभावित किया, इस तथ्य का भी उल्लेख किया गया है अकबर को कबीरपंथी सत ने किस प्रकार प्रभावित किया था, इसका भी यथा स्थान वर्णन किया गया है। कबीरपंथी सतनामी संतो द्वारा औरंगजेब की कट्टरता की नीति का सशक्त ढंग से विरोध किये जाने का भी नये आलोक मे जानकारी दी गयी है।

कबीर और कबीरपंथ के सम्बन्ध मे व्याप्त भ्रातियों का अन्त हो, इसके लिंये कबीर के उपरान्त की परिस्थितियों और तथा कथित कबीरपथ के प्रवर्तको के बारे में प्रस्तुत शोध प्रबन्ध मे विस्तार से चर्चा की गयी है। कबीर और धर्मदास, श्रुति गोपाल तथा भगवान गोसाई के बीच कालक्रम के आधार पर कोई सम्बन्ध स्थापित नहीं होता है। कबीर के उपरान्त इन सतो ने उनके व्यक्तित्व से प्रभावित होकर अलग–अलग स्थान पर उनके नाम से सगठन स्थापित किये होगे, जो बाद मे कबीरपंथ की शाखाओं के रूप में प्रसिद्ध हुए। कबीरपथ की शाखाओं के इतिहास के अतिरिक्त उनमे व्याप्त मतभेदो और बाह्योपचारो का भी उल्लेख किया गया है। कबीरपंथी मठों ने कबीर की शिक्षाओ से किस प्रकार

अलग होकर मठाधीशी मे सलग्न होकर कबीर की मानवतावादी शिक्षाओ का अनादर किया है और कर रहे हैं, इसका भी विशेष रूप से उल्लेख किया गया है। दूसरी ओर कबीरपंथी संगठनो ने शिक्षा, चिकित्सा आदि क्षेत्रो मे सराहनीय कार्य भी किया है और आज भी यह कार्य कर रहे है, इस तथ्य को भी विस्तार से लिखा गया है। कबीरपंथ के साहित्य को पौराणिक, सैद्धान्तिक, बाह्योपचारिक, टीका, लोक साहित्य और फुटकर साहित्य मे विभाजित करके विशिष्ट ढंग से जानकारी देने की कोशिश की गयी है। रोचक ढग से, उदाहरण सहित लोक साहित्य का जनमानस की भाषा मे वर्णन किया गया है। विभिन्न कबीरपथी मठो के पदाधिकारियों और उनके कार्य मठो की आपके साधनो, मठों द्वारा मनाये जाने वाले उत्सवो आदि का वर्णन किया गया है। कबीरपथी साधु महात्माओ और बैरागियो के रहन--सहन और वेशभूषा आदि की भी जानकारी दी गयी है। कबीरपथ के सिद्धान्तो की जानकारी नये आलोक में देने की कोशिश की गयी है। कबीरपंथ की सभी शाखाओं को ईश्वरवादी और अनीश्वरवादी दो भागो मे विभाजित करके उनके माया, जगत, परमतत्व सम्बन्धी सिद्धान्तों का वर्णन किया गया है। कबीरपथ के साधनापक्ष के अन्तर्गत ज्ञान, भक्ति, योग आदि के सम्बन्ध मे विभिन्न शाखाओं के विचारो की जानकारी देने की कोशिश की गयी है। कबीर और कबीरपथ के सिद्धान्तों, साधनात्मक पक्ष और विचारधारा का तुलनात्मक वर्णन करके दोनो के बीच साम्य और वैषम्य को रेखाकित करने की कोशिश की गयी है। इसके अलावा कबीरपंथ के तत्कालीन परिदृश्य पर प्रभाव को रेखाकित किया गया है। इस पथ की सगठनात्मक, आतरिक और बाह्य कमियो की भी जानकारी दी गयी है, जिनके कारण इस पथ का समाज पर प्रभाव धूमिल हुआ। कबीर के उपरान्त कबीरपंथी सगठनो ने सभी वर्गो को प्रभावित किया। कबीर और कबीरपथ का सर्वाधिक प्रभाव समाज के निम्नवर्ग पर ही पडा हैं। यह समाज के उच्च वर्ग को प्रभावित करने मे सफल नही रहा है। कबीरपथी संगठनों की पद लिप्सा और अन्य धर्मो के कर्मकाण्डो को अपनाने की

प्रवृत्ति ने उनके नैतिक पतन में काफी योगदान किया है। कबीरपथ के पतनोन्मुख होने के स्वरूप का भी गहराई से विश्लेषण किया गया है, जिस प्रकार, बौद्वधर्म मे बाहरी प्रभाव आने से उसका पतन हुआ उसी प्रकार कबीरपथ में बाहरी प्रभावो से उसका पतन हुआ है।

इस शोध–प्रबन्ध की प्रस्तुति एवं प्रकाशन के बाद एक नये दृष्टिकोण की स्थापना होगी। कबीर और कबीरपंथ का अध्ययन जिस प्रकार हिन्दी विषय के अन्तर्गत किया जा रहा है, उसी प्रकार इतिहास मे भी इस सम्बन्ध मे नयी विधा का सृजन होगा और कबीर जैसे क्रातिकारी संत एक स्तम्भ की भांति इतिहास मे स्थापित होगे। कबीर की मानवतावादी शिक्षाओ को समुचित स्थान मिलना ही चाहिए और फिर वर्तमान शताब्दी तो मानवतावादी मूल्यो की है इसीलिये इन मूल्यो को काफी महत्व दिया जा रहा है। नारी मुक्ति की बात भी जोर–शोर से की जा रही है अत ऐसे मे कबीर के सिद्धान्त एव आदर्श पुन प्रासगिक हो उठे है। अपने तुच्छ स्वार्थ तथा मिथ्या अहकार और परस्पर एक दूसरे के प्रति द्वेषभाव एवं पक्षपात पूर्ण कटु आलोचना को सर्वथा छोडकर विचारो की भिन्नता होते हुए भी सद्‌गुरू कबीर के झण्डे के नीचे कबीरपंथ को एक जुट होना ही होगा।[1] कबीर के अनुयायियों का परम कर्तव्य है कि वह अपने उदार प्रेम मे पूरी मानवता को आत्मसात् करे और कबीर के उज्ज्वल ज्ञान को आधुनिक विधा से प्रसारित करे।

* * * * *

---

1 अभिलाषदास, 'कबीर दर्शन', पृष्ठ 602

द्वितीय अध्याय

कबीर एक परिचय

जन्म काल

कबीर के जन्म काल को लेकर विद्वानों में काफी मतभेद पाया जाता है। पं० रामचन्द्र शुक्ल, डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी, डॉ० श्याम सुन्दरदास, डॉ० रामकुमार वर्मा, डॉ० परशुराम चतुर्वेदी और डॉ० पीताम्बर दत्त बडथ्वाल आदि विद्वानों ने अपने-अपने मत के द्वारा कबीर के जन्म काल को स्पष्ट करने की चेष्टा की, परन्तु अभी भी इस सम्बन्ध मे सुनिश्चित मत की अपेक्षा है। प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध में पूर्ववर्ती विभिन्न मतों का विश्लेषण करने के उपरान्त वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाकर निष्कर्ष निकालने का प्रयास किया गया है।

इस सम्बन्ध मे एक मत कबीर का जन्म सवत् 1420 स्वीकार करता है। डॉ० पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल ने रैदास और पीपा को रामानद का शिष्य रहा है और पीपा को कबीर से अधिक आयु का बताया है। इनके अनुसार कबीर का जन्म सम्वत् 1420 मे हुआ होगा।[1] इस मत के समर्थन में कबीर के तथाकथित गुरु रामानन्द के काल सम्बन्धी तर्क भी दिया जाता है। रामानन्द का जन्म विक्रम सवत 1356 को हुआ था,[2] उन्होंने अपनी पूर्णावस्था सम्वत 1440 के लगभग कबीर को शिष्य बनाया होगा, तब कबीर 15-20 वर्ष के रहे होगे। ऐसी स्थिति मे कबीर का जन्म संवत 1420 ठहरता है।

परन्तु इसे स्वीकार नहीं किया जा सकता क्योकि डॉ० केदारनाथ द्विवेदी ने डॉ० बड़थ्वाल की इस मान्यता को कल्पना पर आधारित माना है।[3] इस मत की प्रामाणिकता भी सदिग्ध है क्योकि इसकी किसी स्वतत्र प्रमाण से पुष्टि नही

---

1 द्रष्टव्य डॉ० केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीरपथ', पृष्ठ 63
2 डॉ० परशुराम चतुर्वेदी, 'उत्तरी भारत की सत परम्परा', पृष्ठ 225
3 डॉ० केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीरपंथ', पृष्ठ 63

होती है। इसके अलावा कबीर को रामानन्द का शिष्य बनाया जाना भी सदिग्ध माना जाता है। डॉ0 मोहन सिह की धारणा है कि कबीर के कोई गुरु नही थे।[1]

दूसरे मत के अनुसार– कबीर का जन्म सम्वत 1455–1456 मे हुआ था। इसके समर्थन मे निम्नलिखित साखी प्रस्तुत की जाती है।

"चौदह सौ पचपन साल गए चन्दवार एक ठाठ ठए।"
जेठ सुदी बरसात की पूरनमासी प्रकट भयो।।

डॉ0 श्यामसुन्दर दास ने इस साखी को धर्मदास द्वारा कथित माना है।[2] कबीर मशूर के लेखक स्वामी परमानन्द ने कबीर के सवत 1455 मे काशी को लहरतारा नामक स्थान पर अवतीर्ण होने की बात कही है।

इस मत को स्वीकार करते हुए कबीर का जन्म काल लगभग संवत 1455–60 माना जा सकता है। इसकी दृष्टि सिकन्दर लोदी के काल के आधार पर भी हो जाती है। सिकन्दर लोदी का काल सन् 1489 ई0 से 1517 ई0 तक माना गया है।[3] सिकन्दर लोदी को कबीर का समकालीन माना जाता है। कबीर की आयु सिकन्दर लोदी के 40–50 वर्ष रही होगी और सिकन्दर लोदी शासक बनने के समय (सन् 1489) 30–40 वर्ष का रहा होगा, ऐसी स्थिति में कबीर, सिकन्दर लोदी के समकालीन सिद्ध हो जाते हैं। एक और तथ्य महत्वपूर्ण है कि कबीर को रविदास ने शास्त्रार्थ में पराजित किया था।[4] ऐसी स्थिति में कबीर रविदास के समकालीन रहे होगे रविदास का काल मीराबाई द्वारा उनको अपना गुरु मानने के आधार पर 15वी 16वी शताब्दी सिद्ध हो जाता है। मीराबाई का जन्म सन् 1498 ई0 मे राजपूत परिवार में हुआ था।[5] इसी प्रकार मीराबाई का

---

1 डॉ0 मोहन सिह, 'कबीर हिज बायोग्राफी', पृष्ठ 22, 24
2 द्रष्टव्य डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीरपथ', पृष्ठ 63
3 इमत्याज अहमद, 'मध्यकालीन भारत 8वीं से 18वीं शताब्दी एक सर्वेक्षण', पृष्ठ 102
4 'भविष्य पुराण', चतुर्थ खण्ड', अध्याय 17, 18
5 इमत्याज अहमद, 'मध्यकालीन भारत 8वीं से 18वीं शताब्दी एक सर्वेक्षण', पृष्ठ 135

होती है। इसके अलावा कबीर को रामानन्द का शिष्य बनाया जाना भी सदिग्ध माना जाता है। डॉ0 मोहन सिह की धारणा है कि कबीर के कोई गुरु नही थे।[1]

दूसरे मत के अनुसार– कबीर का जन्म सम्वत 1455–1456 मे हुआ था। इसके समर्थन मे निम्नलिखित साखी प्रस्तुत की जाती है।

"चौदह सौ पचपन साल गए चन्दवार एक ठाठ ठए।"
जेठ सुदी बरसात की पूरनमासी प्रकट भयो।।

डॉ0 श्यामसुन्दर दास ने इस साखी को धर्मदास द्वारा कथित माना है।[2] कबीर मंशूर के लेखक स्वामी परमानन्द ने कबीर के सवत 1455 मे काशी को लहरतारा नामक स्थान पर अवतीर्ण होने की बात कही है।

इस मत को स्वीकार करते हुए कबीर का जन्म काल लगभग सवत 1455–60 माना जा सकता है। इसकी दृष्टि सिकन्दर लोदी के काल के आधार पर भी हो जाती है। सिकन्दर लोदी का काल सन् 1489 ई0 से 1517 ई0 तक माना गया है।[3] सिकन्दर लोदी को कबीर का समकालीन माना जाता है। कबीर की आयु सिकन्दर लोदी के 40–50 वर्ष रही होगी और सिकन्दर लोदी शासक बनने के समय (सन् 1489) 30–40 वर्ष का रहा होगा, ऐसी स्थिति मे कबीर, सिकन्दर लोदी के समकालीन सिद्ध हो जाते हैं। एक और तथ्य महत्वपूर्ण है कि कबीर को रविदास ने शास्त्रार्थ मे पराजित किया था।[4] ऐसी स्थिति मे कबीर रविदास के समकालीन रहे होगे रविदास का काल मीराबाई द्वारा उनको अपना गुरु मानने के आधार पर 15वी 16वी शताब्दी सिद्ध हो जाता है। मीराबाई का जन्म सन् 1498 ई0 में राजपूत परिवार में हुआ था।[5] इसी प्रकार मीराबाई का

---

1 डॉ0 मोहन सिह, 'कबीर हिज ब्रायोग्राफी', पृष्ठ 22, 24
2 द्रष्टव्य डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीरपंथ', पृष्ठ 63
3 इमत्याज अहमद, 'मध्यकालीन भारत 8वीं से 18वीं शताब्दी एक सर्वेक्षण', पृष्ठ 102
4 'भविष्य पराण', चतर्थ खण्ड', अध्याय 17, 18

रविदास को यह सम्बोधन कि "गुरु मिलिया रैदास जी दीन्ही ग्यान की गुटकी"[1] और "रैदास सन्त मिले मोहे सत्गुरु दीन्हा सहदानी,"[2] भी रविदास को उनका समकालीन सिद्ध करता है।

जन्म स्थान

पहला मत कबीर का जन्म मगहर में मानता हैं, जिसके समर्थन मे 'गुरु ग्रन्थ साहिब' के निम्न पद को उद्धृत किया गया है। **'पहले दर्शन मगहर पाइयो, पुनि काशी वसि आयी'।** जिसके आधार पर डॉ0 पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल का मत है है कि काशी में बसने से पहले कबीर मगहर मे रहते थे और सभव है कि वहीं उनका जन्म हुआ होगा।[3]

इस मत को स्वीकार करने मे कठिनाई है। क्योकि इसकी पुष्टि किसी दूसरे साक्ष्य से नही होती है। यहॉ तक की 'कबीर ग्रन्थावली' मे भी यह पद कही उल्लिखित नही है। अत: केवल सभावना के आधार पर कोई निष्कर्ष नही निकला जा सकता। हो सकता है उनका कोई सम्बन्ध मगहर से रहा हो।

दूसरा मत, उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जिले के बेलहरा गॉव मे कबीर के उत्पन्न लेने की बात करता हैं 'बनारस डिस्ट्रिक्ट गजेटियर' में इसका वर्णन किया गया है।[4] इस ग्राम में बेलहरा तालाब है। कहा जाता है कि वहीं लहरतारा मे कबीर प्रकट हुए थे।

परन्तु इस मत को स्वीकार नही किया जा सकता क्योकि इस ग्राम मे कबीर का न तो स्मारक है और न कबीरपंथी कोई मठ है, और न ही कबीरपथी रचनाओ मे यहॉ के सम्बन्ध मे किसी प्रकार का कोई सकेत मिलता है।

---

1 'मीराबाई की पदावली', हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग पद 24, पृष्ठ 10
2 वही पद 159, पृष्ठ 55
3 डॉ0 पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल, 'हिन्दी काव्य मे निर्गुण सम्प्रदाय', पृष्ठ 45
4 बनारस डिस्ट्रिक्ट, 'गजेटियर, इलाहाबाद', सन् 1909

तीसरे मत, के अनुसार कबीर का जन्म मिथिला मे हुआ था। डॉ0 सुभद्र झा ने अपने निबन्ध–'सत कबीर की जन्म भूमि तथा उसमे कुछ मैथिली पद' मे कबीर की जन्म भूमि को मिथिला कहा हैं। मिथिला के प्रति कबीर की ममता को उन्होने अपने मत का आधार बताया है।

डॉ0 सुभद्र झा की उक्त मान्यता को स्वीकार करना सभव नही है क्योकि उनके तर्क के किसी अन्य स्रोत से पुष्टि नही होती है, दूसरे उनके पद पूरी तरह प्रामाणिक भी नही है। सभव है कि कबीर कुछ समय तक मिथिला मे रहे हो या अपने भ्रमण काल मे मिथिला गये हो। इसका यह अर्थ नहीं लगाया जाना चाहिए कि कबीर मिथिला मे पैदा हुए थे। ममता या प्रेम किसी भी व्यक्ति को किसी भी स्थान के प्रति हो सकता है।

चौथे मत के अनुसार कबीर का जन्म काशी मे हुआ था। इस मत के समर्थन मे 'कबीर ग्रन्थावली' और 'गुरु ग्रन्थ साहब' मे वर्णित उद्धरणो को दिया जाता है। 'कबीर ग्रन्थावली' मे उल्लेख किया गया है कि **'तू बाम्हन में काशी का जोलाहा'**[1] इस ग्रन्थ मे कबीर द्वारा काशी के ढोगी पंडितो की खिल्ली उडाई जाने का वर्णन है। इसी प्रकार 'कबीर परचयी' मे अनन्त दास ने लिखा है कि **"काशी बसे जुलाहा एक हरि हरि भगतीन की पकरी टेक।"** राघोदास कृत भक्तमाल से भी इसी मत के समर्थन मे तर्कों को उल्लिखित किया गया है।[2]

यह मत अंशत सतोषजनक प्रतीत होता है। काशी ही कबीर की कर्मस्थली रहीं है। संभव है कि काशी से पहले कबीर का जन्म किसी दूसरी जगह पर हुआ हो।

---

1 सम्पादक पारसनाथ तिवारी, 'कबीर ग्रन्थावली', 109–188

2 पूरब मे प्रकट भये जन कबीर नृगुन भगतकाशी बाहरि निकसि कहुँ को जात जुलाहो

उपरोक्त चारो मतो को समीक्षा से स्पष्ट होता है कि कबीर की जन्म स्थली मगहर ही रही होगी। मिथिला और बेलहरा के प्रमाण अधिक पुष्टि नहीं है।[1] डॉ० राम कुमार वर्मा ने भी मगहर को ही कबीर का जन्म स्थान स्वीकार किया है। मगहर मे ही वह पैदा हुए होगे, क्योकि व्यक्ति मरते समय अपनी जन्म स्थली मे जाना चाहता है और कबीर अंतिम समय 'मगहर' गये थे, दूसरे 'मगहर' में विजली खॉ द्वारा बनवाया गया स्मृति चिन्ह उनकी जन्म स्थान को स्मरणीय बनाने हेतु बनवाया गया होगा।

माता–पिता और जाति :

कबीर के माता–पिता व जाति के बारे मे किवदतियॉ और कहानियॉ अधिक प्रचलित है। सभवत: प्रामाणाभाव के कारण ऐसा है। इस सम्बन्ध में कबीरपथी सत महात्मा भी कुछ नही रहते बल्कि उनका दृढ विश्वास है कि वे नित्य, अमर और अजर है। 'ज्ञान सागर' नामक कबीरपंथी ग्रन्थ मे कबीर के पूर्व जन्म में ब्राह्मण होने को न मान के उनके पोषक नीरू–नीमा को ही पूर्व जन्म के ब्राह्मण होना कहा गया है। वे नीरू–नीमा नाम के जुलाहा दम्पत्ती में यहॉ पालित पोषित हुए और जाति के जुलाहे इसलिए कहे गये कि उनका जुलाहे के घर पालन पोषण हुआ। एक प्रचलित कथा के अनुसार कि एक विधवा रामानन्द्र के सम्मुख प्रणत हुई तो गुरु ने 'पुत्रवती भव' का आशीर्वाद दिया।[2] रामानन्द को उसका विधवा होना ज्ञात नही था, आशीर्वाद फलित होने पर उस विधवा ने लोक लज्जा के भय से शिशु को तालाब के किनारे फेंक दिया। नीमा–नीरू को प्राप्त होने पर कबीर का उनके द्वारा पालन पोषण हुआ।

परन्तु इस कथा की सच्चाई पर विश्वास नही किया जा सकता क्योकि सर्वप्रथम, यदि यह घटना सत्य होती तो प्रिया दास की भक्तमाल में इसे स्थान

---

1 द्रष्टव्य डॉ० राम कुमार वर्मा, 'हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास', पृष्ठ 237

2 डॉ० श्याम सुन्दर दास, 'कबीर ग्रन्थावली', पृष्ठ 22 (प्रस्तावना)

मिलता, दूसरे, रामानन्द जैसे सत से ऐसी गलती की कल्पना नही की जा सकती कि वह किसी विधवा को बिना जाने पुत्रवती होने का आशीर्वाद दे। वह तपोवन सन्यासी आत्मबल से उक्त विधवा की वैधव्यावस्था से परिचित हो सकते थे।

निष्कर्षत कहा जा सकता है कि कबीर के माता–पिता के नाम जो भी रहे हो, नीरू–नीमा द्वारा पोषित होने के कारण वही माता–पिता माने जाने चाहिए। कबीर द्वारा बार–बार स्वय को जुलाहा कहना साबित करता है कि उनके माता–पिता नीरू–नीमा ही रहे होगें। कबीरपथी ग्रन्थ 'ज्ञान सागर' भी इस तथ्य की पुष्टि करता है।

कबीर की जाति या कुल के सम्बन्ध मे भी स्पष्ट प्रामाणाभाव के कारण स्पष्टत. कुछ भी कहना सम्भव नही है। कबीर को कोरी या मुस्लिम सिद्ध करने का प्रयास भी किया गया है। कबीर को जुलाहा सिद्ध करने का प्रयास रागु आशा, 'कबीर ग्रन्थावली, 'दाविस्ताने मजाहिब, आदि के आधार पर किया गया है। कबीर ग्रन्थावली में वर्णित है कि **'जाति जुलाहा नाम कबीरा बनि–बनि फिरो उदासी।**[1] इसी प्रकार रागु आशा में कबीर कहते हैं कि– **''तू ब्राह्मण मै काशी का जुलाहा बुझहु मोर गिआना।''** इसके अतिरिक्त 'दविस्ताने मजाहिब' का लेखक मोहसिन फानी कबीर को जुलाहा जाति का बताता है।

इसी प्रकार उनको कोरी जाति से भी सम्बद्ध किया जाता है। डॉ0 पीताम्बर दत्त बडथ्वाल का मत है कि कबीर कोरी जाति के और जुलाहा कुल से सम्बन्धित थे, जो मुसलमान होने से पहले जोगियों का अनुयायी था।[2] इस मत के सत्य होने की सम्भावना है क्योकि हिन्दुओ की अनेक जातियो ने सामूहिक रुप से मुस्लिम धर्म ग्रहण किया था। मथुरा, एटा, गोरखपुर, आदि मे

1 सम्पादक पारसनाथ तिवारी, 'कबीर ग्रन्थावली', पृष्ठ 181, पद 271
2 डॉ0 पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल, 'योग प्रवाह', पृष्ठ 126

ऐसी जातियों का आज भी अस्तित्व है। यह हिन्दू मुस्लिम दोनो धर्मो के संस्कारो को स्वीकार करते हैं।

निष्कर्षत कहा जा सकता है। कि कबीर किसी निम्न कुल या निम्न जाति से ही सम्बन्धित रहे होंगे, और जुलाहापन उनका व्यवसाय रहा होगा इसी कारण उन्होंने स्वयं को बार–बार जुलाहा कहा है। बहुत संभव है कि वह कोरी जाति से सम्बन्धित रहे हो, जिसकी पुष्टि कबीर के दो पदो में[1] क्रमशः आये हुए **"कहै कबीरा कोरी"** तथा **"सूतै सूत मिलाये कोरी"** से हो जाती है। इस तथ्य की पुष्टि डॉ० पीताम्बरदत्त बडथ्वाल के तर्क से भी हो जाती है, उनका तर्क है कि कबीर कोरी जाति से सम्बन्धित थे और जुलाहावृत्ति अपनाने के कारण जुलाहा हो गये, जो मुसलमान होने से पहले जोगियो के अनुयायी थे। कबीर ने योग साधना सम्बन्धी अनेक प्रसंगो का उल्लेख किया है। ये योगी या जुगी कहलाने वाले लोग आसाम, बंगाल, बिहार, पूर्वी उत्तर प्रदेश में पाये जाते है।[2] कबीर जिस जुलाहा जाति मे पालित हुए वह एकाध पुश्त पहले से योगी जैसी किसी आश्रम भ्रष्ट जाति से मुसलमान हुई थी या अभी होने की राह मे थे। ये जातियॉ हिन्दू समाज मे स्वभावत. उच्च श्रेणी मे नही गिनी जाती अपितु नीच या अस्पृश्य तक समझी जाती थीं और इनकी बस्तियों ने सामूहिक रुप से मुसलमानी धर्म ग्रहण किया था।[3]

व्यवसाय, रहन–सहन और वेशभूषा :

कबीर का व्यवसाय पालित पोषित माता पिता द्वारा अपनाया गया बुनने का अर्थात जुलाहेपन का था। इसका परिचय उन्होंने **"हमोधर सूत तनहि**

1 'कबीर ग्रन्थावली', पद 346 पृष्ठ 205 तथा पद 49, पृष्ठ 279
2 डॉ० परशुराम चतुर्वेदी, 'उत्तरी भारत की सत परम्परा', पृष्ठ 147
3 डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी, 'कबीर', पृष्ठ 14

नित ताना"[1] कह कर स्पष्ट शब्दो में दिया हैं एक अन्य पद से भी इसकी पुष्टि होती है जिसमे इनकी स्त्री लोई द्वारा इनके तनने बुनने के औजारो के अस्त–व्यस्त होकर अनुपयोगी सिद्ध हो जाने पर व्यवसाय का बन्द हो जाना बतलाया गया है रागु आसा में कहा गया है कि– **'तनना–बुनना सभु तजियो कबीर।'**[2]

उनकी वेषभूषा और रहन सहन सादा था। आडम्बरो से दूर, बाह्योपचारों की खिल्ली उडाने वाला व्यक्ति विलासी जीवन कैसे व्यतीत कर सकता है। उनकी वेषभूषा अनुपम थी। उनके प्राप्त चित्रों से ज्ञात होता है कि उनकी वेषभूषा धुम्मकडी स्वभाव के सतो की भॉति चीर धारण करने की थी, दाढी, मूँछ रखी हुई होती थी, रहन सहन और खान पान सीधा सादा था, जो मिलता था खा लेते थे व्रत, तप आदि को पाखंड समझते थे। उनका कहना था कि "हमारा काम केवल राम नाम का जप करना तथा अन्न का भी जप करना है जो पानी की सहायता से उत्तम बन जाता है। उन्होने कलाहारियो को–"ना सोहागिनि न ओहि रण्ड" कहकर उनकी हँसी उड़ायी है।[3]

(ख) परिवार, गुरु और भ्रमण :

स्पष्ट जानकारी के अभाव के कारण कबीर के पारिवारिक जीवन के बारे में अनेक प्रकार की भ्रांतियॉ व्याप्त हैं। उन्हे एक तरफ गृहस्थ कहा गया है तो दूसरी तरफ बैरागी। उनके गृहस्थ होने के प्रमाण के रुप मे निम्नलिखित दो पदों को दिया जाता है।

---

1 सत कबीर, 'रागु आसा', 26
2 सत कबीर, 'रागु गूजरी', 2
3 गुरू गन्थ साहिब, 'राग गौड', पद 11

"कबीर त्यागा ग्यान करि, कनक कामनी दोइ।"[1]
"पहिली कुरुपि कुजाति कुलखनी साहुरै यह औ बुरी।
अबकी सरुपि सुजाति सुलखनी सहजै उदरि धरी।"[2]

जिनसे अनुमान लगाया गया है कि कबीर की दो पत्निया थी एक कुजाति थी और दूसरी सुजाति थी। दूसरा मत उनको बैरागी घोषित करता है, इसके समर्थक उक्त पद मे आये पत्नियो के नाम का आध्यात्मिक अर्थ निकालते हैं। पहले शब्द का आध्यात्मिक माया के रुप मे और दूसरी का भक्ति के रुप मे। परन्तु इसे स्वीकार करना सभव नही है, क्योंकि कबीर गृहस्थ थे और उनके पत्नियॉ रही होंगी। संभव है कि कबीर का विवाह हुआ हो और उनकी पत्नी रही हो इसमे अविश्वास करने का कोई कारण नही जान पडता है, उनकी एक या दो पत्नियॉ रही होगी। कबीर के उद्‌गारों से व्यक्त होता है कि वह गृहस्थ जीवन के झझावतो से त्रस्त थे। कबीरपथी सत महात्मा उनके गृहस्थ जीवन की धारणा को स्वीकार नही करते है।

कबीर की कमाल और कमाली नामक दो संतानो के बारे मे भी जानकारी मिलती है। कबीर एक स्थान पर कमाल की भौतिकता पर रूष्ट होकर झिझकते हुए कहते है–**"बूडा वंसु कबीर का उपजियो पूत कमालु। हरि का सिमरनु छाडि कै, धरि लै आया मालु।**[3] डॉ0 पीताम्बर दत्त बडथ्वाल ने 'कमाल बानी' से एक छद उद्‌धृत किया है– **"गंग जमन के अतरे निर्मल जल पाणी। कबीर को पूत कमाल है, जिनि यह गति जाणी।"** अर्थात कमाल जो कबीर पुत्र था, सिद्ध था। प्रारम्भ मे कमाल सग्रही प्रवृत्ति का मायाबी बालक था किन्तु कालातर मे वह सतपथ पर आरूढ़ हो गया। अत स्पष्ट है कि कबीर के पुत्र कमाल और पुत्री कमाली उनके गृहस्थ जीवन के प्रतीक हैं।

---

1 सम्पादक पारसनाथ तिवारी, 'कबीर ग्रन्थावली', पृष्ठ 60, साखी 4
2 गुरू गन्थ साहिब, 'राग आसा', पद 32
3 गुरू गन्थ साहिव, सलोकु 115

पुत्र–पुत्री होना स्वाभाविक है अतः उनके अस्तित्व के नकारना या प्रश्न चिन्ह लगाना उचित नही कहा जा सकता।

शिक्षा–दीक्षा :

कबीर की शिक्षा और दीक्षा के सम्बन्ध मे दो प्रकार की धारणाए प्रचालित है। एक धारणा **"मसि कागज छुओ नहीं, कलम गह्यो नहिं हाथ"**[1] के आधार पर कबीर को निरक्षर घोषित करती है। दूसरी धारणा कबीर को पढा–लिखा घोषित करती है। इसके समर्थक अभिलाषदास है अभिलाषदास के अनुसार उक्त साखी का अर्थ यह लगाया जाना चाहिए–कि उन्होंने स्वय न लिखकर शिष्यो से लिखवाया, जिस प्रकार लिखते समय वेद त्याग कलम, कागज और स्याही नही छुए थे, वह बोलते गये और गणेश जी लिखते गये, इसी प्रकार कबीर बोलते गये और उनके शिष्यगण लिखते गये।[2]। और वाणियों के सग्रह का नाम स्वयं बीजक रखा। कबीरपंथी सतो महात्माओं की धारणानुसार कबीर पॉच वर्ष की अवस्था में ही सर्वज्ञान सम्पन्न हो गये थे। **"पॉच बरस जब भये, काशी मॉझ कबीर। गरीब दास अजब कला, ज्ञान ध्यान गुण सीर।"** इसका समर्थन संत अभिलाषदास ने कबीर दर्शन नामक अपने ग्रन्थ मे किया है।

निष्कर्षत कहा जा सकता है कि कबीर योगी पुरुष थे और वे पढे लिखे रहे होगे। उस समय की व्यवस्था मे किसी निम्नजातीय व्यक्ति की विधिपूर्ण या सस्कारपूर्ण शिक्षा की कल्पना नहीं की जा सकती मगर सत्सग और आत्मचेष्टा से व्यक्ति कुछ भी कर सकता है। एकलव्य को शस्त्र शिक्षा देने से मना करने पर भी वह आत्मबल से अपने युग का सबसे पारंगत शस्त्र विद्या सम्पन्न बना। हो सकता है कि कबीर ने भी बिना गुरु के एकलव्य की तरह विद्वत्ता हासिल

---

1 बीजक, 'साखी' 187

2 अभिलाष दास, 'कबीर दर्शन', पृष्ठ 118

की हो और सम्भवत. इसीलिये उन्होंने कहीं भी अपने गुरु का नाम नहीं लिया है।

गुरु :

कबीर ने अपने संबोधन में किसी को गुरु नहीं स्वीकार किया है अत. यह धारणा पुष्ट हुई है कि उन्होने किसी को अपना गुरु नहीं बनाया होगा। डॉ0 मोहन सिंह की यही धारणा है।[1] कबीर अपने गुरु का नाम 'ज्ञान, विवेक शब्द, राम ही बताते हुए दिखाई पडते हैं। दूसरी ओर 'कबीर ग्रन्थावली', और 'गुरु ग्रन्थ साहब', मे उनके गुरु होने की बात कही गयी है। 'दविस्ताने मजाहिब' के लेखक मोहसिन फानी के अनुसार कबीर ने रामानन्द को अपना गुरु बनाया था।[2] ऐसी भी सम्भावना स्पष्ट की गयी है कि शेख तकी कबीर के गुरु थे। परन्तु इस अनुमान की पुष्टि किसी स्रोत से नहीं होती, मौलवी गुलाम सरवर की 'खजिनतुल असफिया', इस सम्बन्ध में भ्रम ही फैलाती है। बीजक की रमैनी 48 और 63 से स्पष्ट होता है कि कबीर शेख तकी का हृदय से श्रद्धाभाव और सम्मान करते थे। रामानन्द को उनका गुरु स्वीकार करने वाले विद्वानो में डॉ0 पीताम्बर दत्त बडथ्वाल, डॉ0 श्याम सुन्दर दास और रामकुमार वर्मा आदि मुख्य रूप से उल्लेखनीय हैं। **"काशी मे हम प्रकट भये है, रामानन्द चेताय। समरथ का परवाना लाए हंस उबारन आये।"**[3] उक्त साखी कबीर वचनावली मे वर्णित है। इसके आधार पर रामानन्द को उनका गुरु माना गया है परन्तु उक्त रचना कबीर की प्रामाणिक रचना नही मानी जाती। रामानन्द को उनका गुरु स्वीकार करने वाले अधिक है इससे यही निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि हो सकता है कि कबीर ने रामानन्द को गुरुतुल्य माना हो और

1 डॉ0 मोहन सिह, 'कबीर एण्ड हिज बायोग्राफी', पृष्ठ 22, 24
2 रे0 वेस्ट काट, 'कबीर एण्ड दि कबीरपथ', पृष्ठ 37 से उद्धृत
3 कबीर रचनावली, पृष्ठ 12

उनकी रामानन्द के प्रति श्रद्धा रही हो। परन्तु श्रद्धाभाव होना अलग है, गुरु स्वीकार करना दूसरी बात है। अत निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि कबीर ने गुरु रुप में भले ही किसी का नाम न लिया हो, परन्तु उनकी श्रृद्धा रामानन्द के प्रति रही होगी। बीजक में एक स्थान पर ही रामानन्द का नाम आया है।[1] हो सकता है कि कबीर ने रामानन्द की शिष्यता ग्रहण करने की कोशिश की हो और निम्न कुल मे पैदा होने के कारण रामानन्द ने उन्हें शिष्य न बनाया हो। इस प्रकार की किवदती भी मिलती है। ऐसी स्थिति में कबीर ने अपना गुरु ज्ञान, विवेक, और राम को बनाया होगा। रामानन्द उस समय के प्रसिद्ध संत थे अत कबीर की उनके प्रति श्रृद्धा रही होगी और यह सत्य है कि कबीर वैष्णव महात्माओ के सात्विक गुणो की भूरि–भूरि प्रशसा करते है, ऐसे मे उनका लगाव रामानन्द के प्रति होना स्वाभाविक है।

भ्रमण :

हालाकि कबीर तीर्थयात्रा या हज आदि को निरर्थक समझते थे परन्तु फिर भी उन्होने विभिन्न स्थानो जैसे– मानिकपुर, जौनपुर, मगहर, स्थानों, दक्षिण भारत में नर्मदा नदी के तट पर स्थित 'शुक्लतीर्थ तथा पूरब मे आसाम आदि स्थानो का भ्रमण किया। बीजक की 48वीं रमैनी से ज्ञात होता है कि वे मानिकपुर गये थे। इसी रमैनी से यह भी ध्वनित होता है कि मानिकपुर में उन्हे ये ज्ञात होने पर कि जौनपुर के 'ऊजो' नाम स्थान पर पीरो का निवास है इसके आधार पर अनुमान लगाया गया है कि वे 'ऊजो' भी गये होगे। वेस्टकाट ने जौनपुर मे 'ऊजी' नामक स्थान की खोज की है।[2] काशी मे काफी समय व्यतीत करते हुए जीवन के अन्तिम समय वह मगहर गये थे। यही उनका निधन हुआ। अबुल फजल की 'आइने अकबरी' में रतनपुर और पुरी मे उनकी

---

1. बीजक, शब्द 77
2. रे० वेस्टकाट, 'कबीर एण्ड दि कबीरपथ', अध्याय 2

समाधियो के उल्लेख के आधार पर अनुमान व्यक्त किया गया है कि वह इन स्थानो पर भी गये होगे।

नाभादास के भक्तमाल के आधार पर यह अनुमान व्यक्त किया गया है कि कबीर नर्मदा तट पर स्थित 'शुक्लतीर्थ' भी गये थे और वहाँ जाकर तत्वा और जीवा को अपना शिष्य बनाया था। असमिया भाषा की 'भक्ति प्रेमावली' नामक पुस्तक मे कबीर के आसाम तक जाने का उल्लेख किया गया है, और उनकी आचार्य शकर देव आदि से भेट का भी वृतान्त दिया है। इस कृति मे कबीर के आसाम जाने के आधार पर और औचित्य का वर्णन नही होने और दूसरे स्रोतो से इनकी पुष्टि न होने के कारण इसकी प्रमाणिकता पर सदेह होता है।

अन्तत कहा जा सकता है कि जीवन की कठिनाइयो से जूझते हुए और आजीविका हेतु सघर्ष करते हुए प्रारम्भ में उनको भ्रमण का समय न मिला होगा, जीवन के अतिम समय की पूर्णावस्था मे वह मानिकपुर, जौनपुर, आसाम, शुक्ल तीर्थ आदि स्थानो पर भ्रमण हेतु गये होगे अब तक वह सिद्ध पुरुष हो चुके होंगे।

निधन काल और स्थान :

कबीर के जन्मकाल की भॉति उनके निधनकाल और निधन स्थान के बारे मे भी विद्वान एकमत नही है। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित मतो का वर्णन करके उनका विश्लेषण किया जा रहा है, ताकि सुनिश्चित निष्कर्ष की प्राप्ति हो सके।

पहला मत कबीर का निधन काल संवत् 1575 मानता है। इस मत के समर्थन में निम्नलिखित साखी प्रस्तुत की जाती है।

संवत पन्द्रह सौप पछत्तरा किया मगहर को गवन।
माघ सुदी एकादशी, रलौ पवन में पवन।।

पर साखी 'कबीर कसौटी' को लेखक बाबू लहना सिह को किसी लाला माधवराम साहिब पायल वाले से मिली थी।[1] इस मत को रेवरेण्ड वेस्टकाट, मैकालिफ और डॉ० भण्डारकर आदि विद्वानो ने भी स्वीकार किया है। इस मत के समर्थक कबीर को सिकन्दर लोदी का समकालीन मानने के आधार पर यह तर्क देते है कि सिकन्दर लोदी की कबीर से भेट हुई थी, क्योकि सिकन्दर लोदी का शासन काल सवत् 1546 से 1574 था।[2]

इस मत को स्वीकार करना सभव नही है क्योकि यह कहना कठिन है कि इस साखी की रचना कब हुई, जो बाबू लहना सिह को प्राप्त हुई थी। दूसरे, इस बात का अभी तक कोई प्रमाण नही है कि सिकन्दर लोदी की कबीर से भेट हुई थी, अगर ऐसा होता तो साहित्य मे इसका उल्लेख मिलता।

दूसरा मत कबीर का निधनकाल संवत् 1552 मानता है, इस मत के समर्थक अपने मत की पुष्टि में निम्नलिखित साखी प्रस्तुत करते है–

पन्द्रह सौ उनचास में मगहर कीन्ही गौन।
अगहन सुदी एकादशी, मिलो पौन में पौन।।

इस साखी को नाभादास कृत 'भक्तमाल' के टीकाकार रूपकला जी ने उद्धृत किया है।[3] इस मत के समर्थको ने उक्त साखी मे 3 वर्ष जोडकर कबीर के निधन की सवत् 1552 मन ली है, किन्तु यह तीन वर्ष क्यो जोडे गये यह नही बताया गया।

---

1 बाबू लहना सिह, 'कबीर कसौटी', (भूमिका), पृष्ठ 3, 4
2 डॉ० केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीरपंथ' पृष्ठ 60
3 नाभादास कृत, 'भक्तमाल', श्री रूपकला कृत भक्त–सुधा–बिन्दु स्वार टीका सहित, लखनऊ, पृष्ठ 497

इस मत को भी स्वीकार नहीं किया जा सकता क्योकि इसका आधार उक्त साखी टीकाकार प्रियादास की टीका एक साम्प्रदायिक रचना है जिसमे वैज्ञानिक विश्लेषण के स्थान पर चमत्कार प्रदर्शन की प्रवृत्ति कार्य करती जान पड़ती है।[1] दूसरे, उक्त साखी में उल्लिखित संवत् 1549 में 3 वर्ष जोड़कर संवत् 1552 कहना भी तार्किक और वैज्ञानिक नही है क्योंकि समय कम या ज्यादा भी हो सकता है।

तीसरा मत, कबीर का निधन सवत् 1505 स्थापित करता है। इसके समर्थन में निम्नलिखित साखी प्रस्तुत की जाती है। ऐसा कहा जाता है कि यह साखी डॉ0 एच0एच0 विल्सन को मिली थी।[2] इस मत के समर्थको के अनुसार कबीर का वह रौजा, जिसे बिजली खॉ ने संवत् 1507 मे आमी नदी के किनारे बनवाया था और 2 वर्ष बाद उसी स्थान पर फिर एक रौजे का निर्माण करवा दिया गया।

इस मत को स्वीकार किया जा सकता है। बिजली खॉ द्वारा बनवाया गया स्मारक इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है, कि कबीर का निधन सवत् 1505 मे हुआ होगा क्योकि विजली खॉ ने उनके निधन के अनन्तर ही सवत् 1507 मे उक्त रौजे का निर्माण कराया होगा। दूसरे, रामानंद की मृत्यु सवत् 1468 में हुई थी[3] और यदि कबीर की निधन तिथि सवत् 1575 मान ली जाए तो उनका रामानन्द से सम्बन्ध नहीं स्थापित हो पाता क्योकि तब रामानन्द की मृत्यु के समय कबीर की आयु 13 वर्ष माननी होगी। अत. कबीर के निधन काल को सवत् 1505 स्वीकार किया जा सकता है। डॉ0 रामचन्द्र तिवारी का निष्कर्ष है कि "कबीर की जन्म और मृत्यु तिथियो का निश्चित निर्धारण संभव नहीं है, हम

---

1 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीरपथ', पृष्ठ 62

2 पन्द्रह सौ औ पॉच मे मगहर कीन्हों गौन।
अगहन सुदी एकादशी मिल्यौ पौन में पौन।।

3 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीरपथ', पृष्ठ 61

उनके समय के सम्बन्ध मे अवश्य धारणा बना सकते हैं।[1] सतो की जन्म तिथि और निधन तिथि को लेकर ऐतिहासिक विवाद नही होना चाहिए क्योकि उनकी दृष्टि मे जनम और मरण एक काल खण्ड है जिनको दायरे मे आबद्ध नही किया जा सकता। कबीर इन दायरो से मुक्त होते हुए, अपने विचारो के रूप मे आज भी हमारे सामने उपस्थित है।

निधन तिथि की भाति कबीर के निधन स्थान के बारे मे भी अभी तक कोई सर्वमान्य मत स्थिर नहीं हो सका है। उनकी मगहर, रतनपुर, और पुरी मे समाधियॉ होने के कारण सदेह को बल मिला हैं। रतनपुर और पुरी की समाधियों का उल्लेख 'आइने अकबरी' में हुआ है।[2] समाधि के आधार पर निधन स्थान का निर्धारण नही किया जा सकता है। इससे तो उक्त तीनो स्थान सिद्ध हो जायेगे अत वास्तविकता का निर्धारण के लिए अन्य प्रमाणो का भी सहारा लेना जरुरी है। मगहर के सम्बन्ध मे अन्य प्रमाण भी सामग्री जुटाते है, जैसे— निर्भय ज्ञान'' और 'धर्मदास की शब्दावली'[3] कबीर का निधन स्थान 'मगहर' बताते है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि उनका निधन मगहर मे ही हुआ होगा। 'मगहर' में समाधि तो इसका प्रमाण है ही साथ ही कबीरपथी रचनाओं 'निर्णय ज्ञान' और 'धर्मदास की शब्दावली' भी इसकी पुष्टि करते है।

रचनाएँ

कबीर की रचनाओं की संख्या के बारे में निश्चित रुप से कुछ कहना संभव नही है। रे० वेस्टकाट, डॉ० एफ०ई०की, डॉ० रामकुमार वर्मा और डॉ० पीताम्बर बडथ्वाल आदि विद्वानों ने इस सम्बन्ध मे काफी कार्य किया हैं। कबीर के ग्रथो की सख्या को वेस्टकाट ने 82, विल्सन ने 90, डॉ० रामकुमार वर्मा ने

---

1 *डॉ० रामचन्द्र तिवारी, 'कबीर मीमांसा', पृष्ठ 27*
2 अबुल फजल, 'आइने अकबरी', (अनुवादित), भाग 2, पृष्ठ 129, 171
3 'धनी धर्मदास की शब्दावली', पृष्ठ 10, पद 4

57 बताया है परन्तु यह सब संख्याये प्रामाणिक नही मानी जा सकती है क्योंकि विद्वानो ने पुस्तको के अंगो, कबीरपंथी रचनाओ आदि को भी अपनी सख्या मे स्थान दिया है। सच्चाई यह है कि इनकी रचनायें फुटकर पदों, साखियो, रमैनियों या अन्य प्रकार की कविताओं के संग्रह मात्र है। ऐसा प्रसिद्ध है कि कबीर के शिष्य धर्मदास ने सर्वप्रथम सवत 1521 में इनकी रचनाओ का एक सग्रह 'बीजक' के रुप मे तैयार किया था,[1] परन्तु इसके काल की निश्चितता मे सदेह है, दूसरे इसमें संग्रहीत कुछ रचनाओ को कबीर के परवर्ती कवियो द्वारा निर्मित किया जाना भी स्पष्ट है 'गुरु ग्रन्थ साहिब' मे कबीर की रचनाओ के रुप मे लगभग 225 पद तथा 250 श्लोक और साखियॉ सग्रहीत है। 'कबीर ग्रन्थावली' कबीर की रचनाओं का दूसरा वह सग्रह है जो किसी प्राचीन हस्तलिखित प्रति के आधार पर 'काशी नगरी प्राचारिणी सभा' द्वारा प्रकाशित किया गया है, इसकी लगभग 50 साखियॉ और 5 पद 'गुरु ग्रन्थ साहिब' के समान है और शेष लगभग 750 साखियॉ तथा चार सौ पद ऐसे है जो उसमें आयी हुई ऐसी रचनाओं से बहुत भिन्न है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि कबीर की रचनाओं के बारे मे स्पष्ट जानकारी नही है। बीजक' ही प्रमाणिक ग्रन्थ है, जिसको उनके शिष्यो द्वारा सग्रह करके सुरक्षित रखा गया है। उनकी कृतियों के अश 'गुरु ग्रन्थ साहब', कबीर ग्रन्थावली आदि रचनाओ में मिलते हैं।

कबीर के शिष्य :

कबीर के अनन्त ज्ञान ओर असाधारण व्यक्तित्व से प्रभावित होने कर अनेक व्यक्तियों ने उनको अपना गुरु स्वीकार किया है। दादूपथी राघवदास ने 'भक्तमाल' मे कमाल, कमाली, पद्मनाभ, रामकृपाल, नीर, धीर, ज्ञानी धर्मदास और

---

1 डॉ० परशुराम चतुर्वेदी, 'उत्तरी भारत की संत परम्परा', पृष्ठ 175

हरदास को कबीर का शिष्य स्वीकार किया है। नाभादास ने भक्तमाल मे तत्वा और जीवा को भी कबीर का शिष्य माना है।[1] इसी प्रकार कबीरपंथ की काशी, छत्तीसगढ़ी विद्दूपुर और धनौती की शाखाओ के प्रवर्तक क्रमशः सुरत गोपाल, धर्मदास, जागूदारा और भगवान गोसाई माने जाते हैं। यह भी कबीर के शिष्यो के रुप मे जाने जाते है। कबीर के शिष्य को ग्रहण करने के सम्बन्ध मे प्रामाणिक सामग्री के अभाव के कारण कुछ स्पष्ट रूप से कहना संभव नही है, फिर भी इतना अवश्य कहा जा सकता है कि उक्त कबीरपथी शाखाओ के प्रवर्तक–कबीर के व्यक्तित्व से प्रभावित जरूर थे तभी उन्होंने कबीरपंथ के माध्यम से उनकी शिक्षाओ को प्रचारित–प्रसारित करने का कार्य पूरे मनोयोग रुप से किया। डॉ0 परशुराम चतुर्वेदी ने कबीर के शिष्यो में कमाल, कमाली, पद्मनाभ, तत्वा–जीवा, संत ज्ञानी जी, जागूदास, भागोदास, सुरत–गोपाल, धर्मदास का का नाम लिया है।[2]

कमाल :

कमाल कबीर के पुत्र तथा दीक्षित शिष्य समझे जाते है। कबीरपथी ग्रन्थ बोध सागर' से पता चलता है कि कबीर का आदेश पाकर यह संत मत का प्रचार करने अहमदाबाद की ओर गये थे। इन्होने दक्षिण में कबीर मत का प्रचार किया था। इनकी कुछ रचनाएँ भी है। कमाल की निश्चित तिथि का पता नही चलता। कमाल की एक समाधि मगहर मे कबीर के रौजे के पास है।[3]

कमाली :

यह कबीर की पुत्री के रुप में ज्ञात हैं। कहा जाता है कि कमाली कबीर की औरस पुत्री थी परन्तु कबीरपंथी संत महात्मा इस धारणा को स्वीकार नहीं

---

1. 'नाभादास कृत भक्तमाल', पृष्ठ 533
2. डॉ0 परशुराम चतुर्वेदी, 'उत्तरी भारत की सत परम्परा', पृष्ठ 219
3. डॉ0 एफ0ई0 की, 'कबीर एण्ड हिज फालोवर्स', पृष्ठ 96

करते है। 'की' ने कमाली को पडोसी की पुत्री बताया है।[1] कबीर ने इसको जीवन दान दिया था। वेस्टकाट के अनुसार कबीर ने इसका विवाह सर्वाजीत से कराया था।

पद्यनाभ :

पद्यनाभ कबीर के प्रमख शिष्य माने गये है। नाभादास ने भक्तमाल मे लिखा है कि पद्यनाभ जी ने कबीर की कृपा द्वारा परमतत्व का परिचय प्राप्त दिया था। इनकी जीवन की घटनाओ के बारे मे कुछ भी ज्ञात नहीं है इनके बारे मे कहा गया है कि ये अपने गुरु के साथ काशी में रहते थें इन्होने स्वय नीलकण्ठ को दीक्षित किया था। राम कबीर पथ का इनके शिष्यो प्रशिष्यो द्वारा प्रचार किया जाना उल्लेखनीय है।

"तत्वा" और "जीवा" :

यह दोनो भाई शूर वीर, उदार और दयालु थे। इनको नर्मदा तट पर कबीर ने दीक्षित किया था। ऐसा कहा जाता है कि इन्होंने वर्तमान फतुहा मठ (जिला पटना, बिहार) का सर्वप्रथम प्रवर्तन किया था। जिसकी पुष्टि वहॉ के 22 महन्तों की सूची मे इनके नाम से की जा सकती हैं

ज्ञानी जी :

भक्तमाल मे कहा गया है कि ये कबीर के प्रमुख शिष्यो मे थे। अपनी सब्दियों मे इन्होने कहा है कि–मुझ ज्ञानी का गुरु कबीर इस प्रकार कहता है–"ग्यानी का गुरु कहै कबीरा", इनकी समाधि नर्मदा तट पर राजापुर ग्राम में बतायी जाती है। अत इनका कार्य क्षेत्र भी दक्षिण मे ही रहा होगा। इनकी रचना 'शब्द पारखी' का भी पता चला है।

---

1 डॉ० एफ०ई० की, 'कबीर एण्ड हिज फालोवर्स', पृष्ठ 16

जागूदास :

इनका जन्म उडीसा मे उत्कल ब्राह्मण परिवार मे हुआ था। बचपन मे अधिक रोने के कारण इनके माता-पिता ने कबीर को समर्पित कर दिया था।[1] कबीर की उत्कल यात्रा के समय की निश्चित जानकारी न होने के कारण यह नही निश्चित किया जा सका हैं कि इनकी कबीर से मुलाकात कब और कहॉ हुई थी। इनके अतिम विददूपुर मे बीते और यही इनका देहान्त हुआ।

भागोदास :

यह जागूदास के सहोदर भाई थे। भागोदास भी कबीर के शिष्य थे। भागोदास को अहीर जाति का और पिशौराबाद (बुन्देलखण्ड) का निवासी बताया गया है। पिशौराबाद से यह बिहार चले गये थे। इन्होने कबीरपथ की भगताही शाखा की स्थापना की थी, जो धनौती मे जाकर प्रचारित हुई। इस शाखा के महन्तो मे इनका उल्लेख 'भक्ति पुष्पाजलि' के अन्तर्गत किया गया है।

सुरतगोपाल :

इनका पूर्व नाम सर्वाजीत था। कबीर से शास्त्रार्थ में पराजित होने पर इन्होने कबीर की शिष्यता ग्रहण की और सुरत गोपाल नाम ग्रहण किया। कबीरपंथ की कबीर चौरा की काशी की शाखा की स्थापना का श्रेय इनको ही दिया जाता है।

धर्मदास :

धर्मदास की गणना कबीर के प्रमुख शिष्यो मे की जाती है। इनको कबीर पथ की छत्तीसगढी शाखा का प्रवर्तक माना गया है। 'अमरसुखनिधान' में कबीर का इनसे 'जिंदरूप' में को मिलना कहा गया है। **"जिद रुप जब धरे शरीरा।**

---

1 सद्गुरु कबीर चरित्र पृष्ठ 414-5

धरमदास मिलि गये कबीरा।" इससे सिद्ध होता है कि यह कबीर के बाद 17वी शताब्दी के किसी चरण में हुए होगे और कबीर से प्रभावित होकर कबीर दर्शन को प्रचारित–प्रसारित किया होगा।

निसन्देह कबीर के प्रभाव से प्रभावित होकर असंख्य लोगो ने उनकी शिष्यता ग्रहण की होगी परन्तु उपरोक्त व्यक्ति इसलिये उल्लेखनीय है क्योकि उन्होंने कबीर की शिक्षाओं को विभिन्न क्षेत्रों में प्रचारित–प्रसारित किया जो क्षेत्र कालान्तर में कबीरपंथ की विभिन्न शाखाओ के रुप मे उभरे।

सिद्धान्त

परमतत्व :

कबीर ने परमतत्व को अनेक प्रकार से समझाने का प्रयास किया है। उनके अनुसार–"परमतत्व का ज्ञान पुस्तकीय ज्ञान नही है बल्कि यह अविगत है, अनुपम है, और इसका वर्णन करना वैसे ही असंभव है जैसे किसी गूगे व्यक्ति के लिये स्वाद की अभिव्यक्ति करना असम्भव है।"[1] परमतत्व या ब्रहम भावना की तीन कोटियॉ है– आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक। परमतत्व निर्गुण और अनिवर्चनीय हैं। वह अनिवर्चनीय है अर्थात उसे निजी अनुभव द्वारा आत्मसात कर लेने पर जो दशा हो पाती है, उसका वर्णन करने में साधक स्वयं को असमर्थ पाते हैं। उसको अलख निरंजन[2] कहना उसकी निर्गुणता का व्याख्यान करना है। दूसरी ओर कबीर ने उसे द्वैताद्वैत विलक्षण, अलख, अगम्य आदि उसके सगुण रूपो का वर्णन भी विभिन्न रुपों में किया है। इस प्रकार उन्होने परमतत्व सगुण और निर्गुण दोनों रूपो का वर्णन किया है। जैसे–

1 डॉ० श्यामसुन्दर दास, 'कबीर ग्रन्थावली', पृष्ठ 90, पद 6
2 डॉ० श्यामसुन्दर दास, 'कबीर ग्रन्थावली', पृष्ठ 230, रमैणी 3

"कबीर देख्या एक अग महिमा कही न जाय।
तेजपुज पारख घणी नैनूँ रहा समाई।[1]

आत्मतत्व :

कबीर ने आत्मतत्व पर पर्याप्त चिंतन किया और उसके अनेक रुपो का वर्णन किया है। उनका मानना था कि अहंभाव के परित्याग से ही आत्म ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। आत्मज्ञान की स्थिति मे साधक को यह ज्ञान हो पाता है कि आत्मा न मनुष्य है, न देव है, और न गृही या बैरागी बल्कि जाति भेद से परे है, वर्णनातीत है और आत्मप्रकाशमय है कबीर के आत्मतत्व सम्बन्धी विचार परमतत्व पर ही आधारित है। उन्होने आत्मा को बूँद और परमात्मा को समुद्र कहा है। उनका जीवात्मा की एकता का सिद्धान्त विम्ब और प्रतिबिम्ब सिद्धान्त पर आधारित है। वह कही मानव कहीं वस्तु और कहीं अन्य जीवों के रूप में विद्यमान रहती है।

माया तत्व :

कबीर ने माया तत्व को साधक की साधना मे बाधक तत्वमान है। उन्होने शंकराचार्य की भॉति माया को बन्धन रुपा और महाठगिनी कहा है। जिस प्रकार सॉख्य दर्शन मे माया को त्रिगुणात्मक और प्रसवधर्मिणी कहा गया है उसी प्रकार कबीर ने भी माया को त्रिगुणात्मक अर्थात, सत्व रज और तामस गुणों से युक्त और प्रसवधर्मिणी माना है, क्योकि सारी सृष्टि की उत्पत्ति का कारण माया ही है। कबीर ने माया के दो भेद किये है --(1) विद्या माया और (2) अविधा माया। उन्होने दोनों को स्पष्ट करते हुए कहा है कि--

माया दुइ भॉति देखी ठोंक बजाय।
एक गहावै राम पै एक नरक ले जाय।

---

1 वही, पृष्ठ 16, साखी 38

इसी प्रकार कबीर ने माया और मन में घनिष्ठ सम्बन्ध बताया है। मान, आशा, तृष्णा, काम क्रोध आदि मन के विकार माया के साथी है। इसीलिए मन को अनासक्ति आदि द्वारा केन्द्रित करना आवश्यक है। माया से रहस्य के परिचित होकर उस पर विजय पाना ही जीवन का चरम पुरुषार्थ है।

जगत्तत्व :

कबीर को जगत्तत्व सम्बन्धी धारणा उनकी परमतत्व सम्बन्धी धारणा पर आधारित मानी जा सकती है क्योंकि उन्होंने परमतत्व को कण कण मे व्याप्त कहा है–**"खालिक खलक, खलक में खलिक सब घट रह्यौ समाई।"** जगतत्व भी कण की परिधि मे आता है। इसी प्रकार कबीर ने प्रतिविम्बवाद को माना है जिसके अनुसार जगत ब्रह्म का प्रतिबिम्ब मात्र है। उन्होने कहा है–**"ज्यूँ जल मे प्रतिव्यंब त्यूँ सकल रामहिं जाणी जै।"**[1]

ज्ञान :

अन्य सतो की भाति कबीर ने भी अज्ञान को ही समस्त कर्मो का मूल माना है मन पर विजय ज्ञान रुपी साधन को अपनाकर की जा सकती है। उनके अनुसार ज्ञान की प्राप्ति पुस्तकीय ज्ञान से नही, बल्कि चिन्तन और विवेक से सम्भव है। विवेक को तो उन्होंने कही–कहीं गुरु का प्रतीक माना है।[2]

विचार को उन्होने पहली प्राथमिकता दी। विचार चिंतन का एक मूलतत्व है। कबीर को भी विचार के फलस्वरुप ही आत्मानुभूति हुई थी।

करत विचार मनहि मन उपजी ना कहीं गयान आया।"[3]

---

1 डॉ0 श्यामसुन्दर दास, 'कबीर ग्रन्थावली', पृष्ठ 56
2 'गुरुग्रन्थ साहिब, रागसूही', पद 5
3 डॉ0 श्यामसुन्दर दास, 'कबीर ग्रन्थावली', पृष्ठ 96 पद 23

योग :

यौगिक साधना के सम्बन्ध मे कबीर के विचार उल्लेखनीय है। यौगिक साधनो की तीनो कोटियों कायिक, मानसिक और सहज साधना मे कायिक साधना के अन्तर्गत हठयोग का उनके दर्शन में महत्वपूर्ण स्थान है। कबीर ने यम और नियम का उल्लेख किया है, और आसन व प्राणायाम आदि की ओर भी सकेत किया है। कबीर के अनुसार हठयोग मन को एकाग्र करने का मात्र साधन है।[1] मानसिक साधना के तत्व ध्यानयोग और लययोग है। कबीर ध्यान योग द्वारा मन पर विजय प्राप्त करना आवश्यक मानते हैं। उनकी सुरति शब्द योग धारणा भी योग ही मानी गयी है। उनकी सहज साधना राम का प्रेमरस चखने तक सीमित थी। जिसमे सहजयोग समाहित है और जिसका सार है– मनसयम, गुरु वचन विश्वास, राम के प्रति प्रेमभाव और अपनी अर्जित सम्पत्ति से जीविका चलाना।

भक्ति :

कबीर के दर्शन मे भक्ति का महत्वपूर्ण स्थान है। विषया शक्ति के निवृत्ति पूर्वक स्वरुप के स्मरण की स्थिति ही भक्ति है। उनका कहना है कि–"यदि तू मेरी भक्ति एव मेरी स्थिति चाहता है तो सब की आशा छोड़ दे और मेरे समान निष्काम स्वरूपस्य हो जा, बस सब सुख तेरे पास है।[2] कबीर ने भक्ति की मुक्त कण्ठ से प्रशसा की है उन्होंने भक्ति के अभाव मे जीवन व्यर्थ माना है। **"भगति बिनु विरथे जनम गइओ।"** उनका मानना है कि भक्ति निष्काम होनी चाहिए सकाम भक्ति व्यर्थ है। भक्ति के साधनो मे गुरु, सत्संग,

---

1 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीरपथ', पृष्ठ 119

2 'बीजक', साखी 298

इन्द्रिय–निग्रह और निरहकार के अतिरिक्त ज्ञान और विश्वास भी महत्वपूर्ण है। कबीर ने सत्सग को ही स्वर्ग माना है।[1]

प्रेम :

कबीर ने प्रेम तत्व की भूरि भूरि प्रशंसा की है। उनके अनुसार संसार में आकर सचमुच जिसने प्रेम नही किया वह सूने घर में आये हुए उस अतिथि के समान है जो आकर ज्यौ का त्यौ लौट जाता है।[2] प्रेम के सयोग और वियोग दोनो पक्षो मे कबीर ने विरह को भी महत्व दिया है। उन्होने विरह को बाण कहा है। प्रियतम के कमान से छूटा हुआ बाण भक्त के अन्तर्मन को भी बेध देता है।[3] उनकी धारणा है कि भगवान भी भक्त के साथ प्रेम के लिये व्यग्र रहते है। उनके अनुसार प्रेम मूलतत्व है इसीलिए तो कबीर प्रेम की वेदी पर सब कुछ अर्पित करने को तैयार है।

मोक्ष :

मोक्ष के सम्बन्ध मे कबीर की धारणा का स्पष्ट उल्लेख नही मिलता है। डॉ० केदारनाथ द्विवेदी की मान्यता है कि कबीर जीवनमुक्ति को ही परमकाम्य समझते थे।[4] जीवन्मुक्ति की अवस्था में जीवन के समस्त कार्य होते रहते है, किन्तु व्यक्ति साधु चरित्र हो जाता है। कबीर माया से मुक्त हो जाने को ही सबसे बडा मोक्ष मानते हैं। यह अवस्था गीता के निष्काम कर्मयोग के समान है। इसी प्रकार कबीर विदेह मुक्ति की अवस्था का भी चित्रण करते है। वे कहते है कि यह शरीर धारण करते हुए भी सासारिक सुखो के प्रति अनासक्त हो जाओ। यही आध्यात्मिक जीवन मे प्रवेश करने का साधन है। इस प्रकार कबीर का मोक्ष

---

1 डॉ० प० परशुराम चतुर्वेदी, 'उत्तरी भारत की सत परम्परा', पृष्ठ 133

2 'कबीर ग्रन्थावली', पृष्ठ 6, साखी 18

3 कर कमाण सर साँधि–करि खैंचि जु मारया माँहि।
भीतर भिदया सुमार ह्वै, जीवै कि जीवै नाँहि कबीर ग्रन्थावली पृष्ठ 8, साखी 15

4 डॉ० केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीरपथ', पृष्ठ 144

सम्बन्धी सिद्धान्त अद्वैत वेदान्त, बौद्धो, साख्य तथा जैनों से अलग है। उनके द्वारा जीवन्मुक्ति और विदेहमुक्ति की बात कहना अदभुत है। स्वर्ग–नरक की धारणा में उनका विश्वास नही था। कर्मशील रहते हुए अनासक्त भाव से भक्ति का सहारा लेकर कबीर सांसारकि भवसागर को पार करना चाहते है, जिसके लिये बाह्योपचारो, तीर्थ, हज आदि की जरूरत नही है।

विचारधारा :

कबीर की विचारधारा का अध्ययन उनकी समाज के नव निर्माण की भावना के अन्तर्गत अध्ययन किया जा सकता है। कबीर समाज में गरीब–अमीर, ऊँच–नीच, स्त्री–पुरुष तथा हिन्दू–मुस्लिम आदि के विभेदो से दूर समानता और भाईचारा पर आधारित समाज के पक्षधर थे। ऐसे समाज मे अन्धविश्वास और कर्मकाण्ड को कोई भूमिका न हो और जो मानवतावादी मूल्यो पर आधारित हो। इस सम्बन्ध मे कबीर के आर्थिक जीवन, सामाजिक जीवन और धार्मिक जीवन के सन्दर्भ मे उनके विचारो को वर्णित करने का प्रयास किया जा रहा है।

कबीर का आर्थिक जीवन सम्बन्धी दृष्टिकोण एक ऐसी समाज निर्माण की भावना पर आधारित था, जिसमें रहकर सभी मनुष्य शांति मय और कलह रहित जीवन व्यतीत कर सके। उनका यह चिंतन आधुनिक राजनीतिक विचारधारा समाजवाद से काफी साम्य रखता है।

कबीर की आर्थिक जीवन सम्बन्धी विचारधारा समाजवादी चितन पर आधारित मानी जा सकती है। वे आर्थिक समानता के पक्षधर थे, इसके लिये उन्होंने पूँजीपतियो की आंतरिक वृत्ति को ही उदार बनाकर वितरण की समस्या को हल करने की चेष्टा की। उन्होने कनक और कामिनी की निरर्थकता सिद्ध करते हुए पूँजीपतियो मे जकडी हुई संचय की मनोवृत्ति पर कुठाराघात किया। उन्होने निर्धन और पूँजीपति दोनो को भाई–भाई भी कहा है। उनके अनुसार

सम्बन्धी सिद्धान्त अद्वैत वेदान्त, बौद्धों, सांख्य तथा जैनों से अलग है। उनके द्वारा जीवन्मुक्ति और विदेहमुक्ति की बात कहना अदभुत है। स्वर्ग–नरक की धारणा में उनका विश्वास नही था। कर्मशील रहते हुए अनासक्त भाव से भक्ति का सहारा लेकर कबीर सांसारकि भवसागर को पार करना चाहते है, जिसके लिये बाह्योपचारों, तीर्थ, हज आदि की जरूरत नहीं है।

विचारधारा :

कबीर की विचारधारा का अध्ययन उनकी समाज के नव निर्माण की भावना के अन्तर्गत अध्ययन किया जा सकता है। कबीर समाज मे गरीब–अमीर, ऊँच–नीच, स्त्री–पुरुष तथा हिन्दू–मुस्लिम आदि के विभेदो से दूर समानता और भाईचारा पर आधारित समाज के पक्षधर थे। ऐसे समाज में अन्धविश्वास और कर्मकाण्ड को कोई भूमिका न हो और जो मानवतावादी मूल्यो पर आधारित हो। इस सम्बन्ध मे कबीर के आर्थिक जीवन, सामाजिक जीवन और धार्मिक जीवन के सन्दर्भ मे उनके विचारों को वर्णित करने का प्रयास किया जा रहा है।

कबीर का आर्थिक जीवन सम्बन्धी दृष्टिकोण एक ऐसी समाज निर्माण की भावना पर आधारित था, जिसमे रहकर सभी मनुष्य शांति मय और कलह रहित जीवन व्यतीत कर सके। उनका यह चिंतन आधुनिक राजनीतिक विचारधारा समाजवाद से काफी साम्य रखता है।

कबीर की आर्थिक जीवन सम्बन्धी विचारधारा समाजवादी चितन पर आधारित मानी जा सकती है। वे आर्थिक समानता के पक्षधर थे, इसके लिये उन्होंने पूँजीपतियो की आतरिक वृत्ति को ही उदार बनाकर वितरण की समस्या को हल करने की चेष्टा की। उन्होने कनक और कामिनी की निरर्थकता सिद्ध करते हुए पूँजीपतियों में जकड़ी हुई सचय की मनोवृत्ति पर कुठाराघात किया। उन्होने निर्धन और पूँजीपति दोनों को भाई–भाई भी कहा है। उनके अनुसार

वास्तव मे निर्धन वह है जिसे हृदय मे राम के प्रति प्रेम का भाव न हो। इस अर्थ मे पूँजीपति भी निर्धन है क्योंकि उनमे वे धन के भक्त है, भक्ति के नही इस प्रकार कबीर ने समाजवाद की विचारधारा को आज से सैकडो वर्ष पूर्व ही दिया था।[1] समाज में शान्ति बनाये रखने के लिये कबीर ने ऐसी सामाजिक व्यवस्था की आवश्यकता का अनुभव किया था, जिसमें किसी व्यक्ति को मानसिक क्लेश से न जूझना पडे।

इसी प्रकारं कबीर का सामाजिक जीवन सम्बन्धी दृष्टिकोण भी समतावादी मूल्यो पर आधारित एक वर्गहीन समाज की स्थापना का था। उनके समय सामाजिक विषमता चरमोत्कर्ष पर थी और धार्मिक कट्टरता का बोलबाला था, इसीलिये उन्होने सामाजिक विषमता का मूल कारण विभिन्न धर्मग्रन्थो के प्रति अन्धविश्वास को माना और उसका खण्डन करने के लिये पुस्तकीय ज्ञान को निरर्थक सिद्ध किया और अनुभूति मूल्क सत्य का महिमामण्डन किया। उन्होने वर्णव्यवस्था, अस्पृश्यता आदि की भावना को वैज्ञानिक और विश्वसनीय नही माना। उन्होने ब्राह्मणो और क्षत्रियों की मनोवृत्ति की आलोचना करते हुए कहा कि ब्राह्मण वेदादि के अध्ययन मात्र में भूलकर सतकर्मो के बाह्य झमेलों में पडे रहते है। इसी प्रकार कबीर काजियों को फटकारते हुए पूछते है कि हे काजी बताओं कि ये हिन्दू और मुसलमान भिन्न वर्ग कहॉ से से आये। इस प्रकार कबीर का सामाजिक जीवन दृष्टिकोण सर्वधर्म समभाव पर आधारित था।

कबीर का धार्मिक दृष्टिकोण उनकी सामाजिक और आर्थिक विचारधारा ही आधारित माना जा सकता है। उन्होने हिन्दू, मुस्लिम आदि सभी धर्मो की समानता, सत्यता पर जोर दिया तथा सभी धर्मो के बाह्याडम्बरों की खिल्ली उडायी। उनके समय में हिन्दू और मुसलमान दोनो मे धार्मिक आडम्बर व्यापक

---

1 सम्पादक हरिश्चन्द्र वर्मा, 'मध्यकालीन भारत', भाग 1, पृष्ठ 440, सस्करण 2001

रूप ग्रहण चुका था जिसके कारण पारस्परिक कटुता पनप रही थी अत इनकी हँसी उडाकर उन्होने मानव के प्रेम का सदेश दिया। उन्होंने प्रचारित किया कि बाह्याडम्बरो के भगवान को रिझाया नही जा सकता, भगवान को मानव प्रेम, दया, भक्ति से ही प्राप्त किया जा सकता है और तीर्थ, व्रत, पूजा–पाठ, रोजा, नमाज आदि निरर्थक हैं। वे धर्म के मूल तत्व की ओर लोगो पर ध्यान आकृष्ट करना चाहते थे। उनका विश्वास है कि धर्म के वास्तविक रहस्य से परिचित हो जाने पर सारे भेदभाव समाप्त हो जाते है, किसी के प्रति द्वेष का भाव नही रह जाता और ऐसी स्थिति मे तीर्थ, व्रत, रोजा, नमाज आदि की आवश्यकता नही रह जाती । उनके अनुसार सबसे बडा शत्रु मन है। जिसको वश में कर लेने पर साधक की साधना सफल हो जाती है। इस प्रकार कबीर का धर्म स्वानुभूति पर आधारित मानवतावादी मूल्यों का पोषक है। जिसमें सभी प्रकार के अधविश्वासों, पाखण्डो और रूढ़ियों के लिये कोई जगह नही है। उनका जीवन स्वय सात्विक था इसलिये उनके सहज धर्म मे नैतिक आचरणो की प्रधानता है। जिसका मन शुद्ध है, हृदय निष्कपट है, विचार पवित्र है और आचरण सात्विक है वही सच्चे अर्थो में धार्मिक है। वे कर्म के सच्चे उपासक थे वे अपने सुख के लिये किसी से कोई वस्तु मांगना उचित नही समझते थे। कबीर मागते भी है तो केवल आराध्यदेव से वह भी उतना ही, जितने से इनके दोनो समय के भोजन की व्यवस्था हो जाए और सारे सत्कार्य भी पूरे हो जाए।

साईं इतना दीजिए जामै कुटुम समाय
मैं भी भूखा न रहूँ साधु न भूखा जाय।

* * * * *

तृतीय अध्याय

कबीरपंथ का उद्‌भव और विकास

कबीरपंथ का उद्भव

'पथ' शब्द पथ का ही *समानार्थी* है, *जिसका अर्थ है मार्ग या रास्ता।* 'पथ' शब्द यद्यपि एक सीमित दृष्टिकोण की ओर इगित करता है, परन्तु यह शब्द धार्मिक साहित्य में व्यापक रूप से प्रचलित है। पंथ और सम्प्रदाय दोनो का एक साथ प्रयोग संत परपराओं में हुआ है।[1] डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी की मान्यता है कि *'पंथ' शब्द की व्याख्या करते समय* हमारा ध्यान धर्म और सम्प्रदाय शब्दो की ओर आकृष्ट होता है, क्योकि 'पंथ', 'धर्म' और सम्प्रदाय' तीनो ही शब्द भिन्न–भिन्न भावो के बोधक है इनके मूल मे एक केन्द्रीय विचारधारा काम करती हुई प्रतीत होती है, पंथ और सम्प्रदाय दोनो का मूल 'धर्म' ही है।[2] *स्पष्टत. कहा जा सकता है कि 'पथ' का अर्थ है आध्यात्मिक* मान्यताओ के आधार पर मार्ग, जैसाकि कबीर के बाद कबीर के शिष्यो ने विभिन्न नामो और मान्यताओ के आधार पर 'पंथ' की स्थापना की।

क्या कबीर ने कबीरपथ चलाया था ? इस प्रश्न के सन्दर्भ में विद्वान् एक मत नहीं है। अभिलाषदास का मानना है कि फक्कड महन्त सत (कबीर) पंथ चलाने के चक्कर में क्यों पड़ेगा क्योंकि वे सत्य के अनुसधानकर्ता, सत्य के आचरणकर्ता एव सत्य के उपदेष्टा थे और वे जीवन पर्यन्त ऐसा ही करते रहे। वे पंथ बनाने और उसे चलाने के चक्कर मे कभी नहीं पडे। जो व्यक्ति किसी भी प्रकार के पंथ अथवा सम्प्रदाय को समाप्त कर शुद्ध मानवता का प्रकाश चाहता हो, *वह स्वय एक नया पंथ क्यो खड़ा करना* चाहेगा।[3] *कबीर किसी* सम्प्रदाय मे दीक्षित होते या किसी परम्परा के पोषक होते तो वे तथा उनके अनुगामी उसी सम्प्रदाय के नाम से जाने जाते, परन्तु वे स्वतन्त्र विचारक थे।

---

1 डॉ0 विष्णुदत्त राकेश, 'उत्तर भारत के निर्गुण पंथ साहित्य का इतिहास', पृष्ठ 70
2 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीर पथ', पृष्ठ 159
3 अभिलाषदास, 'कबीर दर्शन', पृष्ठ 576

उनके पहले उनके लिए कोई साम्प्रदायिक परम्परा न थी। वे स्वय स्वतन्त्र थे। अतएव उनके विचारों के अनुयायियो के लिए एक स्वतन्त्र सम्प्रदाय एवं पंथ की रचना की आवश्यकता हुई। वही कबीरपथ के नाम से फलित हुआ।

कवीरपथ की कतिपय रचनाओ में इस बात का उल्लेख हुआ है कि कबीर ने प्रधान शिष्य धर्मदास को पंथ–स्थापना का आदेश देकर उनके 42 वंश को गद्दी का उत्तराधिकारी होने का आशीर्वाद दिया था। सम्भवत. इन्हीं रचनाओं के आधार पर प0 रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है उन्होंने भारतीय ब्रह्मवाद के साथ सूक्तियों के भावात्मक रहस्यवाद, हठयोगियो के साधनात्मक रहस्यवाद और वैष्णवो के अहिसावाद तथा प्रपत्तिवाद का मेल करके अपना पथ खडा किया।[1]

पं0 रामचन्द्र शुक्ल मत को स्वीकार करना कठिन है, क्योकि जो युगपुरुष पथ निर्माण की दूषित मनोवृत्ति पर कट्टरता से वाक्य प्रहार करता हो, वह अपने नाम पर स्वत ही एक अलग पंथ की स्थापना कैसे कर सकता है अथवा वह अपने शिष्यों को भी अपने मत के विरूद्ध कार्य करने की कैसे अनुमति दे सकता है?[2]

इस सम्बन्ध में केवल अनुमान ही व्यक्त किया गया है। किसी पथ की स्थापना के लिए कुछ नियम–उपनियम के अतिरिक्त बौद्धिक आधार पर ग्रन्थों की रचना की जाती है। महात्मा बुद्ध ने सघ की स्थापना की थी और शिष्यो के लिए अनेक नियम भी बनाये थे, जो 'विनयपिटक' के नाम से प्रसिद्ध है। कबीर ने इस प्रकार का कोई प्रयास नही किया था। संभवतः कबीर ने कोई पंथ नहीं स्थापित किया और न ही वे इस प्रकार की किसी भावना के समर्थक थे। गुरु नानकदेव ने जरूर अपने जीवन काल मे ही एक सगठन बनाया था और वही

1 प0 रामचन्द्र शुक्ल, 'हिन्दी साहित्य का इतिहास', पृष्ठ 77
2 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीर पथ', पृष्ठ 160

सगठन पूर्व निर्मित नियमो और आदर्शों के आधार पर आज भी किसी न किसी रूप मे विद्यमान है।

कबीर फक्कड स्वभाव वाले सत्य नाम के उपासक और अन्वेषक थे। वे *एकातिक साधना के पोषक थे और पोथी–ज्ञान के विरोधी थे, क्योंकि पोथियो* की दुहाई देकर समाज मे वर्णाश्रम–व्यवस्था को जीवित रखने का प्रयास किया जा रहा था। कबीर वर्ण के बजाय कर्म को महत्व देते थे। कबीर ने पुस्तक को प्रमाण मानने के बजाय उसी तथ्य को प्रमाण माना जो जीवन की प्रयोगशाला मे खरा उतर सके। उन्होंने किसी बात के निर्णय मे कोरे तर्कों को आधार रूप मे स्वीकार नही किया। कुल मिलाकर कबीर का व्यक्तित्व वैज्ञानिक आधार वाला था। वे आलोचनात्मक प्रवृत्ति और प्रयोगात्मक ज्ञान के पोषक थे। कबीर को *अन्धविश्वास और आडम्बर* पसन्द न थे। *अत कबीर से किसी पथ की स्थापना की कल्पना* करना उचित नहीं लगता है। कबीर को याद रहा होगा कि महात्माबुद्ध द्वारा स्थापित बुद्ध संघ बाद मे बुराईयॉ और आडम्बरो से ग्रस्त हो गया था। अत वह इस प्रकार की भावना के विरोधी रहे होगे।

कबीर कृत 'बीजक' को प्रामाणिक माना जाता है, परन्तु इसमे उपलब्ध तथ्यो के आधार पर भी नही कहा जा सकता कि वे कबीरपथ के समर्थक या संस्थापक थे बल्कि इससे स्पष्ट होता है कि कबीरपथस्थापना के घोर विरोधी थे। उन्होने बीजक की रमैनी (69) में कहा है कि सच्चे सत को मेला जाने से क्या प्रयोजन; महन्त कहलाने से भी कोई लाभ नही होता। सच्चा सत अपने शिष्य के अविद्याजन्य आवरण को दूर करता है और उसे इस योग्य बना देता है कि वह आत्मदर्शन करने मे समर्थ हो सके। रमैनी मे ही उन्होने व्यक्तिगत साधना को महत्व देते हुए दत्तात्रेय, शुकदेव और नानक *का भी नाम लिखा है* जो आत्मदर्शन के मूल–तत्त्व से परिचित थे और जिनमे भौतिक विलासिता के

प्रति तनिक भी मोह नही था। कबीर को यह देखकर बड़ा ही कष्ट हुआ कि वर्तमान युग के विरक्त कहलाने वाले साधु भी सोने की गद्दियो पर आसीन होते हैं। उनके यहाँ हाथी घोडो का अम्बार लगा रहता है। ऐसी स्थिति में यह सोचना कि कबीर ने अपने जीवन काल मे ही कबीरपथ का निर्माण किया था पूर्णत असंगत लगता है।[1]

यह भी कहा जाता है कि जब गुरु नानक देव 15–16 वर्ष की अवस्था के थे, तब वे अपने भाई 'वाला' के साथ व्यापार करने निकले थे। उस समय भूखे साधुओं का एक अखाडा चारे खाना के पास मिला था। वह अखाडा कबीरपथियो का रहा होगा।[2] गुरुनानक का समय 1469 से 1526 तक माना जाता है। अत सवत् 1542 के लगभग की यह घटना रही होगी, परन्तु किसी शिष्य–मंडली का होना और किसी पथ या सम्प्रदाय का सघटित रूप मे विद्यमान रहना ये दोनो, दो अलग बाते हैं। यदि कबीर ने वास्तव मे किसी पथ का निर्माण किया होता तो कबीर के समसामायिक सतों द्वारा उसकी ओर जरूर संकेत किया जाता। दूसरे, कबीर की प्रामाणिक रचनाओ मे इस तथ्य का जरूर उल्लेख होता, किन्तु ऐसा कोई सकेत इस प्रकार की रचनाओ मे कही भी उपलब्ध नहीं होता।

ऐसा कहा जाता है कि कबीर के पुत्र कमाल से पंथ चलाने की प्रार्थना की गयी थी किन्तु उन्होने यह कहकर अस्वीकार कर दिया कि उन्हे ऐसा करने से आध्यात्मिकगुरु की हत्या का पाप लगेगा।[3] इससे सिद्ध होता है कि तत्कालीन समाज भी परिचित था कि कबीर के नाम पर तब तक कोई पथ नही था और अगर ऐसा होता तो फिर पथ के प्रचलन की बात नही की जाती।

---

1 डॉ0 उमा ठुकराल, 'कबीरपथ साहित्य, दर्शन और साधना', पृष्ठ 03

2 शालिग्राम, 'गुरु नानक', पृष्ठ 27

3 आचार्य क्षितिमोहन सेन, 'दादू–उपक्रमणिका', पृष्ठ 13, 14

आचार्य क्षिति मोहन सेन के कथानक का कोई आधार हो परन्तु इससे यह आभास मिलता है कि कबीरपथ का उद्भव कबीर के समय और सभवत: कबीर के कुछ समय बाद तक नहीं हुआ था।

अगर कबीर ने पथ की स्थापना की होती तो इसका उल्लेख वे 'बीजक' मे जरूर करते। कबीर द्वारा ' बीजक' में कही बातो से भी यह आभास नही मिलता कि वे पथ निर्माण की परंपरा के समर्थक या विरोधी थे।

एक प्रश्न यह उठता है कि अगर कबीर ने पंथ की स्थापना की थी तो समकालीन या उत्तरकालीन इतिहासकारो ने उल्लेख क्यो नही किया ? कबीर सिकन्दर लोदी के समकालीन थे। सिकन्दर लोदी स्वय उच्च कोटि का विद्वान् था। उसकी उपाधि 'गुलमुख' थी।[1] सिकन्दर लोदी ने कबीरपथ के बारे मे स्पष्ट रूप से कोई जानकारी नही दी है।

एक और महत्वपूर्ण तथ्य है कि अगर कबीर ने पंथ की स्थापना की होती तो कबीरपंथ की विभिन्न शाखाओ मे एकरूपता दिखाई देती मगर कबीरपथ की विभिन्न शाखाओ मे गृहस्थो में जन्म, मुण्डन, विवाह, मृत्यु आदि अपने–अपने ढग से सस्कार किये जाते हैं।[2] रामकबीर एव उपजाति मे इसके लिए उनकी पूरी स्वावलम्बी एव शुद्ध, सरल व्यवस्था है तथा कबीरपंथ की अन्य शाखाओं मे बहुत कुछ अपने नियम है। इससे निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि कबीरपथ की उत्पत्ति उनकी मृत्यु के उपरान्त हुई होगी।

उपरोक्त तथ्यो के आलोक मे कहा जा सकता है कि कबीर के शिष्यो ने उनकी शिक्षाओ को प्रचारित–प्रसारित करने के लिए देश के विभिन्न क्षेत्रो मे उनके नाम के मठ स्थापित किये जो कालान्तर में कबीरपथ की शाखाएँ के रूप

---

1 डॉ0 एम0पी0 श्रीवास्तव, 'भारत का सास्कृतिक इतिहास', पृष्ठ 322
2 डॉ0 परशुराम चतुर्वेदी, 'उत्तरी भारत की सत परपरा', पृष्ठ 287

मे प्रसिद्ध हुए। समय के साथ इनकी विचारधारा मे परिवर्तन होते गये और बाद मे ईश्वरवादी और अनीश्वरवादी विचारधारा मे विभाजित हो गये। यह सभी कबीर की मानवतावादी विचारधारा को आज भी अपनाये हुए है। जिस प्रकार गुरु नानक देव ने अपनी शिक्षाओं को जीवन्त बनाये रखने के लिए पथ स्थापित किया था उसी प्रकार कबीर के शिष्यो की भी अभिलाषा रही होगी कि कबीर के नाम से पथ स्थापित करके कबीर की शिक्षाओ के जीवन्त बनाया जाये। कबीरपथ की स्थापना कबीर ने नहीं की होगी क्योकि वह हमेशा ऐसी परम्पराओ के विरोधी रहे, उन्होने पथ, सम्प्रदाय आदि पर जोर न देकर मानवता के कल्याण की बात की। संभवत. उन्होने विचारं किया हो कि जिस प्रकार महात्माबुद्ध द्वारा स्थापित सघ मे अनेक बुराईया आ गयी थी, हो सकता कि उनके स्थापित पथ या सम्प्रदाय भी इस प्रकार की बुराईयो से ग्रस्त हो जाये। अत ऐसी स्थिति मे उनकी सारी मानवतावादी विचारधारा ही खण्डित, हो जायेगी कबीर के शिष्यों द्वारा स्थापित विभिन्न कबीर मठों ने ही कबीरपथ की विचारधारा को जन्म दिया होगा।

(ख) कबीरपंथ के उद्‌भव के कारण :

किसी भी पथ या दार्शनिक विचारधारा के उद्‌भव के लिए अनेक कारण उत्तरदायी होते हैं जैसे कि नानक पथ के उद्‌भव हेतु नानक का व्यक्तिगत प्रयास और तत्‌कालीन सामाजिक और धार्मिक परिस्थितिया जिम्मेदार मानी जाती है, इसी प्रकार बौद्ध, अद्वैत, विशिष्टाद्वैत, द्वैतवाद आदि दार्शनिक विचारधाराओ के उद्‌भव के पीछे अनेक कारण तथा परिस्थितियां उत्तरदायी रही है। कबीरपथ के उद्‌भव के लिए उत्तरदायी कारणो की खोज करना काफी कठिन कार्य है क्योंकि कबीर द्वारा किसी भी पथ की स्थापना की जानकारी नहीं मिलती है। कबीर किसी पथ या सम्प्रदाय में बधकर रहने वाले व्यक्ति नही

थे, वे इस प्रकार की परम्पराओं के विरोधी थे। कबीरपंथ के उद्भव हेतु तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक व धार्मिक परिस्थितियां तथा कबीर के कुछ शिष्यो के प्रयास को जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। कबीर के उपरान्त समाज मे अनेक परिवर्तन हो रहे थे, अनेक पथो की स्थापना हो रही थी, समाज मे साम्प्रदायिकता के उग्र होने के आसार लग रहे थे। ऐसी परिस्थिति मे कबीर के शिष्यों ने कबीर की शिक्षाओ को कालजयी बनाने हेतु कबीरपथ की स्थापना की होगी। निर्गुणमत विचारधारा के उदय के समय तुगलक, सैय्यद तथा लोदी वंश के सुल्तानो ने *'महजबे इस्लाम' के प्रचार को अपना लक्ष्य बनाया।*[1] अत कबीर के शिष्यो ने साम्प्रदायिकता को न पनपने देने और सर्वधर्म समन्वयवादी मानवतावादी समाज के निर्माण का सपना साकार करना चाहा होगा। डॉ० परशुराम चतुर्वेदी ने लिखा है कि कबीरपथी साहित्य के अन्तर्गत इस बात का उल्लेख मिलता है कि कबीर साहब ने अपने चार प्रमुख शिष्यो को चारो दिशाओ मे इस निमित्त भेजा था कि ये जाकर इनके मत का प्रचार करे। इन चारो के नाम वहा पर क्रमश चत्रमुख, बकेजी, सहतेजी और धर्मदास दिये गये मिलते है।

> चत्रभुज बकेजी सहते जी और चौथे तुम सही चार ही,
> कडिघर जग में वचन यह निश्चय कही।।
> चार गुरु संसार में हैं जीवन काज प्रगटाइया
> काट के सिर पांव दें, सब जीव वंदि छुडाइया।[2]

यहॉ पर धर्मदास के प्रति कबीर साहब द्वारा इस प्रकार का कथन कराया गया है।[3]

इनमे धर्मदास द्वारा कबीरपथ की धर्मदासी या छत्तीसगढी शाखा का

---

1 डॉ० विष्णुदत्त राकेश, 'उत्तर भारत के निर्गुण पथ के साहित्य का इतिहास', का दूरी पृष्ठ 69
2 'अनुराग सागर', पृष्ठ 86
3 परशुराम चतुर्वेदी, 'उत्तर भारत की सत परपरा', पृष्ठ 287

मध्यप्रदेश मे चलाया जाना प्रसिद्ध है।

कबीरपथ के उद्भव के कारणो में सर्वप्रमुख कारण पथ निर्माण की उस परपरा को लिया जा सकता है जिसे नानक ने प्रारम्भ किया था। चूकि कबीरपंथी शाखाओ का निर्माण या ऐसी भावना के समर्थक न थे अत कबीर के उपरान्त कबीर के शिष्यो ने विभिन्न पथो के प्रचलन के प्रभाव के फलस्वरूप पथ निर्माण की भावना जागी होगी। इसी भावना के फलस्वरूप देश–विदेश में अनेक कबीरपथो का निर्माण हुआ होगा। डॉ0 विष्णुदत्त राकेश ने लिखा है कि हिन्दी निर्गुण सम्प्रदाय मे पथ की निश्चित रूपरेखा नानक से उपलब्ध होती है, उन्होने पथ का सूत्रपात ही नही किया अपितु उसे भविष्य मे सुव्यवस्थित रूप देने की दृष्टि से अपने पीछे सुयोग्य गुरुओ की एक परम्परा भी प्रतिष्ठित कर दी। यह परम्परा तीन शताब्दियो से सुसगठित रूप से चली आ रही है।[1] विभिन्न कबीरपथ की शाखाओ मे यह परम्परा आज भी देखी जा सकती है। काशीवाली शाखा हो या या धनौती या अन्य शाखाएँ सभी मे गुरु परपरा चली आ रही है।

कबीरपथ के लिए उत्तरदायी कारणो मे दूसरा प्रमुख कारण यह रहा होगा की कबीर के निधन के उपरान्त ऐसी परिस्थितियाँ पैदा हो गयी थी कि उनके शिष्यो ने एक मंच की आवश्यकता समझी होगी अत कबीरपंथ का उद्भव हुआ। तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक व आर्थिक परिस्थिति मे कबीर की शिक्षाओ को प्रचारित–प्रसारित करना जरूरी समझा गया। अत कबीर के शिष्यो ने अन्य पथो की तरह पथ निर्माण करना जरूरी समझा होगा।[2] 16वी शताब्दी के बाद के सामाजिक व राजनीतिक वातावरण मे ठहराव दिखाई देता है। धार्मिक क्षेत्र मे नानक पथ के अनुयायी व सूफी सन्त नैतिक आचरण की शुद्धता और मानवतावादी शिक्षाओ का प्रचार–प्रसार कर रहे थे।

1 डॉ0 विष्णुदत्त राकेश, 'उत्तरी भारत के निगुर्ण पथ के साहित्य का इतिहास', पृष्ठ 70

2 हरिशरण गोस्वामी, 'भक्ति पुष्पाजलि', पृष्ठ 5

ऐसी स्थिति में कबीर के शिष्यो ने सोचा होगा क्यो न पथ स्थापित करके कबीर की शिक्षाओ का समाज में प्रचार-प्रसार किया जाये। हालांकि कबीर के शिष्य उनकी शिक्षाओ का प्रचार-प्रसार पंथ निर्माण के बिना भी कर सकते थे परन्तु उन्होंने पंथ का निर्माण तत्कालीन परिस्थितियों और एक मच के रूप में प्रभावी ढंग से कार्य करने की भावना के कारण किया होगा। यह सामान्य धारणा प्राचीन काल से रही है कि समूह के रूप मे या एक मंच पर इकट्ठा होकर अच्छी तरह कार्य किया जा सकता है।

कबीरपथ के उद्भव हेतु तीसरा उत्तरदायी कारण तत्कालीन साम्प्रदायिक वातावरण रहा होगा। सल्तनत काल मे फीरोज तुगलक और सिकन्दर लोदी आदि ने 'मजहबे इस्लाम' के प्रचार को प्रधान लक्ष्य रखकर शासन किया था। परिणामस्वरूप साम्प्रदायिक वातावरण पनपने के आसार दिखने लगे थे अतः ऐसी स्थिति मे न केवल सर्वधर्म समभाव की अपितु थी। आवश्यकता थी कि आडम्बरो, बुराईयो इत्यादि को दूर करने की भी आवश्यकता थी। यह कार्य कबीर ने बड़े ही प्रभावी ढग से किया था। अतः कबीर के शिष्यो ने इसी उद्देश्य के तहत कबीर के उपरान्त पथ निर्माण किया होगा। इस प्रकार साम्प्रदायिक राजनीतिक बुराईयो के विरूद्ध कबीर के शिष्यों ने कबीरपथ के माध्यम से आवाज उठायी होगी, हो सकता है कि इसी के प्रभाव के फलस्वरूप मुगल सम्राट अकबर को सर्वधर्म समभाव की नीति अपनानी पडी हो।

कबीरपथ के उद्भव हेतु उत्तरदायी कारणों में चौथा कारण कबीर के शिष्यो के आपसी मतभेद रहे होगे। कबीर के अनुयाइयो के मतभेदों के कारण भी पंथ का उद्भव हुआ होगा, यह मतभेद धार्मिक या व्यक्तिगत अह की भावना या फिर उत्तराधिकार की भावना आदि कारण भी हो सकते है। जिस प्रकार बौद्धधर्म मे महायान और हीनयान और जैनों में श्वेताम्बर और दिगम्बर का

उद्‌भव आपसी मतभेदो के कारण हुआ उसी प्रकार हो सकता है कि कबीर के शिष्यो और अनुयाइयो ने मतभेदो के कारण अलग–अलग पथ बनाये हो। इस प्रकार की भावना की झलक कबीर की मृत्यु के समय की घटना से मिलती है। कहा जाता है कि कबीर की मृत्यु के समय उनके शव को लेकर शिष्यों मे संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो गयी थी जब हिन्दू शिष्य हिन्दू रीति से और मुस्लिम शिष्य मुस्लिम रीति से मृतक सस्कार करना चाहते थे। मगहर मे आमी नदी के किनारे कबीरपथ के दो मठ है एक को मुस्लिम कबीरपथी और दूसरे की हिन्दू कबीरपंथी मठ कहा जाता है। दोनो मठो के बीच मे एक ऊँची दीवार खडी कर दी गई है। कहा जाता है कि दोनो वर्गो के बीच साम्प्रदायिक सघर्ष के कारण हिन्दू कबीर पथियों ने अपने लिए अलग कबीर मठ का निर्माण कर लिया।[1] इसी प्रकार अन्य प्रकार के मतभेद उनके विचार रहे होगे।

कवीरपंथ के उद्‌भव के लिए उत्तरदायी कारणो में पाचवा कारण कबीर के उपरान्त कबीर जैसे असधारण व्यक्तित्व का न होना भी माना जा सकता है। बुद्ध, कवीर जैसे व्यक्ति इस धरती पर कभी कभी ही जन्म लेते है। कबीर के शिष्यों ने सोचा होगा कि अपने गुरु की शिक्षाओं को कालजयी बनाया जाये और इसके लिए सबसे उत्तम माध्यम उनके नाम पर पंथ का निर्माण ही हो सकता है। आज भी देश–विदेश मे कबीर की शिक्षाओ को अनेक कबीरपंथी शाखाएँ जीवन्त बना रही है। 'कबीर दर्शन' हमेशा ही प्रासगिक रहा है और आज भी प्रासंगिक है। इस प्रकार कबीर के अनुयाइयो ने कबीरपंथ का निर्माण करके उनको कालजयी बनाने का प्रयास किया। देश और विदेश में फैली कबीरपथ की सभी शाखाएँ कबीर के मूल सिद्धान्तो और दर्शन पर आधारित हैं। हालाकि उनमें उपासना पद्धति, भक्ति, साधना आदि के बारे मे काफी अन्तर है फिर भी सभी शाखाओं के मूल में हिन्दुओं के 'गीता', 'रामायण', इस्लाम के

1 डॉ० केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीर पथ', पृष्ठ 165

'कुरान' और ईसाईयो के 'ओल्डटेस्टामेन्ट' की तरह 'बीजक' भी आदरणीय है। ध्यातव्य है कि 'बीजक' ही कबीर की शिक्षाओ और दर्शन का सग्रह है। किसी भी विचारधारा या दर्शन के उद्भव के पीछे कोई न कोई उद्देश्य छिपा रहता है हो सकता है कि कबीर के अनुयाइयों ने कबीर को कालजयी बनाने हेतु उनके नाम से पथ की स्थापना की हो। सामान्यत ऐसा होता भी है कि शिष्य के लिए गुरु वन्दनीय होता है। इस तथ्य को कबीर ने स्वयं स्वीकार किया है। उनका कहना है कि–

"गुरु गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागूँ पाँव।
बलिहारी गुरु आपने, जिन गोविन्द दियो बताय।।"

कबीरपथ के उद्भव के लिए उत्तरदायी कारणो मे कबीर के उपरान्त कबीर जैसे उनके शिष्य का न होना भी माना जा सकता है। अगर कबीर के उपरान्त कोई उनका शिष्य उनके जैसा विलक्षण व्यक्तित्व वाला होता तो कबीरपंथ के स्थापना की आवश्यकता ही नही होती। जिस प्रकार महात्माबुद्ध ने अपनी मृत्यु के उपरान्त संघ के नेतृत्व के प्रश्न एव उत्तर मे कहा था कि मेरे उपरान्त मेरे विचार ही बौद्ध धर्म का नेतृत्व करेंगे, उसी प्रकार कबीर ने भी अपनी विचारधारा या दर्शन की अपने अनुयाइयो का रास्ता घोषित किया होगा। इस तथ्य के रामर्थन का आधार राभी कबीरपथी शाखाओ मे व्यापक मतभेद होते हुए भी बीजक को पवित्र धार्मिक ग्रथ (जैसे–हिन्दू गीता व रामायण को मुस्लिम कुरान को मानते है) के समान मानना है। इस प्रकार कबीरपथ के उद्भव हेतु कबीर जैसे विराट पुरुष का दुबारा न होना, एक कारण रहा होगा। कबीर जब तक जिन्दा रहे तब तक पथ की जरूरत नहीं थी और दूसरे वे इस प्रकार की परम्पराओ के विरोधी थे किसी पंथ या सम्प्रदाय मे बाधकर अक्सर व्यक्ति सकुचित और सीमित हो जाता है। कबीर ने हमेशा व्यापक दृष्टिकोण पर केन्द्रित विचारधारा को अपनाकर उसका प्रचार–प्रसार किया।

स्पष्ट है कि कबीरपंथ का उद्‌भव अनेक कारणो से हुआ है जिनमे से कुछ का पूर्व मे उल्लेख किया गया है सामग्री के अभाव के बावजूद भी कबीरपथ के उद्‌भव के कारणो का गहराई से विश्लेषण किया गया है। पंथ निर्माण की जिस परम्परा को गुरुनानक ने शुरू किया था उसी परम्परा को अनेक विचारको, महापुरुषो ने भी अपनाया जैसे दादू, दरिया, साहब, गोरखनाथ चरणदास आदि। तत्कालीन सामाजिक धार्मिक व राजनीतिक परिस्थितियो ने भी कबीरपथ को प्रभावित किया है। कबीर किसी पथ या विचारधारा मे बधे रहने वाले महापुरुष नही थे बल्कि वे तो सभी विचारधाराओं को प्रभावित करने वाले थे। आज भी उनकी बानियां सारी दुनिया मे सुनाई दे रही है। **'कहत कबीर सुनो भाय साधौ'**, की आवाज गॉव–गॉव, शहर–शहर और देश–विदेश मे सुनाई दे रही है। कबीर से प्रभावित अनेक पंथ आज भी बिना भेदभाव के देश–विदेश मे मानवतावादी कार्यों में लगे है। कबीरपथ के उद्‌भव के कुछ भी कारण हो परन्तु कबीर के अनुयायी कबीरपंथ के द्वारा उनकी शिक्षाओ का प्रचार–प्रसार सारी दुनिया मे कर रहे हैं।

कबीरपंथ का प्रारम्भ किसने और कब किया ?

कबीरपथ का प्रारम्भ कब हुआ और किसने किया? इस प्रश्न पर सुनिश्चित निष्कर्ष दे पाना अत्यन्त कठिन है किन्तु इतना निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि कबीर के जीवनकाल में कबीरपंथ का आरम्भ नही हुआ था, और उनके उपरान्त ही कबीरपथ का सगठन तैयार किया गया होगा। इस सम्बन्ध मे अब तक जो भी निष्कर्ष निकाला गया है वह अनुमान पर ही आधारित है क्योकि ऐतिहासिक प्रमाणो की कमी इसमें बाधा है। अनेक विद्वानों यथा डॉ0 परशुराम चतुर्वेदी, डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी और डॉ0 उमा ठुकराल ने कबीरपंथ के प्रारम्भ होने का काल 17वीं शदी ही माना है। इसी प्रकार कबीरपथ

के सस्थापक के बारे में भी विद्वानों ने अनुमान के आधार पर ही निष्कर्ष निकाले है। छत्तीसगढी शाखा के प्रवर्तक धर्मदास को ही डॉ0 परशुराम चतुर्वेदी, डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी और डॉ0 उमा ठुकराल ने कबीरपथ का प्रवर्तक माना है। काशीवाली शाखा के प्रवर्तक सुरत गोपाल और धनौती वाली शाखा के प्रवर्तक आचार्य भगवान गोंसाई के बारे मे स्पष्ट जानकारी का अभाव है इस कारण भी कबीरपथ का प्रवर्तक निश्चित करना कठिन है। सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि धर्मदास को कबीरपथ का प्रवर्तक माना गया है परन्तु काशीवाली शाखा के प्रवर्तक सुरत गोपाल का कबीर के साथ शास्त्रार्थ होना सर्वविदित है।[1] ऐसी स्थिति मे सुरतगोपाल कबीर के समकालीन सिद्ध होते है। अत. समय के हिसाब से सुरत गोपाल धर्मदास से पूर्व के सिद्ध होते हैं। हो सकता है कि सुरत गोपाल ने शात्रार्थ मे कबीर से पराजित होने के बाद उनसे प्रभावित होकर काशी मे कबीरपथ की काशीवाली शाखा की सबसे पहले स्थापना की हो। युसुफ हुसैन ने माना है कि धर्मदास ने कबीर मठ की स्थापना बाधवगढ मे की थी।[2]

कहा जाता है कि पथ निर्माण की परम्परा की शुरूआत गुरुनानक देव ने की थी। उन्होने पथ सुदृढ़ता के लिए अनेक नियमों और विधानो का भी निर्माण किया था। गुरुनानक देव की मृत्यु सवत 1595 (सन् 1538 ई0) में आश्विन शुक्ल दशमी को करतारपुर के निवास स्थान पर हुई थी।[3] अत स्पष्ट है कि उन्होने अपने पथ की स्थापना 16 वी शताब्दी के प्रारम्भ मे की होगी। ऐसे स्थिति में यह निश्चित हो जाता है कि कबीरपथ की स्थापना 16 वी शताब्दी के उत्तरार्द्ध के बाद ही हुई होगी। अगर इससे पहले कबीरपंथ की

---

1 हरिशरण गोस्वामी, 'भक्ति पुष्पाजलि', पृष्ठ 5

2 युसूफ हुसैन, 'Glimpses of meetivel Indian Culture Asia publishing House Bombay', Page- 27

3 डॉ0 परशुराम चतुर्वेदी, 'उत्तरी भारत की सत परम्परा', पृष्ठ 364

किसी शाखा की स्थापना की गयी होती तो नानक पंथ को सर्वप्रथम स्थापित होने का श्रेय नहीं दिया जाता।

कबीरपथ की प्रधान शाखाओ काशीवाली, धनौती की भगताही और छत्तीसगढ़ी शाखाओ से सम्बन्धित ऐसा कोई प्रमाण नहीं प्राप्त हुआ है जिससे कबीरपंथ की प्रारम्भिक अवस्था पर प्रभाव डाला जा सके। धनौती शाखा से सम्बन्धित जो विवरण प्राप्त होता है कि उससे कबीरपंथ के काल निर्धारण की दिशा मे कोई सार्थक प्रमाण नही मिलता। कबीरचौरा काशीवाली शाखा के प्रवर्तक सुरत गोपाल माने जाते है परन्तु इनसे सम्बन्धित कोई भी प्रामाणिक लिखित दस्तावेज उपलब्ध नही है जिसके आधार पर सुनिश्चित रूप से कहा जा सके कि उन्होंने कबीरपथ की स्थापना कब और किस रूप मे की थी। पुरातात्विक दृष्टि से भी सुरत गोपाल काशी कबीरचौरा से सम्बन्धित सिद्ध नही होते क्योकि कबीरचौरा व नीरू टोला मे उनकी समाधि नही है दूसरे, कबीरचौरा के गुरुओ की तालिका मे सुरत गोपाल को चौथे स्थान पर रखा गया है।[1] दूसरी ओर 'गुरु माहात्म्य' के अनुसार, कबीर के अनन्तर पहले आचार्य सुरत गोपाल ही है, इससे स्पष्ट होता है कि सुरत गोपाल के बारे मे सदिग्ध जानकारी है। ऐसी स्थिति मे सुनिश्चित रूप से नही कहा जा सकता है कि सुरत गोपाल ने ही कबीर के उपरान्त किसी समय कबीरपथ की स्थापना की थी। छत्तीसगढी शाखा से सम्बद्ध कतिपय पुरानी और प्रामाणिक समझी जाने वाली चिट्ठिया और पजे डॉ० केदारनाथ द्विवेदी को प्राप्त हुए थे किन्तु वे पजे भी प्रमोद गुरु वालापीर के समय से ही प्राप्त हुए हैं।[2] परन्तु समस्या यह है कि इस शाखा मे प्रमोद गुरु वालापीर से पहले कुलपति नाम, सुदर्शन नाम, चूरामणि

1 वेस्टरकाट, 'कबीर एण्ड कबीर पथ', पृष्ठ 92
2 डॉ० केदार नाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीर पथ', पृष्ठ 162

नाम और धर्मदास हुए है जिनका समय निश्चित करने का कार्य अनुमान द्वारा हुआ है अत ऐसी स्थिति मे निश्चित समय का पता लगाना काफी कठिन है।

दादूपंथी राघवदास की हस्तलिखित प्रति भक्तमाल कबीरपथ के सम्बन्ध मे कुछ जानकारी उपलब्ध कराती है। राघवदास ने धर्मदास को कबीर का शिष्य कहा है। इस हस्तलिखित प्रति का समय सम्वत– 1717 (सन् 1660 ई0) है जबकि छत्तीसगढी शाखा का इतिहास प्रस्तुत करते समय धर्मदास के आविर्भाव का काल 17वी शदी के प्रथम चरण के आस–पास सिद्ध करने का प्रयास किया गया है। यहॉ राघवदास और छत्तीसगढी शाखा के इतिहास प्रस्तुतीकरण के बीच काफी अन्तराल दिखाई देता है।

दूसरे, दोनो स्रोत धर्मदास के बारे मे जानकारी पर केन्द्रित है न कि कबीरपथ के उद्भव काल या संस्थापक पर। यह प्रयास भी कबीरपथ का काल और सस्थापक सिद्ध मे असमर्थ है।

कबीरपथ के उद्भव के काल को जानने के लिए और कई महत्वपूर्ण तथ्य उल्लेखनीय है धर्मदास ने स्वीकार किया है कि कबीर ने उन्हे मथुरा में झीनादर्शन दिया था, दूसरी बार इन्होने उन्हे काशी मे भी देखा था और अत मे फिर कबीर साहब ने इन्हें बान्धौगढ़ जाकर ही कृतार्थ किया था,[1] इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि कबीर के निर्देश पर धर्मदास ने 16वी शताब्दी से 17 वीं शताब्दी मे कबीरपथ की स्थापना की थी परन्तु इसे स्वीकार करना कठिन है क्योकि सर्वप्रथम, तो कबीर द्वारा धर्मदास को दर्शन देना या किसी भी प्रकार के सम्बन्ध की प्रामणिकता नही है दूसरे, यह विश्वास और अनुमान पर आधारित है कबीरपंथ के एकाध ग्रंथों की पंक्तियो को पढने से इसे स्वीकार

1 डॉ0 परशुराम चतुर्वेदी, 'उत्तरी भारत की सत परंपरा', पृष्ठ 283

नहीं किया जा सकता जैसे 'अमर सुख निधान' मे कबीर साहब का इनसे जिदरुप मे ही मिलना कहा गया है।

"जिन्दरुप जबधरे शरीरा धरमदास मिली गये कबीरा" अमर सुखनिधान।

स्वय इनकी भी रचना में उनका कबीर के साथ 'विदेही' बनकर मिलना और अपना 'झीनादारा' दिखाना ही बतलाया गया है।

"साहेब कबीर प्रभु मले विदेही, झीनादर्शन दिखाइया"

इस प्रकार झीनादास के कारण सन्देह पैदा हो जाता है, हो सकता है कि सपने इत्यादि मे कबीर का उन्होने दर्शन किया हो उपरोक्त वर्णन कबीरपथ के प्रारम्भ की तिथि को सिद्ध करने मे असमर्थ है। इससे केवल यही निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि कबीर के उपरान्त ही कबीरपंथ का प्रारम्भ हुआ होगा। डॉ0 परशुराम चतुर्वेदी ने छत्तीसगढ़ी शाखा के प्रत्येक आचार्य का 25 वर्ष औसत गद्दी काल मानकर धर्मदास का समय 17वी शताब्दी का द्वितीय या प्रथम चरण स्वीकार किया है[1] परन्तु इसे स्वीकार करने पर धर्मदास का कबीर का शिष्य होना सभव नहीं कहा जा सकता। इस समस्या को दूर करने का प्रयास डॉ0 'की' ने किया है। डॉ0 की के अनुसार दो बातें सम्भव हो सकती है। प्रथम तो यह कि छत्तीसगढ़ी शाखा की गुरु परम्परा की तालिका में सभवत कुछ नाम छूट गये है और दूसरा यह है कि धर्मदास कबीर के समकालीन नही रहे होगे।[2] निष्कर्षत: प्रत्येक गुरु का गद्दी काल 25 वर्ष मानना तार्किक नही प्रतीत होता क्योकि यह काल कम ज्यादा भी हो सकता है।

कबीरपथ को प्रारम्भ करने का श्रेय धर्मदास को दिया जाता है। डॉ0 विष्णु दत्त राकेश ने 'उत्तर भारत के निर्गुण पंथ साहित्य के इतिहास' मे लिखा

1 डॉ0 परशुराम चतुर्वेदी, 'उत्तरी भारत की सत परपरा', पृष्ठ 282
2 एफ0ई0 की, 'कबीर एण्ड हिज फालोवर्स', पृष्ठ 99

है कि कबीरपथ के आविर्भाव के समय को निश्चित करना कठिन है किन्तु यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि कबीर के मरणोपरान्त धर्मदास ने ही सर्वप्रथम कबीरपथ का सगठन किया होगा।[1] इसी प्रकार डॉ० उमा ठुकराल ने स्वामी युगलानंद बिहारी के 'श्री भक्त मालान्तर्गत कबीर कथा' मे वर्णित कबीर द्वार धर्मदास को दर्शन दिया जाना के आधार पर निष्कर्ष निकाला है कि कबीरपथ को स्वरूप प्रदान करने मे धर्मदास की एक महत्वपूर्ण भूमिका रही है। धर्मदास के पूर्व किसी अन्य सत ने कबीरपथ चलाने का प्रयास नही किया था। धर्मदास के अथक प्रयास के फलस्वरूप ही अनन्तर कबीरपथी रचनाओ का अम्बार लग गया।[2] इसी प्रकार युसूफ हुसैन ने लिखा है कि धर्मदास ने जबलपुर के निकट बाधौगढ, मे कबीर मठ की स्थापना की थी।[3] इन्ही विद्वानो की तरह डॉ० केदारनाथ द्विवेदी की भी मान्यता है कि धर्मदास के पूर्व कबीर के किसी भी शिष्य ने पथ निर्माण की आवश्यकता नही समझी थी कबीरपथ को सुदृढ बनाने के लिए सभवत' धर्मदास (जन्म, लगभग 17 वी शताब्दी का प्रथम चरण) ने अथक प्रयास किया होगा।[4]

अभी तक अधिकाशतः विद्वानों और इतिहासकारों ने धर्मदास को ही कबीरपथ का सस्थापक स्वीकार किया है। परन्तु जिस आधार पर धर्मदास को कबीरपंथ का संस्थापक माना गया है उस आधार पर श्रुति या सुरत गोपाल को भी पथ के प्रारम्भ करने का श्रेय दिया जा सकता है क्योंकि श्रुति गोपाल ने कबीर से शास्त्रार्थ मे हारकर कबीर का शिष्यत्व ग्रहण कर कुछ समय बाद काशी मे वर्तमान कबीरपथ की 'कबीरचौरा'' नामक शाखा की स्थापना करके

1 डॉ० विष्णुदत्त राकेश, 'उत्तर भारत के निर्गुण पथ साहित्य का इतिहास', पृष्ठ 91
2 डॉ० उमा ठुकराल, 'कबीर पंथ साहित्य, दर्शन एव साधना', पृष्ठ 6
3 डॉ० युसूफ हुसैन, 'Glimpses of Medieval Indian Culture', Page 27
4 डॉ० केदानाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीरपथ', पृष्ठ 163

कबीर के मत का प्रचार करने की चेष्टा की थी।[1] श्रुति गोपाल की वास्तविक तिथि न पता होने के कारण इसको प्रामाणिक रूप से सिद्ध करना कठिन है। शास्त्रार्थ की कहानी भी अनुश्रुतियो पर आधारित है ऐसी स्थिति मे कहा जा सकता है कि कवीरपथ सम्बन्धी धारणा का उद्भव तत्कालीन परिस्थितियो मे हुआ होगा इसके लिए किसी व्यक्ति विशेष या काल विशेष को उत्तरदायी नही ठहराया जा सकता है। इतिहास लेखन मे प्रामाणिक साक्ष्यों की सबसे महत्वपूर्ण भूमिका होती है। कबीर के जिदा रहते किसी पथ या मठ की आवश्यकता ही नही थी उनकी मृत्युपरान्त उनकी शिक्षाओ और उनके मानवतावादी सार्वभौम विश्वधर्म को जन–जन तक पहुंचाने के लिए उनके शिष्यो और अनुयाइयों ने विभिन्न स्थानो पर उनके नाम से मठ स्थापित किये जो कालान्तर में कबीरपथ की शाखाओ के रूप मे प्रसिद्ध हुए। इस अवधारणा की पुष्टि काशी मे श्रुति गोपाल द्वारा स्थापित कबीरपथ की शाखा, छत्तीसगढ मे धर्मदास द्वारा और धनौती में भगवान गोसाई द्वारा स्थापित कबीरपंथ की शाखा से हो जाती है। इन सगठनों को स्थापित करने का काल अलग–अलग रहा होगा। हमारा विचार है कि कबीर से सम्बन्धित इस प्रकार के संगठन की शुरूआत 17 वी शताब्दी के प्रारम्भिक चरण में काशी मे हुई होगी और उसके संगठनकर्ता श्रुति गोपाल या धर्मदास रहे होगे। हो सकता है कि कबीर से उनका किसी समय सम्पर्क रहा हो। काशी कबीर की जन्म स्थली और कर्मस्थली मानी जाती है। समय के साथ इनमे विचारधारा, संगठन, उपासना पद्धतियो मे काफी विभिन्नता आ गयी। अकबर की 'दीन–ए–इलाही' को कबीर की शिक्षाओ की एक शाखा माना गया है।[2]

---

1 डॉ0 परशुराम चतुर्वेदी, 'उत्तरी भारत की सत परम्परा', पृष्ठ 281

2 पी0एन0 चोपड़ा, बी0एम0 पुरी, एम0एन0 दास, 'भारत का सामाजिक सास्कृतिक और आर्थिक इतिहास' पृ0 84

कबीरपंथ का विकास :

कबीर के उपरान्त उनके शिष्यो श्रुति गोपाल, धर्मदास और भगवान गोसाई ने क्रमश. काशी, छत्तीसगढ मे बान्धौगढ और धनौती (बिहार) मे उनके मत के प्रचार–प्रसार हेतु पथ स्थापित किये। इनकी अनेक उपशाखाएँ भी स्थापित हो चुकी है। कुछ शाखाएँ अपने उद्भव काल से स्वतत्र है जबकि कुछ ऐसी भी है, जो पहले इनसे किसी न किसी रूप मे सम्बद्ध थी, किन्तु उन्होंने कालान्तर मे अपने को स्वतत्र घोषित कर दिया। कुछ ऐसी भी शाखाएँ है जिनका सम्बन्ध कबीरपथ से नही है किन्तु कबीरपथी महात्मा उनका मूल स्रोत कबीर या कबीरपंथ से ही मानते हैं।[1] देश और काल के प्रवाह के कारण नाना प्रकार के विचार कबीरपथ में प्रचलित हो गये किन्तु उनकी वेश–भूषा, शिष्टाचार एवं उपासना मे एकरूपता रही है। पूरे कबीरपंथ मे पारख सिद्धान्त के लिए आदर भाव रहा है और आज भी पारख सन्त, महात्माओं का केन्द्र उत्तर प्रदेश का इलाहाबाद शहर है। कबीर और कबीरपथ का केन्द्र उत्तर प्रदेश अववय रहा, परन्तु इसका व्यापक प्रचार–प्रसार मध्य भारत में सर्वाधिक रहा है। बिहार और गुजरात मे भी कबीर की शिक्षाओ का काफी प्रचार–प्रसार हुआ है। महाराष्ट्र, तमिलनाडु, आसाम, पजाब और काश्मीर आदि राज्यों मे अपेक्षाकृत कम प्रभाव रहा है, परन्तु आज की स्थिति मे इन राज्यों में भी कबीरपथ काफी लोकप्रिय है। उत्तरी भारत मे दस लाख कबीर पथियो की संख्या बतायी गयी है।[2] यह सख्या सन्त महात्माओ की हो सकती है परन्तु गृहस्थ कबीर पंथियो का अनुमान लगाना मुश्किल है। भारत के अतिरिक्त विदेशो में कबीर की शिक्षाओ से प्रभावित होकर उनके नाम से अनेक पंथ स्थापित किये गये हैं। जिस प्रकार बौद्ध धर्म का जन्म भारत मे हुआ किन्तु सारी सीमाओं को पार करते हुए विदेशो

1 डॉ0 केदार नाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीर पथ', पृष्ठ 163
2 अभिलाषदास, 'कबीर दर्शन', पृष्ठ 598

में जा पहुचा, उसी प्रकार भारतीय सीमा का अतिक्रमण करके कबीरपंथ विश्व के अनेको देशो में अपना प्रभुत्व स्थापित कर चुका है। त्रिनिदाद, ब्रिटिश गुयाना, चीन, श्रीलंका, वर्मा, भूटान, नेपाल, अरब, फारस और काबुल आदि मे भी कबीरपंथ समादृत हुआ है।

अपनी स्थापना के बाद तीनो शाखाओं ने पूरे भारत में अपनी अनेक उप शाखाओ को भी जन्म दिया है। कबीर बाग, गया आदि काशी कबीरचौरा से सम्बद्ध है। लहरतारा, बडौदा, नाडियाद, अहमदाबाद, मगहर आदि अन्य मठ काशी कबीरचौरा से सम्बन्धित है।[1] धनौती वाली भगताही शाखा की उपशाखाओ में लहेजी, मानसर, तुर्की (मुजफ्फरपुर), नौरग, दामोदरपुर, चनावे (छपरा), तधना, बड़हरवा, सवैया बैजनाथ (मोतीहारी) शोखवना (बेतिया) आदि के नाम लिये जा सकते है।[2] छत्तीसगढी शाखा का सर्वाधिक प्रचार–प्रसार हुआ है। विदेशों मे फैले अधिकांश कबीरपथी मठ इसी शाखा से सम्बद्ध है। रतनपुरा (विलासपुर,) मडला (मध्य प्रदेश, नर्मदातट), सिंघोडा (छिदवाडा), गरौठा (बुन्देलखण्ड), लाल दरवाजा (सूरत), खैरा (बिहार), धनौता (मध्यप्रदेश), अहमदाबाद आदि छत्तीसगढी शाखा की भारत मे फैली उपशाखाएँ है।[3] इलाहाबाद की कबीरपथी शाखा 'कबीर पारख संस्थान' स्वतन्त्र रूप से कार्यरत है।

(क) स्वतन्त्र शाखाएँ :

(i) काशीवाली शाखा :

कबीर के जन्म स्थान में पाये जाने के कारण कबीरचौरा काशी काफी महत्व है। इस शाखा के मूल प्रवर्तक सुरत गोपाल माने जाते है। कबीरचौरा काशीवाली शाखा सभी शाखाओं मे प्राचीनतम रही होगी क्योकि यह स्थान

1 डॉ० केदार नाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीर पथ', पृष्ठ 166
2 डॉ० केदार नाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीर पंथ', पृष्ठ 168
3 डॉ० केदार नाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीर पथ', पृष्ठ 342

(काशी) कबीर का जन्म स्थान माना जाता है। इस सम्बन्ध मे प्रामाणिक सामग्री का अभाव है कि इसके मूल प्रवर्तक सुरत गोपाल थे। एक विचारधारा इसका प्रारम्भ मध्य प्रदेश की ओर से मानती है। इसके अनुसार कबीरपथ की स्थापित करने की प्रेरणा सर्वप्रथम कबीर की ओर से उनके शिष्य धर्मदास को मिली थी। इनके उत्तराधिकारी मुक्तामणि ने उसे 'कुदरमाल' में सुव्यवस्थित रूप प्रदान किया।

ब्रह्मलीन मुनि ने कबीरपंथ के सभी मठो को चौरा काशी शाखा के मठ माने है।[1] परन्तु इसे स्वीकार करना उचित नही है क्योंकि इसकी पुष्टि किसी अन्य साक्ष्य से नही होती दूसरे, कबीरपंथ की सभी शाखाओ का प्रामाणिक इतिहास उपलब्ध नहीं है कि उनके क्रमिक विकास का तुलनात्मक अध्ययन करके निश्चित परिणाम पाया जा सके। दूसरे मत के अनुसार सुरत गोपाल ने ही काशी मे कबीर मठ की स्थापना की थी, परन्तु इसे भी स्वीकार करना कठिन है क्योकि इनकी समाधि और इनके शिष्य ज्ञानदास की समाधि भी यहॉ न होकर जगन्नाथपुरी में है दूसरे इनका काल निर्धारण भी नही हो सका है, अगर कबीर के साथ इनके शास्त्रार्थ वाली घटना[2] को मान भी लिया जाये तो भी समस्या का समाधान नहीं हो पाताशास्त्रार्थ मे हारना या जीतना एक बात है और मठ स्थापित करना दूसरी बात। शास्त्रार्थ वाली कहानी की प्रामाणिकता सन्दिग्ध है क्योकि इसकी किसी अन्य ऐतिहासिक स्रोत से पुष्टि नहीं होती है।

निष्कर्षत, कहा जा सकता है कि कबीर के उपरान्त काशी के आस–पास क्षेत्र मे प्रचार–प्रसार हेतु केन्द्र बनाया गया होगा। सुरत गोपाल कबीर के मुख्य या प्रिय शिष्य रहे होंगे। इसी कारण 'गुरु माहात्म्य' मे कबीर के

---

1 दृश्यन्ते साम्प्रतदेशे, मठा मे अस्य पथ, खलु। शाखा मठाहि तस्यैव, सर्वे सन्तीति निश्चितम्। ब्रह्मलीन मुनि, सदगुण श्री कबीर चरित्रक पृष्ठ 322

2 डॉ0 एम0ई0 की कबीर एण्ड हिज फालोवर्स पृष्ठ 99

उपरान्त उनका नाम उल्लिखित मिलता है।[1] हो सकता है कि उन्होंने कबीर मत का घूम–घूम कर प्रचार–प्रसार किया हो और उनका देहावसान अन्यत्र कही हुआ हो। इसी कारण उनकी समाधि काशी मे न होकर जगन्नाथ पुरी में है।

कबीरचौरा शाखा का मठ काशी नगर मे वर्तमान मे कबीरचौरा मुहल्ले मे स्थित है। इसके प्रवर्तक कहे जाने वाले सत सुरत गोपाल महान् विद्वान् थे। 'भक्ति पुष्पाजलि' के रचयिता हरिशरण स्वामी के अनुसार इनका पूर्व नाम सर्वाजीत था। यह कुशाग्र बुद्धि के ब्राह्मण थे। इन्होंने अल्पकाल में अनेक शास्त्रो का ज्ञान प्राप्त कर लिया था। कबीर से शास्त्रार्थ मे परास्त होने पर इन्होंने उन्हे गुरु रूप मे स्वीकार कर लिया था। तभी से उनका नाम सुरत गोपाल या श्रुति गोपाल पड गया। सत सुरत गोपाल के आविर्भाव काल की खोज करना काफी कठिन है। इसके लिए इनकी कही जाने वाली रचना 'अमर सुखनिधान' का सहारा लिया जा सकता है। कहा जाता है कि इसकी रचना काल स0 1786 (सन् 1729 ई0) रहा होगा।[2] डॉ0 की ने निष्कर्ष निकाला है कि इस पुस्तक की भाषा कबीर के काल से डेढ सौ वर्षो बाद तक की नही है। डॉ0 की का कथन है कि उक्त ग्रन्थ के रचयिता सुरत गोपाल नही हो सकते क्योकि ये काफी पहले रहे है। इस बात की पुष्टि कि 'कबीरचौरा' गद्दी की स्थापना इनके द्वारा की गयी, उसके महन्तों वाले नामों की सूची से कुछ मेल खाकर हो जाती है। रे0 वेस्टकाट ने तो इस शाखा की गुरु परपरा की तालिका मे सुरत गोपाल का नाम क्रम से चौथा दिया है परन्तु यह विश्वसनीय नही है क्योकि यह तालिका अनुश्रुतियो पर आधारित है। कबीरपंथी ग्रन्थ 'गुरु माहात्म्य'

---

1 गुरू महात्म्य पृष्ठ 1–2
कबीर, सुरत गोपाल, ज्ञानदास, श्यामदास, लालदास, हरिदास, शीतलदास, सुखदास, हुलासदास, माधवदास, कोकिलादास, रामदास, महादास, हरिदास, शरणदास निर्मलदास, रगीदास, गुरू प्रसाद दास, प्रेमदास, रामविलास दास।

2 डॉ0 परशुराम चतुर्वेदी 'उत्तरी भारत की सत परपरा', पृष्ठ 281

के अनुसार इस शाखा की तालिका में सुरत गोपाल का नाम कबीर के बाद है जिसे स्वीकार किया जा सकता है। इस प्रकार सुरत गोपाल कबीर के बाद किसी समय काशी कबीरचौरा के मुख्य गुरु रहे होगे। डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी ने 'गुरु माहात्म्य' में दी गई तालिका को प्रामाणिक मानकर प्रत्येक गुरु का औसत गद्दीकाल 25 वर्ष अनुमान करके निष्कर्ष निकाला है कि सुरत गोपाल का गद्दीकाल 16वी शताब्दी के प्रथम चरण के आस–पास रहा होगा।[1] मठ के गुरुओ की गद्दी काल 25 वर्ष औसत निर्धारण वैज्ञानिक प्रतीत नही होता है। जब पथ स्थापित होने का समय ही नही ज्ञात है तो प्रत्येक गुरु का गद्दीकाल निर्धारित ही नहीं किया जा सकता। सत्यता तो यह प्रतीत होता है कि कबीर के शिष्यो ने पंथ निर्माण जैसी आडम्बर युक्त परम्पराओ से दूर हटकर कबीर की मानवतावादी शिक्षाओ के प्रचार–प्रसार के लिए विभिन्न क्षेत्रो को केन्द्र बनाया होगा। यही केन्द्र बाद में मठो में तब्दील होकर कबीरपथ की शाखाएँ कहलाये। काशी कबीरचौरा की गुरु प्रणाली मे क्रम को लेकर भी मतभेद पाया जाता है जहां विशप वेस्टकाट ने अपनी तालिका मे श्रुति गोपाल को चौथे स्थान पर रखा है वहीं 'गुरु माहात्म्य' के अनुसार गुरुओ के क्रम मे श्रुति गोपाल का क्रम कबीर के बाद है। वेस्टकाट के अनुसार गुरुओ का क्रम इस प्रकार है– श्यामदास, लालदास, हरिदास, श्रुति गोपाल, ज्ञानदास, शीतलदास, सुखदास, हुलासदास, माधवदास, कोकिलदास, रामदास, महादास, हरिदास, सुखदास, शरणदास, पूसदास, निर्भयदास, रंगीदास, गुरुप्रसाद दास।[2] गुरु माहात्म्य के अनुसार गुरुप्रणाली इस प्रकार है– कबीर, सुरत गोपाल, ज्ञानदास, श्यामदास, लालदास, हरिदास, शीतलदास, सुखदास, हुलासदास, माधवदास, कोकिलदास, रामदास, महीदास, हरिदास, श्यामदास, फूलदास, निर्मलदास, रंगीदास, गुरु

---

1 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीर पथ', पृष्ठ 164

2 वेस्टकाट, 'कबीर एण्ड कबीरपथ', पृष्ठ 92

प्रसाद दास, प्रेमदास, रामविलासदास।[1] दोनो तालिकाओ में गुरुओ के नाम प्राय समान है किन्तु उनके क्रम में अन्तर है। वेस्टकाट की तालिका विश्वसनीय नही प्रतीत होती क्योकि उन्होने किसी वैरागी द्वारा सुनी-सुनायी बातो के आधार तालिका प्रस्तुत की है। 'गुरु माहात्म्य' की तालिका की विश्वसनीय माना जा सकता है सुरत गोपाल के बाद के गुरुओं के बारे मे जानकारी का अभाव है।

कबीरचौरा शाखा का मठ आज भी इसी नाम के मोहल्ले मे उपस्थित है मुख्य स्थान पर एक मन्दिर का निर्माण कर दिया गया है, कहा जाता है कि वही बैठकर कबीर उपदेश दिया करते थे। पास मे ही कबीर की एक प्रस्तर मूर्ति स्थापित की गई है। प्रात काल और साध्य काल कबीर की मूर्ति की आरती ली जाती है और स्त्रोत पढ़े जाते है। पूर्व मे धर्मशाला की भॉति इमारत है, उसमे 'कबीर महाविद्यालय' नाम से एक सस्था भी चलती है। नीरू टोला जो कि कबीरचौरा मठ का दूसरा भाग है। विश्वास किया जाता है कि यहॉ नीरू और नीमा का घर था। नीरू टोला वाले विभाग मे बहुधा कबीरपथ की कुछ स्त्रियां भी रहा करती है जिन्हे "माई लोग" के नाम से पुकारा जाता है। नीरू टोला पश्चिम वाले इलाके में स्थित है। कबीरचौरा शाखा का सारा प्रबन्ध यहॉ के महन्त के अधीन है। इसकी सहायता के लिए दीवान, कोतवाल तथा पुजारी नामक विभिन्न कर्मचारी मौजूद है, जो बाहर से आने वाले यात्रियो से प्राप्त भेट तथा मठ की सम्पत्ति के मालिक भी कहे जाते है। इस मठ के तत्वावधान में प्रतिवर्ष एक सप्ताह तक मेला चलता है। इसी मौके पर 'जोत प्रसाद' की विधि सम्पन्न की जाती है तथा कबीरपंथ में नवीन व्यक्ति सम्मिलित भी किये जाते है। मठ के जीर्णोद्धार हेतु यहॉ खुदाई की गयी है। खुदाई मे खम्भे, प्रस्तर मूर्तियां, पुरानी हस्तलिखित पुस्तकें भी मिली है यह सामग्री सन्दूक में सुरक्षित रखी हैं।

---

1 गुरू माहात्म्य, पृष्ठ 1, 2

उपशाखाएँ :

काशी कबीरचौरा की कुछ उपशाखाएँ भी है। लहरतारा, मगहर, कबीर वाग, गया आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

1. लहरतारा :

यह बनारस के पश्चिम में आज भी स्थित है। लहरतारा कबीरचौरा से दो मील दूर स्थित है। कहा जाता है कि यही पर नीरू–नीमा को कबीर मिले थे। इस उपशाखा का मठ साधारण है और इसका प्रबन्ध भी इसकी मूलशाखा कबीरचौरा की ओर से ही होता है। कहा जाता है कि यहाँ एक मन्दिर बनवाया गया, जिसके अवशेष आज भी देखे जा सकते है। लहरतारा तालाब के मुख्य सम्भाग को सरकार ने अधिग्रहीत करके पुरातत्व विभाग के अन्तर्गत सुरक्षित कर रखा है।[1] सन्तो के आवास के लिए यहाँ पर कुछ कमरे भी बने हुए हैं। लहरतारा तालाब के सौन्दर्यीकरण के साथ–साथ कबीर के मूल उद्‌भव स्थल पर एक भव्य कबीर स्मारक बनाने की योजना प्रस्तावित है जिसका क्रियान्वयन हो चुका है।

2. मगहर :

वर्तमान मे यह स्थान उत्तर प्रदेश के बस्ती जिले में स्थित है। इस उपशाखा का सम्बन्ध कबीर की मृत्यु स्थान के साथ जोडा जाता है। मगहर के किनारे एक हिन्दू कबीरपथी मठ और दूसरा मुस्लिम कबीरपथी मठ है। दोनो मठो को एक दीवार विभाजित करती है। इसके विभाजन का कारण साम्प्रदायिक सघर्ष बताया जाता है। साम्प्रदायिक सघर्ष के कारण हिन्दू कबीर पथियों ने अपने लिए अलग मठ स्थापित कर लिया।[2]

---

1 सन्त विवेकदास, आचार्य 'कबीर तीर्थ 'एक झलक', पृष्ठ 7
2 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीर पथ', पृष्ठ 165

मुस्लिम कबीरपथी के बारे मे कहा जाता है कि इसका निर्माण विजली खॉ ने करवाया था। मठ में कबीर की समाधि पर रौजा बनवाया गया है। कबीर की समाधि के पास ही कमाल की भी समाधि है। रौजे पर उनके अनुयाइयो द्वारा पुष्पादि चढाये जाते है। मठ के गुरु को 'गनीकरन कबीर' कहा जाता है, जो अपना उत्तराधिकारी अपनी मृत्यु के पहले ही चुन लेता है। गुरु मास आदि नही खाते है। यहॉ के गुरुओं की तालिका नहीं प्राप्त होती जैसा कि काशी कबीरचौरा मे उपलब्ध है। यहॉ कबीर के अनुयायी उनको केवल पीर मात्र ही स्वीकार करते है।

हिन्दू कबीरपंथी मठ का निर्माण काफी विस्तार के साथ किया गया है। यहॉ का मठ बहुत भव्य बना हुआ है। इसका अपना आगन है जिसमे कबीर की समाधि एक पक्के कुएं के पास बनी है। इसका जीर्णोद्धार भी हो चुका है। जीर्णोद्धार आचार्य गुरुप्रसाद साहब ने सन् 1898 में किया था। सन् 1953 मे सेवकदास जी भासजी बघेला ने मन्दिर का निर्माण करवाया।[1] यह मठ पूर्णत कबीरचौरा काशी के नियत्रण मे है और यहॉ के पुजारी की नियुक्ति भी वही से होती है तथा वह प्रतिवर्ष कबीरचौरा काशी जाया करता है। इस मठ के उपलक्ष्य मे वहा पर एक मेला लगा करता है। इस मठ के पास ही उत्तर की ओर एक अन्य कबीरपथी मठ है। वह भी काशी कबीरचौरा के अधीन है। यहॉ पर पृथ्वी के प्रान्तर भाग मे एक स्थान बनाया गया है। जिसे कबीर साहब का साधना–स्थल भी कहा जाता है। यहॉ के लोगो का विश्वास है कि कबीर वही पर ध्यानस्थ होते थे।

---

1 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीर पथ', पृष्ठ 165

3. कबीर बाग गया :

कबीरचौरा काशी से सम्बन्धित यह महत्त्वपूर्ण स्थल है। यहाँ पहले कई फलों के बाग थे। रामरहस साहब उसी बाग मे रहते थे। रामरहस इसके प्रथम आचार्य माने जाते है। इनका जन्म गया से कुछ दूर टेकारी नामक गाव मे हुआ था। इनके पिता वहा के महाराजा मित्रजीत के मन्त्री थे। इन्होंने माता से तथा गया की राजकीय पाठशाला मे सस्कृत का अध्ययन किया वैवाहिक जीवन को न अपनाकर वैराग का मार्ग अपनाकर आजीवन साधु दशा मे रहे। इनकी विशेष रूचि वेदान्त दर्शन की ओर थी किन्तु किसी कबीरपथी साधु के प्रभाव मे आकर वे कबीर के भक्त बन गये।

उन्होने काशी मे कबीरचौरा के 14 वें आचार्य गुरु शरण साहब से 'बीजक' का अध्ययन किया था। उन्होने 'पंचग्रथी' नामक कबीरपथी ग्रथ की रचना की थी, इसमे उन्होने गुरुदयाल साहब और गुरुशरण साहब का नाम लिया है। 'पचग्रन्थी' मे दोनों सतों को गुरु रूप मे स्वीकार किया है। आपको राजा मित्रजीत सिह ने गया में एक बाग देकर तथा उसमे एक गुफा बनवाकर वहा रहने का आग्रह किया। वे विभिन्न क्षेत्रों में भ्रमण करते हुए भी गया के उस बाग मे रहे। आज भी उस बाग का नाम 'कबीर बाग' है, और काशी कबीरचौरा के अधिकार मे है।

4. बड़ौदा :

इस स्थान पर कबीर का मठ है परन्तु निश्चित समय अज्ञात है। इसके प्रथम महन्त कीर्तिनदास जी माने जाते हैं। इनके बाद क्रमश सहजरामदास जी, जयरामदास, रघुनाथ दास, धर्मदास एव जगमोहनदास[1] महत हुए है। इसकी उपशाखाएँ वासना (अहमदाबाद), अमडियारा (अहमदाबाद), उण्डेल (खम्भात)

---

1 डॉ0 केदार नाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीर पथ', पृष्ठ 342

आदि है। इस मठ की आर्थिक स्थिति अच्छी है। मठ की अपनी भूमि है जिसमे अच्छी पैदावार होती है। कुछ किराये के मकानो से भी इसकी आय बढती है जिससे मठ की व्यवस्था की जाती है।

5. नाडियाद :

यहॉ कबीर का मन्दिर है जिसकी स्थापना बडौदा के मन्दिर के बाद हुई थी। विष्णुदास यहॉ के प्रथम महन्त थे। इनके बाद क्रमश पूरनदास जी और पचदास जी हुए। पूरनदास ने भी एक कबीर मन्दिर बनवाया था।

6. अहमदाबाद :

काशी कबीरचौरा से सम्बन्धित यह अति नूतन उपशाखा है। इसके मगलदासजी प्रथम महन्त थे। इनके बाद अमृतदास जी महन्त हुए। इस मठ की स्थिति अच्छी नही है।

उपरोक्त उपशाखाओ के अतिरिक्त भी कई अन्य छोटे–छोटे मठ काशी कबीरचौरा से सम्बन्धित है किन्तु उनका विशेष महत्व नही है।

(ii) धनौती की भगताही शाखा :

भगताही शाखा बिहार के छपरा जिले में स्थित धनौती गॉव मे है। इसके प्रवर्तक भगवान गोसाई माने जाते है। इनके सम्बन्ध मे अनेक भ्रॉतिया विद्यमान है। इनके सम्बन्ध मे प्रामाणिक जानकारी का अभाव हैं। कबीर के साथ इनका भी सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। कहा जाता है कि ये पहले वैष्णव मतानुयायी थे बाद में कबीर के विचारो से प्रभावित होकर उनकी शिष्यता ग्रहण कर ली।[1] कबीर वह समय–समय पर कबीर मुख से निकलने वाले शब्दो या उपदेशो को लिपिबद्ध भी कर लिया करते थे। कबीर साहब के बाद इन्होने वैसी

---

1 सत अभिलाषदास, 'कबीर दर्शन', पृष्ठ 262

बानियो को सग्रहीत करके एक पृथक 'गुटका' तैयार किया जिसे कुछ लोगो ने कबीर का मूलग्रन्थ 'कबीर बीजक' ठहराया है। इनको अहीर जाति का बताया गया है। ये मूलत पिशौराबाद (बुन्देलखण्ड) के निवासी थे बाद मे बिहार मे चले गये। बिहार आकर इन्होने अपने अनुयाइयो का सगठन करके नया पथ चलाने का प्रयत्न किया जो 'कबीरपंथ' की भगताही शाखा के नाम से प्रसिद्ध हुआ। प्रामाणिक आधार पर इनके सम्बन्ध में कुछ कहना संभव नही है। क्योकि यह सब जानकारी जनश्रुतिया पर आधारित होने के कारण विश्वसनीय नही है।

भगवान गोसाई के काल के बारे में भी प्रामाणिक रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। डॉ0 एफ0ई0 की ने जनश्रुति के आधार पर धनौती के गुरुओ की तालिका प्रस्तुत की है।[1] डॉ0 परशुराम चतुर्वेदी ने इसी तालिका को आधार बनाकर प्रत्येक गुरु का औसत गद्दी काल 25 वर्ष निर्धारित करके भगवान गोसाई का काल सवत 17वी शताब्दी विक्रमी का अतिम चरण माना है।[2] दूसरी ओर भक्तिपुष्पाजलि मे उल्लिखित तालिका को आधार बनाया जाये तो पहले की सभी मान्यताये सन्देह के घेरे मे आ जाती हैं। दोनो तालिकाओं की तुलना करने पर उनमें काफी अन्तर दिखाई देता है। डॉ0 'की' की तालिका को मानना सभव नहीं है क्योकि उसका आधार ही ज्ञात नही है। धनौती मठ मे भक्तिपुष्पाजलि मे दी गई तालिका[3] को मान्यता प्राप्त है। डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी ने प्रत्येक गुरु का औसत गद्दीकाल 25 वर्ष मानकर भगवान गोसाईं का काल 16वीं शताब्दी ई0 माना है, परन्तु तब समस्या यह आ जाती है तब वे कबीर

---

1 एफ0ई0 की 'कबीर एण्ड हिज फालोवर्स', पृष्ठ 106
भगवान गोसाई, अज्ञात नाम शिष्य बनवारी, भीषम, भूपाल, परमेश्वर, गुणपाल, सीसमन, हरनाम, जयवन, स्वरूप, साधु रामरूप।

2 डॉ0 परशुराम चतुर्वेदी, 'उत्तरी भारत की सत परपरा', पृष्ठ 280

3 *हरिशरण गोस्वामी, भक्तिपुष्पाजलि, भगवान (गोस्वामी)*, घनश्याम, उद्धोरण, श्रीदमन, गुणाकर, गणेश, कोकिल, बनवारी, श्री नयन, भीष्म, भूपाल, परमेश्वर, गुणपाल, शेषमणि, जयमन, हरिनाम, स्वरूप, रामरूप, रघुनन्दन, रामधारी।

सुरत गोपाल के काल के सिद्ध हो सकते हैं और धर्मदास का समय लगभग 17वी शताब्दी और समस्या पैदा कर देता है। इस स्थिति मे धर्मदास के 175 वर्ष अनन्तर भगवान गुसाईं की कल्पना करना सभव नही है। धर्मदास को भगवान गुसाईं का का समकालीन भी नहीं सिद्ध किया जा सकता। इस प्रकार जो भी प्रमाण उपलब्ध है वे सभी परस्पर विरोधपूर्ण जानकारी देते हैं। ऐसी स्थिति में यही कहा जा सकता है कि कबीर के अनुयायी रहते हुए 16 वी शताब्दी के किसी चरण मे भगवान गोसाईं ने धनौती मे कबीर मठ स्थापित किया होगा।

धनौती शाखा मे कबीरपथी ग्रथो की अनुपलब्धता है केवल 'बीजक' ही महत्वपूर्ण है। यहॉ के कबीर के अनुयाइयो में भक्ति भावना की अधिक प्रधानता देखने को मिलती है। रामचरितमानस का भी पाठ किया जाता है। वे कबीर को केवल सत मानते है न कि कोई अवतार। यहॉ के कबीरपथी हिन्दूधर्म से अधिक प्रभावित दिखाई देते हैं। धनौती की गुरु परंपरा काफी लम्बी है। इसमे सद्गुरु कबीर के बाद 1 श्रीभगवान गोस्वामी, 2 श्री घनश्याम गोस्वामी, 3 श्री उद्धोरण गोस्वामी, 4 श्री दमन गोस्वामी, 5. श्री गुणाकर गोस्वामी, 6 श्री गणेश गोस्वामी, 7 श्री कोकिल गोस्वामी, 8. श्री बनवारी गोस्वामी, 9 श्री नयन गोस्वामी, 10 श्री भीष्म गोस्वामी, 11 श्री भूपाल गोस्वामी, 12. श्री परमेश्वर गोस्वामी, 13 श्री गुणपाल गोस्वामी, 14 श्री शेषमणि गोस्वामी, 15 श्री जयमन गोस्वामी, 16 श्री हरिनाम गोस्वामी, 17 श्री स्वरूप गोस्वामी, 18 श्री रामरूप गोस्वामी, 19 श्री रघुनदन गोस्वामी, 20 श्री रामधारी गोस्वामी, 21 श्री मुनेश्वर स्वामी, 22 श्री गुरुप्रसाद गोस्वामी।

उपशाखाएँ :

धनौती की भगताही शाखा के दो मठ क्रमश बडा और छोटा कहकर प्रसिद्ध है। इसकी अनेक उपशाखाओ के रूप मे अनेक मठ बिहार राज्य मे स्थापित किये गये है। कुछ सारन जिले मे है, कुछ मुजफ्फरपुर जिले मे तथा कुछ चपारन जिले मे है। धनौती का बडा मठ सबसे सुव्यवस्थित और आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न है। यहाँ की शाखाएँ भारत मे यत्र–तत्र फैली है। लहेजी, मानसर, तुर्की (मुजफ्फरपुर) नौरगा, दामोदरपुर, चनावे छपरा, तछवा, बडहरवा, सवैया वैजनाथ (मोतीहारी) शेखवना, (बेतिया), समस्तीपुर, आदि के नाम लिये जा सकते है। धनौती की तरह लहेजी और नौरंग मे विशाल मठ है।

(iii) छत्तीसगढ़ी शाखा :

छत्तीसगढी शाखा का अन्य शाखाओ की अपेक्षा अधिक प्रचार–प्रसार हुआ है। इस शाखा मे विशाल साहित्य विकसित हुआ है। इसके प्रवर्तक धनी धर्मदास माने जाते है। साहित्य में मुक्तामणि नाम से लेकर सुरत सनेही नाम के सम्बन्ध मे अनेक चमत्कारपूर्ण घटनाओ का समावेश हुआ है किन्तु हक्कनाम के समय से परस्पर कटुता भी बढती गयी जिसके कारण मठ के अधिकार के लिए उच्च न्यायालय तक भी जाना पडा और सम्बन्ध विच्छेद की परपरा का भी श्रीगणेश हो गया। प्रभाव की दृष्टि से भी इस शाखा का विशेष महत्व है। नाना प्रकार के वाह्योपचारो को इसमें प्रश्रय मिला है। इसके साहित्य पर तन्त्र तथा पुराण ग्रन्थो का अत्यधिक प्रभाव पडा है। ज्ञान सागर, अनुरागसागर, खुदवानी दीपक सागर, लक्ष्मण बोध आदि अनेक ग्रन्थ उल्लेखनीय है। धर्मदास जी के 42 वश वाले शब्द की अनेक व्याख्याये हो जाने पर 'विद वंश' और नाद वश नाम के वर्ग बन गये। 'विन्द वश' के अन्तर्गत गृधमुनि साहब प्रतिष्ठित हुए और 'खरसिया' मे नाद वश की गद्दी आरम्भ हुई। विद वश के महन्तो मे पैतृक

अधिकार को विशेष महत्व प्राप्त है किन्तु 'नाद वश' व 'वचनवश' में इसकी महत्ता नही है।[1]

कवीरपथ की इस शाखा के प्रारम्भ करने का समय और विभिन्न गुरुओ का समय ज्ञात करना काफी कठिन है। ऐतिहासिक साक्ष्यों की कमी के कारण विद्वानो ने अनुमान का अधिक सहारा लिया है। अगर इस शाखा के प्रवर्तक धर्मदास का सही–सही समय ज्ञात हो जाता तो कम से कम इसके आविर्भाव का काल निर्धारित हो जाता। कबीर पथियों की काल्पनिक धारणाये इस सम्बन्ध मे बाधा उत्पन्न करती रही है, जैसे 'श्री सदुगुरु कबीर महिमा' मे धर्मदास का देहान्त 1520 सवत (सन् 1463 ई0) स्वीकार करना, आसा सागर मे धर्मदास का देहान्त 1570 सवत (सन् 1513ई0) स्वीकार करना कबीर का निधन 'कबीर चरित्रबोध' मे 1575 सवत (सन् 1581 ई0) स्वीकार करना तथा युगलानद बिहारी की 'कबीर कथा' मे कबीर द्वारा धर्मदास की प्रकट होकर दर्शन देना आदि। जी0एच0वेस्टकाट और डॉ0 एफ0ई0 की ने इस सम्बन्ध मे काफी कार्य किया है। वेस्टकाट ने प्रत्येक गुरु का औसत गद्दीकाल 20 वर्ष मानकर चूरामणि का गद्दीकाल संवत 1751 (सन् 1694 ई0) माना है।[2] अगर इसे स्वीकार कर लिया जाये धर्मदास का समय सन् 1674 ई0 है। इसी प्रकार की के मत के मतानुसार प्रत्येक गुरु का औसत गद्दीकाल 25 वर्ष स्वीकार कर लिया जाये तो चूरामणि का गद्दीकाल सन् 1644 और धर्मदास का समय सन् 1619 ई0 है।[3] इस सम्बन्ध मे डॉ0 केदार नाथ द्विवेदी का प्रयास काफी सराहनीय है। डॉ0 द्विवेदी को कुछ पत्र तथा पजे प्राप्त हुए है जिनकी सहायता से उन्होने इस शाखा का सही काल निर्धारित करने का प्रयास किया है।[4] यह पजे प्रत्येक तीसरे वर्ष बदले जाते है इसी कारण इन्हे प्रामाणिक माना गया है। परन्तु समस्या यह है

1 डॉ0 परशुराम चतुर्वेदी, 'उत्तरी भारत की सत परम्परा', पृष्ठ 93
2 वेस्टकाट, 'कबीर और कबीर पंथ', पृष्ठ 93
3 डॉ0 एफ0ई0 की, 'कबीर एण्ड हिज फालोवर्स', पृष्ठ 99
4 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीर पंथ', पृष्ठ 171

कि पंजे की प्रथा प्रमोद गुरु के समय से ही चली थी और पत्र भी इसी समय से प्राप्त होते है इनसे पहले के गुरुओ का काल निर्धारित करने में भी यह सफल हो सकते है।

छत्तीसगढी शाखा का उद्‌भव काल को ज्ञात करने मे छत्तीसगढी शाखा के पजे और पत्र भी सहायक हो सकते है। प्रमोद गुरु से पहले धर्मदास, चूरामणि, सुदर्शन नाम और कुलपतिनाम हुए हैं। पंजो और पत्रो के अनुसार प्रमोद गुरु का काल सम्वत 1730 (सन् 1673 ई0) के लगभग रहा होगा। प्रमोद गुरु वालापीर का काल 1752 का सग्राम पुरा (सूरत) के महन्त शोभादास के नाम पत्र[1] से निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि स0 1752 के कुछ पहले वे गद्दीशीन हुए होंगे और उनका गद्दी काल लगभग सम्वत 1730 (सन् 1673 ई0) रहा होगा। अगर प्रत्येक गुरु का औसत गद्दी काल 25 वर्ष स्वीकार कर लिया जाये तो प्रमोदगुरु के गद्दी काल के लगभग 100 वर्ष पहले धर्मदास गद्दीसीन रहे होगे। अत. छत्तीसगढी शाखा का उद्‌भव 17वी शदी के द्वितीय चरण मे हुआ होगा। धर्मदास ने 50 वर्ष की अवस्था में आस–पास इसकी स्थापना की होगी तब वह कबीर के सामयिक नही ठहरते। हो सकता है कि धर्मदास ने 17वी सदी मे इसकी स्थापना हो और वे कबीर की शिक्षाओ का इस क्षेत्र मे प्रचार–प्रसार करना चाहते हों। 'कबीर दर्शन' मे अभिलाषदास ने लिखा है, कि विद्वानों का मानना है कि धर्मसाहेब (धनी धर्मदास) कबीर देव के शरीरोपरान्त के करीब सौ वर्ष बाद हुए हैं। उन्हे कबीर के साक्षात दर्शन नही हुए बल्कि जैसे मदन साहेब ने भावना मे कबीर के दर्शन किये वैसे धर्म साहब ने किये।[2] इसकी पुष्टि में कुछ वानियो का उदाहरण दिया जा सकता है।[3]

---

1 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीर पथ', पृष्ठ 171

2 सत अभिलाषदास कबीर दर्शन पृष्ठ 582

3 जिद रूप जब धरे शरीरा, धरमदास मिल गये कबीरा।। अमर सुधनिधान।। साहेब कबीर प्रभु मिले विदेही। झीना दरस दिखाइया।। वानी पृष्ठ 521 (उ0मा0 उदधृत की0स0 परम्परा, पृष्ठ 283)

इस शाखा के प्रवर्तक धनी धर्मदास का पूर्व नाम जुडावन था। इनकी पत्नी आमीन थी और दो पुत्र नारायणदास और चूडामणि भी थे। नारायण दास की भक्ति कबीर के प्रति न थी जबकि आमीन और चूडामणि की भक्ति भावना मे कबीर ही थे। जुड़ावन कसौधन बनिया जाति से सम्बन्धित थे। इनका निवास स्थान वान्धौगढ़ (मध्य प्रदेश) था पहले ये वैष्णव मतानुयायी थे और बाद मे कबीर की विचारधारा से प्रभावित होकर उनके अनुयायी बन गये। धर्मदास साहेब के जीवनवृत्त का वर्णन अनेक कबीरपथी ग्रन्थो के अन्तर्गत विस्तार से किया गया है। कुछ रचनाये कबीर और धर्मदास के सवाद रूप में चमत्कारिक शैली मे है। स्वय धर्मदास की अनेक रचनाएँ इनकी वाणीग्रन्थ मे सग्रहित है जो भक्ति से ओत–प्रोत है। कबीर को इन्होने न केवल एक गुरु अपितु इष्टदेव के रूप मे सम्मान दिया है। कबीर के लिए कहीं–कही 'पिया' और 'पीव' जैसे शब्दो का प्रयोग किया है। उन्होंने कहा है कि "उस अनुपम" सत ज्ञानी'का रूप देखकर मै उसकी ओर आकृष्ट हो गया तथा उसे 'अपना' पहचान लेने पर उसके द्वारा अपना लिया भी गया। मेरे सारे कर्म जलकर भस्म हो गए मैने 'प्रेम की वानी' पद की तथा मेरा 'आवा जानी ' भी मिट गयी।

> "मोरे पिया मिले सतज्ञानी । टेक।
> ऐसन पिय हम कबहुं न देखा, देखत रुप लुभानी।
> आपन रुप जब चीन्हा विरहिन, तब पिया के मनमानी।।
> कर्म जलाय के काजल कीन्हा, पढ़े प्रेम की बानी।
> धर्मदास कबीर पिय पाये, मिट गई आवा जानी ।।[1]

इस प्रकार धर्मदास कबीर के परम भक्त थे। वह एक बहुत योग्य पुरुष थे। इनके व्यक्तित्व से कबीर के आदोलन को विशेष प्रेरणा मिली होगी। इनके परिवार के सदस्यों का भी इस सम्बन्ध मे योगदान रहा है। इनके छोटे पुत्र चूड़ामणि ने 'कुदुरमाल' मे जाकर अपनी गद्दी की स्थापना की जो वश परम्परा

1 'धनी धर्मदास की बानी', पृष्ठ 3

का मुख्य केन्द्र बन गया। कुदुरमाल के बाद इनकी गद्दिया रतनपुर, मडला, धमदा, सिघोडी, कवर्धा आदि रही है।

धर्मदास की परम्परा मे कई गुरु हो चुके हैं। उनके नाम है। (1) धर्मदास, (2) चूडामणि, (3) सुदर्शन, (4) कुलपति, (5) प्रमोद, (6) केवल, (7) अमोल, (8) सुरत सनेही, (9) टक्कनाम, (10) पाकनाम, (11) प्रगटनाम, (12) धीरजनाय, (13) अग्रनाम, (14) दयानाम, (15) गृधनाम, (16) श्री प्रकाश मणि।

छत्तीसगढी शाखा के सम्पूर्ण इतिहास को दो भागो में बाटा गया है। चूरामणि (मुक्तमणि) के समय से लेकर सुरति सनेही नाम तक पूर्वार्द्ध और हकनाम से लेकर गृन्ध मुनि और प्रकाशमणि तक उत्तरार्द्ध काल माना जा सकता है। पूर्वार्द्धयुग मे चमत्कारपूर्ण कहानियो का बोल–बाला है। धर्म गुरुओ के चमत्कारपूर्ण कार्यों से प्रभावित होकर लोग कबीरपथी महात्माओं की ओर आकृष्ट हुए होगे।

धर्मदास के बाद गुरुपरपरा मे मुक्तामणि या चूडामणि को स्थान दिया गया है।[1] उनको धर्मदास का छोटा पुत्र बताया जाता है। उत्तराधिकार को लेकर उनका बडे भाई नारायणदास से सघर्ष हुआ था जिसमे मुक्तामणि सफल हुए। असफल होने पर नारायण दास ने उनको समाप्त करने का षडयन्त्र रचा, कहा जाता है कि मुक्तामणि या उनके तलवार चलाने का असर ही नही हुआ और अन्तत नारायणदास को क्षमा याचना मांगनी पड़ी। कहा जाता है कि तवर वशी राजा उनका शिष्य था। कुदुरमाल मे उनकी छोटी स्त्री से सुदर्शन का जन्म हुआ जिन्हे मुक्तामणि के निधन के अनन्तर गद्दीपर बैठने का अधिकार मिला।

---

1 डॉ0 केदार नाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीर पथ', पृष्ठ 173

सुदर्शन के उत्तराधिकारी, उनके पुत्र 'कुलपतिनाम' हुए। जहा सुदर्शन के बारे मे अनेक चमत्कारपूर्ण घटनाओ का उल्लेख मिलता है। वही 'कुलपतिनाम' के सम्बन्ध मे इनका अभाव दिखाई देता है। इनके उत्तराधिकारी व पुत्र प्रमोद गुरु (बालापीर) और घासीदास के सम्बन्ध में जरूर अनेक दत कथाये सुनने को मिलती है। प्रमोद गुरु के सम्बन्ध में उल्लेखनीय है कि उनके पास अच्छी नस्ल के काबुली घोडे रहते थे। घोडो को राजा विम्ब ने प्राप्त करना चाहा, गुरुद्वारा इन्कार करने पर उसने गुरु को मारने का षड्यन्त्र रचा परन्तु वह बच गये। कहा जाता है कि प्रमोद गुरु के चमत्कार से अकबर भी प्रभावित हुआ था। अकबर ने उनसे प्रभावित होकर उन्हे 'बालापीर' नाम दिया। परन्तु इस घटना का विश्वसनीयता पर तब प्रश्न चिन्ह लग जाता है जब अकबर और इनके काल पर विचार करते है, अकबर का काल सम्वत् 1613 से संवत् 1662 (सन् 1556 ई0 से सन् 1605ई0) तक माना जाता है, जबकि प्रमोदगुरु का काल 18वीं सदी के लगभग रहा होगा, हो सकता है कि प्रमोद गुरु की किसी अन्य सम्राट (जैसे अकबर–द्वितीय 1806–1837 ई0) से भेट हुई हो। प्रमोद गुरु के उपरान्त उनके पुत्र केवल नाम और उनके बाद उनके पुत्र अमोल नाम गद्दीनशीन हुए। संभवत: अकबर द्वितीय 1806–1837 ई0 अमोल नाम के उत्तराधिकारी पुत्र सुरत सनेही के बारे मे अनेक दत्त कथाये मौजूद है। उन्होने सिंधौड़ी के रावत मालगुजार के मृतक पुत्र को जीवनदान दिया था। इस प्रकार पूर्वाद्ध काल मे चमत्कारपूर्ण घटनाओ के गुरुओ के साथ जोडा गया है। इस काल मे कुदुरमाल (रतनपुर, मंडला सहनिया, धमधा, नानापेट, पूना, सिंघोडी, गरौठा, जामनगर आदि अनेक स्थानो पर कबीरपंथ की शाखाएँ भी स्थापित हुई।

छत्तीसगढी शाखा का उत्तरवर्ती काल का उत्तरार्द्ध युग सघर्ष का काल कहा जाता है। सुरत सनेही के उत्तराधिकारी हसदास जिन्हे दासीपुत्र भी कहा जाता है, हक्कनाम से घोषित हुए। दासीपुत्र होने के कारण इनका प्रबल विरोध

हुआ। सेवादास ने स्वय उत्तराधिकारी बनने का असफल प्रयास किया। जब नागपुर के राजा ने हक्कनाम के पक्ष मे निर्णय दिया तो हटकेसर के महन्त ने छत्तीसगढी से सम्बन्ध विच्छेद कर लिया और सेवादास ने भी नदिया में अपनी अलग शाखा स्थापित कर ली। हक्कनाम के बाद उनके पुत्र पाकनाम साहब गद्दीसीन हुए। वे मेधावी पुरुष थे उन्होंने पंथ की प्रगति के लिए अनेक नियम बनाये इनके समय मे अफ्रीका तथा अन्य कतिपय समीपवर्ती टापूओ मे कबीरपंथ का प्रचार–प्रसार हुआ उन्होने पथ मे एकता लाने का प्रयास किया। इनके बाद इनके दो पुत्रो धीरज और उग्रनाम के बीच पुन. उत्ताधिकार को लेकर सघर्ष हुआ अन्तत न्यायालय के निर्णयानुसार धीरज उत्तराधिकारी बने। धीरज की मृत्यु के बाद 'उग्रनाम' ने गद्दी सभाली। इनके समय कबीर के अनुयाइयो का एक विराट सम्मेलन हुआ, जो 5 माह तक चलता रहा। इनके समय मे अनेक नवीन ग्रन्थो की रचना शुरू हुई तथा पुराने ग्रन्थों का सकलन किया गया। महन्त शम्भूदास जी इन्दौरी कृत 'कबीर सिद्धान्त–बोधिनी' का प्रकाशन हुआ तथा युगलानद बिहारी ने 'कबीर सागर' तथा 'कबीरोपासना पद्धति' का सम्पादन करके इनका काफी प्रचार–प्रसार किया। संत समागम का आयोजन करके कबीर–पथी ग्रन्थो के महत्व को समझा गया। दामाखेडा मे 'कबीर धर्मप्रकाश प्रेस'(खोला गया, जिसमें कबीरपथी साहित्य का प्रकाशन शुरू किया गया। दामाखेडा प्रेस आज भी कबीर साहित्य को प्रकाशित करके उनकी शिक्षाओ का प्रचार–प्रसार कर रहा है। इनके दीर्घकालीन प्रभाव से कबीरपथ के इतिहास को सकलित करने मे काफी सहायता मिली है।

दयानाम साहेब के उपरान्त उनके कोई पुत्र न होने के कारण एक बार पुन अशान्ति फैली। पथ की व्यवस्था के लिए कुदरमाल मे एक सभा हुई।[1] पंथ की भावी व्यवस्था हेतु कबीर पंथियो द्वारा चुने गये 24 व्यक्तियों की समिति का

[1] डॉ0 केदार नाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीर पथ', पृष्ठ 177

निर्माण किया गया काशीदास प्रथम निर्वाचित अधिकारी हुए। इसके उपरान्त खरसिया मे नादवश की स्थापना हुई। छत्तीसगढी शाखा में गन्ध्रमुनि नाथ के नाम से पजे चलने के बावजूद माता साहिबाएं ने मठ की व्यवस्था सभाली जो एक महत्वपूर्ण घटना रही है। वर्तमान युग मे छत्तीसगढी शाखा की सम्पत्ति दो भागो मे विभक्त है। कुछ उपशाखाएँ खरसिया की नादवश या वचनवंश से और कुछ दामाखेडा से सम्बन्धित है।

इस प्रकार छत्तीसगढ़ी शाखा के इतिहास से ज्ञात होता है कि यहाँ आचार्यों के लिए योग्यता के बजाय पैतृक अधिकार महत्वपूर्ण योग्यता रहा है। योग्यता की अनदेखी के कारण ही उत्तरार्द्ध मे इस शाखा मे घृणा और द्वेष का वातावरण बना। कुछ अनुयाइयो ने अलग–अलग गद्दियां स्थापित की है और अपनी आवश्यकतानुसार अनेक प्रकार के नियम भी बनाये गये।

इस शाखा की मान्यता पौराणिक रही है– "कबीर साहेब परमात्मा की भाँति युग–युग मे अवतार लेते है। एक युग मे अनेक बार भी वे अवतार ले सकते है। रामकृष्ण, ईसा, मुहम्मद आदि समस्त गणमान्य पुरुष सद्‌गुरु कबीर के शिष्य है। चारो वेद कबीर साहेब की वाणी है।"[1] इस शाखा मे सृष्टि की उत्पत्ति की अनोखी कल्पना है। कबीर साहेब ही सतलोक, सत्पुरुष, ईश्वर है। 'कबीर मंशूर' इस शाखा का महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। चौका विधान इस शाखा की ये वाह्योपचारिक पूजा है जिसे कर्मकाण्ड के रूप मे समझा जा सकता है।

उप शाखाएँ :

कबीरपथ की छत्तीसगढी शाखा की भारत मे ही नही बल्कि विदेशो मे भी अनेकों उपशाखाएँ फैली हुई है। फीजी, ट्रिनिडाड, अफ्रीका, मारीशस, नेपाल आदि देशों मे इस शाखा की उपशाखाएँ रही है। भारत में इस शाखा की

---

1 अभिलाषदास, 'कबीर दर्शन', पृष्ठ 583

उपशाखाएँ कुदुरमाल, रतनपुर (विलासपुर), मंडला (मध्य प्रदेश), मऊ, सहनिया (छतरपुर), धमधा (मध्य प्रदेश), नानापेठ (पूना), सिघोडी (छिदवाडा), गरौठा (बुन्देलखण्ड), जामनगर, कवर्धा, दामाखेडा, बमनी, खरसिया, कबीर मदिर सागर, खैरा (बिहार), सीयाबाग (बडौदा), सूरत, नागपुर, दार्गिया मुहल्ला सूरत, जालौन, धनौरा, छोटी बडौनी, मौवी, अहमदाबाद आदि मे उल्लेखनीय है।[1] कुछ शाखाओ ने इससे अलग होकर अपना स्वतत्र अस्तित्व रखने का प्रयास किया है। छत्तीसगढी उपशाखाओ मे से कुछ का उल्लेख किया जा रहा है।

1. कुदुरमाल

कुदुरमाल मध्यप्रदेश मे कबीरपंथ का महत्वपूर्ण केन्द्र रहा है यहाँ पर कबीर एक का मठ स्थित है। मध्य प्रदेश मे स्थित इस मठ मे कबीर के चित्र एव खडाऊ रखे गये है, जिनकी आराधना की जाती है। कबीरपथी महात्माओ के आसन प्राणायाम के लिए एक दो मजिला भवन भी स्थित है। यहाँ कुछ कबीरपंथी सतों की समाधियां भी हैं। इस मठ के प्रथम आचार्य मुक्तामणि नाम साहब माने जाते है। कहा जाता है कि इन्होंने मुक्तामणि नाम से एक पंथ और अपने दूसरे नाम चूरामणि नाम से वश चलाया। यहाँ के 16 गुरुओ की जानकारी मिलती है, यह है – मुक्तामणि, अमी स्वामी, किसुन स्वामी, मनोहर स्वामी, निर्मल स्वामी, लक्ष्मण स्वामी, गरीब स्वामी, अम्बर स्वामी, गेषा स्वामी, विसुन दयाल स्वामी, हरिनाम स्वामी, सुखदेव स्वामी, ज्ञानी स्वामी। इनमे सुखदेव स्वामी ने सिहासन का घेरा बनवाया और 'सुख सागर' नामक एक तालाब भी खुदवाया।

---

1 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीर पन्थ', पृष्ठ 342 से 49

2. रतनपुर

रतनपुर का कबीरपथी मठ भी मध्य प्रदेश मे स्थित है रतनपुर का कबीरपंथी गठ काफी प्राचीन है। इसी कारण जीर्ण शीर्ण अवस्था मे हैं एकमात्र कमरे मे ही पुजारी रहकर उसी मे प्रतिष्ठित कबीर के चित्र का पूजन करते है। यहाँ माघ पूर्णिमा को हर वर्ष कबीर मेला लगता है। रतनपुर मे कबीर और सुदर्शन नाम साहब की समाधिया है। धारणा है कि सुदर्शन साहब का यहाँ ननिहाल था और वह यहाँ आकर रहे थे।

3. मण्डला

मध्यप्रदेश मे नर्मदा नदी के तट पर स्थित मडला मे कबीर का एक मठ है। कहा जाता है कि प्रमोद गुरु ने यहाँ के राजा के मृतक पुत्र को जीवित कर दिया था, इसी से प्रसन्न होकर राणा ने गुरु के लिए भवन बनवाया। यहाँ नर्मदा नदी के तट पर मुक्तामणि घाट, कबीर घाट, बालापीर घाट अभी देखे जा सकते है। वर्तमान में यहाँ केवल एक पुजारी रहते हैं।

4. मऊ–सहनिया

मऊ–सहनिया मे कबीर का मदिर स्थित है। यह स्थान मध्य प्रदेश की छतरपुर रियासत मे स्थापित किया गया था। इसके प्रथम आचार्य संत जी महराज माने जाते हैं। ये प्रमोद गुरुवालापीर के शिष्य थे। इसके गुरुओ मे पीताम्बर दास, कृपादास, केसरीदास, रामदास, दयालदास, माधवदास, हरीदास और पचमदास उल्लेखनीय है। इसकी शहदापुर, फैजाबाद, कर्णपुर, गोरखपुर, खुर्जा, बुलन्दशहर, चित्रा, बरेली, मयादास गद्दी दिल्ली, बडी मऊ गद्दी (झासी), ताजपुर (सागर) तथा अहमदाबाद बडौदा आदि उपशाखाएँ भी मौजूद है जैसे शहदापुर, फैजाबाद, कर्णपुर, गोरखपुर, खुर्जा, बुलंदशहर, चित्रा, बरेली, ताजपुर आदि।

5. धमधा

धमधा मे कबीरपथ की स्थापना केवलनाम ने की थी। उनके पुत्र का जन्म धमधा मे ही हुआ था। इनकी मृत्यु किसी के जहर देने के कारण यही हुई थी। केवल नाम की समाधि धमधा में ही है। इस मठ का प्रबन्ध धर्मदास के वश के व्यक्तियों की देख–रेख मे ही होता है।[1]

6. नानापेठ :

नानापेठ मे स्थित कबीर मदिर महाराष्ट्र के पूना जिले में पडता है, इस मठ की प्रतिष्ठा योगराज साहब उर्फ जगली बाबा ने की थी। वे प्रसिद्ध योगी थे। कहा जाता है कि इन्होने शेर को बैल के स्थान पर गाडी मे जोत दिया था, इसी कारण इन्हें जगली बाबा कहा जाने लगा। इन्होने जीवित समाधि ले ली थी। इनकी समाधि नानापेठ मे स्थित है। जगली बाबा के बाद मठ में अव्यवस्था फैल गयी, बाद मे बाबूदास ने इसे सुधारा और योग्यतापूर्ण तरीके से कार्य किया। उन्होंने 'कबीर मशूर' नामक ग्रन्थ का मराठी मे अनुवाद किया था। इस मठ की शोलापुर, कोल्हापुर आदि स्थानो पर उपशाखाएँ फैली हुई है।

7. सिंघोड़ी

सिघोडी मठ मध्य प्रदेश के छिदवाडा जिले मे इसी नाम के गाव मे स्थित है। कहा जाता है कि सूरत सनेही नाम साहब ने सिघाडी मे रावत मालगुजार के मृतक पुत्र को जीवित कर दिया था। राजा ने उनके लिए मठ बनवाया, जिसमे कबीर की चरण पादुका रखकर पूजा की जाने। सुख सनेही नाम की समाधि भी यही पायी जाती है। इस मठ की व्यवस्था की देख–रेख धर्मदास के वश मे उत्पन्न व्यक्तियो द्वारा की जाती है।

---

1 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीर पथ', पृष्ठ 344

8. गरौठा

गरौठा का कबीर मठ उत्तर प्रदेश के बुन्देलखण्ड क्षेत्र मे स्थित है। इसके प्रथम महन्त मदन दास माने जाते है, वे पहले वैष्णव मतानुयायी थे, परन्तु बाद में सूरत सनेही से प्रभावित होकर कबीर के मतानुयायी बन गये और गरौठा मे रहने लगे। इसमें मदन दास के बाद अनंदीदास, प्रताप दास, मानिक दास, दयालदास, सन्तोष साहब महन्त हुए हैं।

9. जामनगर

यहाँ पर कबीर आश्रम है।[1] यहाँ पर कबीर आश्रम की स्थापना प्रथम आचार्य खेमसुतदास ने की थी। आठवे आचार्य राम स्वरूपदास ने कबीर आश्रम का निर्माण करवाया था। आश्रम के सामने एक प्रारंभिक पाठशाला भी है। मठ की ओर से 'सत्य कबीर सीनियर लोक शाला' का भी निर्माण कराया गया है जिसमें अनेक छात्रो को शिक्षा दी जाती है। इस आश्रम मे कबीर साहब की प्रस्तर मूर्ति भी प्रतिष्ठित है।

10. दामाखेडा

मध्य प्रदेश राज्य मे स्थित दामाखेडा मे कबीरपंथ का एक विशाल मठ है, यहाँ आचार्यो और माता साहिबाओ के रहने के लिए अलग–अलग भवन बने है। साधुओं के आवास के लिए एक बडा सा बरामदा है जिसे 'कचेहरी' कहा जाता है। उग्रनाम साहब और दयाराम साहब की समाधियाँ और कबीर साहब का मन्दिर भी, उपस्थित है। यहाँ शाम को आरती होती है। आरती के बाद झंडा गान भी होता है। समाधि और कचेहरी के मध्य स्थित प्रागण मे चौका आरती की विधि सम्पन्न की जाती है। उग्रनाम साहब ने सर्वप्रथम दामाखेडा मे आचार्य

---

1 डॉ0 परशुराम चतुर्वेदी, 'उत्तरी भारत की सत परपरा', पृष्ठ 307

गद्दी की स्थापना की थी। प्रचार और साहित्य की दृष्टि से यह शाखा काफी महत्वपूर्ण मानी जाती है। यहॉ अनेक हस्तलिखित कबीरपथी रचनाए उपलब्ध है। 'वश प्रताप मणिमाला' मासिक पत्रिका भी निकलती है। प्रतिवर्ष माघ पचमी रो कबीर पन्थियो का एक विशाल मेला लगता है, जो पूर्णिमा तक चलता रहता है। छत्तीसगढी शाखा की उपशाखा दामाखेडा वाली शाखा की लोकप्रियता मे कमी आयी है। इस शाखा से अनेक संत और भक्त अलग होकर खरसिया शाखा से जुड रहे है। इसका कारण सभवत सैद्धांतिक मतभेद है।

11. खरसिया

खरसिया मे कबीरपथ के नादवश की प्रतिष्ठा हुई थी। दया नाम की मृत्यु के अनन्तर छत्तीसगढ़ी शाखा में अव्यवस्था के फलस्वरूप कुदुरमाल मे आयोजित सभा मे यह गद्दी स्थापित की गयी। काशीदास जी 'ग्रन्थमनिनाम साहब' के नाम से इसके प्रथम आचार्य बने। इनके उपरान्त आचार्य विचारदास जी 'प्रकाश मनिनाम साहब' के नाम से आचार्य बने। मेवाड के निवासी प्रकाशमनि नाम साहब बचपन से ही कबीरपंथी महात्मा जगन्नाथ दास के शिष्य बन गये थे। आपने 'बीजक का टीका', 'बन्दगी विचार', 'तीसा यन्त्र' 'कबीर साहब और उनका सिद्धान्त', 'श्रीमद् प्रकाशमणि गीता', 'कबीर वट महिमा' आदि ग्रन्थो की रचना करके काफी ख्याति प्राप्त की। यहॉ के मठ में माघ बसन्त पचमी को प्रतिवर्ष कबीर मेला आयोजित किया जाता है।

12. खैरा

खैरा मे स्थित कबीर मदिर बिहार राज्य में पडता है। कहा जाता है कि खैरा मे कबीर मदिर की स्थापना लीला दास ने अपने गुरु बाबा जूरीदास की आज्ञा से की थी। लीलादास ही इसके प्रथम महन्त भी हुए। इनके बाद

बोधरामदास, तुलसीदास महन्त हुए। बोधराम दास ने बीजक की टीका भी की है। इन्होने श्रीमद्, भागवत्, भगवद गीता, वाल्मीकि रामायण, ब्रह्म निरूपण और सार चन्द्रिका आदि ग्रन्थो की भी रचना की है। मठ मे कबीर पुस्तकालय, कबीर औषधालय की स्थापना हुई है और जो आज भी जनता के कल्याणार्थ सेवारत् है।

13. सीयाबाग

सीयाबाग मे कबीर मदिर स्थित है। यह स्थान बडौदा मे स्थित है। इस उपशाखा के उद्भव के बारे मे प्रामाणिक जानकारी का अभाव है कहा जाता है कि गैबीदास पहले महन्त थे, इन्होने सूरसागर तालाब के किनारे इसको बनवाया था। इनके उत्तराधिकारी महन्त श्री बीजकदास ने सीयाबाग में वर्तमान मदिर का निर्माण कराया। इनके बाद भजन दास जी ने गद्दी सभाली। इन्होने 'ब्रह्म निरूपण ग्रन्थ' की 'पदबोधिनी' नामक टीका हिन्दी मे लिखी थी। भगवानदास जी बहुत मेघावी प्रतिभाशाली संत थे। इनके उत्तराधिकारी बल्लभदास हुए।

14. दार्गिया मुहल्ला (सूरत)

यह स्थान गुजरात प्रान्त में स्थित है, यहॉ श्री कबीर मदिर स्थित है। यहॉ के पहले महन्त गंगादास को, जिन्हे पाकनाम साहब ने पजा दिया था।[1] इनके बाद क्रमशः सेवादास, टहलदास, भगवानदास, छोटेदास जी महन्त हुए। छोटे दास के उपरान्त उनके शिष्य ब्रह्मलीनमुनि महन्त हुए, इनका जन्म बिहार के चकाई कस्बा मे सरयूपारीण ब्राह्मण कुल में हुआ था। वे दर्शन और व्याकरण के उच्च कोटि के विद्वान् थे। इनकी कुछ महत्वपूर्ण रचनाओ मे सुधानुभूति सस्कृत व्याख्या सहित 'वेदान्त सुधा' , श्री सद्गुरु कबीर चरित्म और 'पातजलि योग दर्शन' आदि उल्लेखनीय है। इन्होने हजारो रूपये खर्च करके कबीर मंदिर

---

1 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीरपथ', पृष्ठ 348

का निर्माण कराया है। यहॉ भगवानदास, गगा दास और छोटेदास की समाधियॉ है।

15. लाल दरवाजा, सूरत

वर्तमान में गुजरात प्रान्त में स्थित इस कबीर मठ के प्रथम महन्त मोतीदास थे। वे गृहस्थ थे परन्तु इनके पुत्र न था, जो इनका उत्तराधिकारी बने अत: इन्होने महन्त हीरादास के शिष्य मलूक दास को दत्तक शिष्य बनाया, जो इनके बाद महन्त बने। इनके बाद क्रमश: कल्याण दास, ठाकुरदास ने गद्दी संभाली। मठ की आर्थिक स्थिति अच्छी है

16. जालौन

इस कबीरपथी मठ की स्थापना यहाँ के प्रथम महन्त रामदास ने की थी। रामदास के बाद यहॉ के महन्त गुरुदास हुए। इनसे प्रसन्न होकर प्रगटदास साहब ने इन्हे दो मोहरों वाला पंजा दिया था। इनके उत्तराधिकारी रघुनाथ दास जी हुए है।

17. धनौरा

गरौठा मठ के दीवान गगादास ने इस मठ की स्थापना की थी। गगादास इस मठ के प्रथम महन्त भी हुए है। इनके उत्तराधिकारी दीवान गोपाल दास हुए। इनके बाद क्रमश रामदास, रमनदास जी और साहबदास जी महन्त हुए है।

18. छोटी बडौनी

यह मध्य प्रदेश के दतिया क्षेत्र मे स्थित है। इसके प्रवर्तक संत बाबा रज्जबदास जी थे। कहा जाता है कि वह पहाड पर रहते थे। और वही अन्तर्धान हो गये। इनके बाद क्रमश बलभद्रदास, सुफलदास, प्रेमदास और

भगवानदास महन्त हुए। इसका सम्बन्ध गरौठा मठ से है क्योकि गरौठा के महन्त मदन साहब ने धनौरा, जालौन और यहाँ के महन्त को दीक्षा दी थी।

19. हरदी

हरदी मे स्थित कबीर मंदिर का निर्माण मुकुन्दानन्द जी ने करवाया था। यह मध्य प्रदेश राज्य के विलासपुर क्षेत्र मे पडता है मुकुन्दानन्द जी एक परोपकारी सन्त थे। उन्होने 'श्री सद्गुरु महामहिमा' नामक ग्रन्थ की रचना की थी। इनके बाद इनके पुत्र नित्यानद जी ने महन्त का पदग्रहण किया।

20. मौर्वी

मौर्वी कबीर आश्रम गुजरात मे स्थित है। हीरादास यहाँ के प्रथम महंत माने जाते है। वे सरल स्वभाव के थे। वे हमेशा झोपडो मे रहे उन्होने दयानाम साहब से पजा लेकर भवन का निर्माण कराया। इनके उत्तराधिकारी महन्त माधवदास हुए हैं। वे आयुर्वेद के चिकित्सक थे।

इस प्रकार स्पष्ट है कि छत्तीसगढी शाखा का प्रचार प्रसार अन्य सभी शाखाओ से अधिक हुआ है। इसका प्रभाव भी सर्वाधिक रहा है। इस तथ्य को डॉ0 उमा ठुकराल ने भी स्वीकार किया है।[1] छत्तीसगढी शाखा की उपशाखाएँ तो सैकडो मे रही है परन्तु यहाँ 20 उपशाखाओ का ही उल्लेख किया गया है। इन उपशाखाओ में भी छत्तीसगढी शाखा की भॉति तंत्र मत्र तथा पुराण ग्रन्थों का काफी प्रभाव पडा है। इनमे भी मतभेदो के कारण और उत्तराधिकार सम्बन्धी कारणों से भी इनकी भी अनेक उपशाखाएँ अस्तित्व मे आयी है।

---

1 दृष्टव्य डॉ0 उमा ठुकराल, 'कबीरपंथ साहित्य, दर्शन एव साधना', पृष्ठ 10

(iv) बिद्‌दूपुर वाली शाखा :

इस शाखा के प्रवर्तक जागूदास माने जाते है। वर्तमान मे बिहार प्रान्त मे स्थित यह मठ कबीरपंथियों की स्वतत्र शाखा है। कहा जाता है कि इसमे जागूदास से लेकर 17 महन्त हो चुके हैं।[1] जागूदास, मथुरादास, गर्वूदास, बल्लभदास, प्रेमदास, धरणीदास, हरिदास, हाथीदास, प्रियतम्‌दास, प्रेमदास, सतोषदास, मनसादास, गरीबदास, सुखरामदास, झूमकदास, अमृतदास तथा रामलखनदास आदि की समाधिया यहॉ पायी जाती है। इसकी कुछ उपशाखाएँ दरभगा, मुजफ्फरपुर, मुगेर, गया तथा लखनऊ मे प्रतिष्ठित हो चुकी है। इसके नियम, सिद्धान्त आदि फतुहा मठ से काफी मिलते जुलते है।

इसमे सभी गृही और वैरागियो को समान अधिकार प्राप्त है। यहॉ प्राय प्रातकाल और सायकाल के समय समाधिया की पूजा की जाती है। आचार्यों की आरती उतारी जाती है। अनुयाइयो द्वारा एक–दूसरे के प्रति पारस्परिक 'बदगी' का किया जाना अनिवार्य समझा जाता है। मठ के प्रबन्ध के लिए विभिन्न अधिकारी नियुक्त किये जाते है।

जागूदास का जन्म किसी उत्कल ब्राह्मण परिवार मे हुआ था। इनके पिता का नाम जगत दत्त था इनकी माता को कमलेश्वरी कहा जाता था। कहा जाता है कि अधिक रोने के कारण इनके माता–पिता ने कबीर साहब को अर्पित कर दिया था। 'अधरा–गढी' में वहा की रानी ने इनके लिए एक भवन बना दिया था। अन्तत जागूदासजी विददूपुर आ गए। यहीं इनका देहान्त हो जाना भी बतलाया गया है।

इनके समय के बारे में केवल अनुमान ही एकमात्र सहारा है। कबीर द्वारा दीक्षित होने के समय संवत् 1545 दिया गया, उस समय इनकी अवस्था सात

---

1 डॉ० परशुराम चतुर्वेदी, 'उत्तरी भारत की सत परपरा', पृष्ठ 298

वर्ष के आसपास रही होगी। यदि कबीर साहब का निधन काल सम्वत् 1505 स्वीकार किया जाये तो यह घटना सभव नही हो सकती। हो सकता है कि जागूदास साहब कबीर की शिक्षाओ से प्रभावित होकर उनके अनुयायी बने हो और अनन्तर उन्होने उनके नाम की शाखा की स्थापना की हो। उनका काल 16वी शताब्दी का अतिम चरण या 17वी शताब्दी का प्रारभिक चरण रहा होगा।

जागू साहब के नाम प्रचलित कबीरपंथ के विद्दूपुर और शिवपुर दो प्रधान स्थान है। दोनो का दावा है कि उनके मठ ही प्रधान मठ है।

(v) फतुहा वाली शाखा :

फतुहा वर्तमान मे बिहार राज्य के पटना जिले मे स्थित है। यहाँ की शाखा के आदि प्रवर्तक कबीर साहब के शिष्य जीवाजी माने जाते है। तत्वाजी और जीवाजी दोनो सहोदर भ्राता माने गये है। नाभादास कृत भक्तमाल में ये दोनो कबीर के शिष्य और उच्च कोटि के भक्त माने गये है। इस मठ के सस्थापक के रूप में एक क्षत्रिय वशी घोडो के व्यापारी गणेशदास का भी नाम लिया जाता है। कहा जाता है कि उन्होंने धर्नाजन कर लिया तो वैराग्य भाव पैदा हो गया और फतुहा मठ के कबीर अनुयायी मठ की शिष्यता ग्रहण कर ली। उस समय यह छत्तीसगढी शाखा से सम्बन्धित थी। इस बात पर छत्तीसगढी शाखा के लोग जोर देते है परन्तु फतुहा मठ के लोग इसे स्वीकार नही करते। इस प्रकार इस मठ के प्रवर्तक के बारे मे मतभेद है। हो सकता है कि तत्वाजी और जीवाजी ने ही इसकी स्थापना की हो और बाद मे गणेशदास जी इसके महन्त रहे हों या फिर दोनो मे प्रतिद्वन्द्विता रही होगी।

फतुहा की कबीरपथी शाखा मे 20 से अधिक आचार्य हो चुके है।[1] यह है– तत्वाजी, सत्वाजी, पुरुषोत्तम, कुन्तादास, सुखानन्द, सम्बोधदास, देवादास, विश्वरूप दास, विक्रोध दास, मुकुन्द दास, स्वरूपदास, निर्मलदास, कोमलदास, गणेशदास, गुरुदयाल दास, धनश्याम, भरतदास, मोहनदास, रघुवरदास, दयालदास, ज्ञानीदास, केशवदास, हरिनन्दनदास आदि। साक्ष्यो की कमी के कारण इन गुरुओं का समय निर्धारित करना काफी कठिन है। कहा जाता है कि पहले यह छत्तीसगढी शाखा से सम्बन्धित थी, बाद मे 14वे आचार्य गणेशदास के समय में यह शाखा स्वतत्र हो गयी। जैसा कि पहले ही उल्लेख किया जा चुका है, कि गणेशदास जी तत्वाजी–जीवाजी के बाद हुए होगे, काफी हद तक सही प्रतीत होता है। उन्होने इस शाखा को स्वतंत्र स्वरूप प्रदान किया होगा। इसी कारण उनको इसका प्रवर्तक भी कहा जाता है।

फतुहा शाखा के पास काफी भूमि है किन्तु आर्थिक स्थिति ठीक नही है। यह मठ विद्यालयो को चलाकर शिक्षा का प्रचार–प्रसार भी कर रहा है।

इस मठ की कतिपय विशेषताएँ काफी महत्वपूर्ण है। जैसे इसमे स्त्री–पुरुष दोनो को दीक्षा दी जाती है, मृतक वैरागी साधु अग्नि मे न जलाकर गंगा मे फेक दिये जाते है या जमीन मे गाडे जाते हैं, बाह्योपचार को प्रश्रय नही दिया जाता है। यहॉ के प्राय: सभी साधु और महन्त सिर के बाल, दाढी, मूंछ साफ कराकर तिलक, जनेऊ एवं तुलसी की माला धारण करते है इसका गुरुदयाल साहब के ग्रन्थ 'कबीर परिचय साखी' को छोडकर किसी प्रकार का साहित्य उपलब्ध नही है।

इस मठ की उपशाखाएँ परिहारा (गया), नन्दपुर (छपरा), अम्बारी (छपरा), कुरहना (बनारस), पंच वेतिया (छपरा), सोनपुरा (छपरा), ब्रह्मपुरा, अम्बा,

1 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीर पंथ', पृष्ठ 183

पुरनहिया, (मुजफ्फरपुर), महदेहया, सतैना, हरिबेला, दिक्खी, पिहघी, चनकारा, लौखान आदि स्थानो पर देखी जा सकती है। इस शाखा का अधिकाश प्रचार प्रसार उत्तर भारत मे ही हुआ है। इस शाखा पर हिन्दू धर्म का प्रभाव देखा जा सकता है।

(vi) राम कबीरपंथ :

इस पथ के मूल प्रवर्तक कबीर के शिष्य पद्मनाभ माने जाते हैं। नामादास ने अपनी 'भक्तमाल' मे पद्मनाभ को कबीर का शिष्य माना है। यह निश्चित रूप से कहना सभव नहीं है कि कबीर के शिष्य पद्मनाभ ही उक्त रामकबीरपंथ के प्रवर्तक के या कोई अन्य क्योकि पद्मनाभ कबीर के न्यूनाधिक समसामयिक समझे जाने वाले ऐसे पद्मनाभों का पता चलता है जो पश्चिमी भारत के निवासी थे।[1] इनमें से एक का काल 16वी शताब्दी का प्रथम चरण तथा दूसरे का काल 16वीं शताब्दी का दूसरा चरण माना गया है। काल की दृष्टि से प्रथम पद्मनाभ कबीर के कुछ करीब लगते है। परन्तु उनको कबीर का शिष्य स्वीकार करने में कठिनाई यह है कि उनकी रचना 'कान्हउदेप्रबध' वीररस प्रधान है। कबीर के शिष्य या अनुयायी से इस प्रकार की कृति की रचना करना सभव नहीं लगता। इस प्रकार किसी भी पद्मनाभ को प्रामाणिक रूप से कबीर का शिष्य स्वीकार किया जाना सभव नहीं है। हो सकता है कि पद्मनाभ का कोई व्यक्ति कबीर से प्रभावित होकर उनका अनुयायी बन गया हो और उसने रामकबीर पथ की स्थापना की हो। यह कबीर के उपरान्त ही रहा होगा। इस पथ के गुरुओं के बारे मे विस्तृत जानकारी की कमी है।

'रामकबीरपंथ' के नाम से किसी एक अन्य पथ का अयोध्या के 'हनुमान निवास' स्थान में केन्द्र स्वीकार किया जाता है। इसके अनुयायी 'रामानंदीय

---

1 डॉ0 प0 परशुराम चतुर्वेदी उत्तरी भारत की सत परपरा पृष्ठ 267

वैष्णव' है तथा इनके पथ के प्राचार्य रामकबीर के नाम से जाने जाते है रामानदीय भगवदाचार्य का तो यहॉ तक कहना है कि स्वामी 'रामानद के शिष्य कबीर प्रसिद्ध सन्त कबीर न होकर रामकबीर' थे जिन्हे भ्रमवश कबीर समझ लिया गया है। धार्मिक अनुश्रुतियो मे इस प्रकार की बाते देखने को मिलती है, अत इसे भी इसी दृष्टि से देखा जाना चाहिए। इनकी सच्चाई का कोई आधार नही होता।

रामकबीर सम्प्रदाय से ही उदा पथ का आरम्भ हुआ।[1] इसका प्रचार रूप से पहले जीवन जी ने बडौदा के निकट वर्तमान 'पुनियाद' स्थान पर किया था। 'उदा' शब्द उदार से बना है अर्थात सबसे उदार पंथ को उदापथ कहा जाता है। परन्तु यह सामाजिक और धार्मिक दृष्टि से उदार नही है। इसके अनुयायी अन्य मतावलम्बियो के हाथ का स्पर्श किया, जब तक ग्रहण नही करते है। इसकी दो शाखाएं है– एक कानम जिले की ओर है और दूसरी सूरत की ओर। इस पथ के लोग रामकबीर मन्त्र का जाप करते है और 'द्वादश तिलक' लगाते हैं। स्त्रिया भी तिलक लगाती है।

(ख) पहले अन्य शाखा से सम्बद्ध किन्तु अब स्वतंत्र शाखाएँ :

स्वतत्र शाखाओ के उल्लेख के बाद अब उन कबीरपथी शाखाओ का उल्लेख किया जाना जरूरी है, जो पहले किसी न किसी शाखा से सम्बद्ध थी किन्तु अब स्वतत्र हो गयी है। इनमे कबीरचौरा जगदीशपुरी, हटकेसरमठ, कबीर निर्णय मदिर बुरहानपुर तथा लक्ष्मीपुर की गणना की जा सकती है।[2]

---

1 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीरपथ', पृष्ठ 190

2 डॉ0 परशुराम चतुर्वेदी, 'उत्तरी भारत की सत परपरा', पृष्ठ 291

(i) जगदीशपुरी वाली शाखा :

कबीरपथ मे सम्बन्ध विच्छेद की प्रवृत्ति की शुरूआत धर्मदास के पुत्रो नारायण दास और चूडामणि या मुक्तामणि बहारा बान्धौगढ और कुदुरमाल मे गद्दी स्थापित करने से हुई। 'आसा सागर' नामक हस्तलिखित पुस्तक के आधार पर इस का काल निर्धारित किया जा सकता है। इसमे धर्मदास के निधन का उल्लेख किया गया है। अत उनके अनन्तर ही इसकी स्थापना हुई होगी। यहाँ कबीर की समाधि पर मदिर का भी निर्माण किया गया है। मठ मे कई कमरे बने है। मठ के दक्षिण मे टीला है टीले और कबीर समाधि के मध्य भाग मे धर्मदास, आमीन माता, सीताराम दास, देवकी माता, गुरत गोपाल, रतना बाई आदि की समाधियाँ है। इस मठ मे राम–लक्ष्मण और सीता की मूर्तियो की आरती भी उतारी जाती है। 'आसा सागर' नामक पुस्तक में इस शाखा की गुरु परम्परा मे 120 नाम दिये गये है। 120वे गुरु वेनू साहब के नाम के आगे की कागज का प्रतियो की दीमक ने नष्ट कर दिया है। कई गुरुओ के नाम बार–बार दिये गये हैं। जैसे गोविन्ददास के नाम तीन–तीन बार दिये गये है। श्यामनाम का तो पाच बार नाम दिया गया है। धर्मदास और सुरत गोपाल तथा कबीर की समाधिया होने से इसकी महत्ता बढ जाती है। यह शाखा स्वतत्र होते हुए चौका और आरती की विधि के बारे में समान हैं।

(ii) हटकेसर वाली शाखा

हटकेसर की कबीरचौरा वाली शाखा मध्य प्रदेश मे स्थित है। इसके प्रथम आचार्य सुतईदास थे। कहा जाता है मुक्तामणि नाम साहब के दो पुत्रो सुदर्शनदास और सुतईदास थे। यह भी कहा जाता है कि मुक्तामणि नाम साहब के दो पुत्र सुदर्शनदास और सुतईदास साहब के उत्तराधिकारी संघर्ष मे सुदर्शनदास को गद्दी मिलने पर उनकी दूसरी पत्नी सुतईदास को लेकर

दक्षिण चली गई और हटकेसर मे मठ स्थापित किया। हक्कनाम के समय से हस मठ ने छत्तीसगढ से अपना सम्बन्ध तोड लिया। डॉ0 एफ0ई0 की ने इस मठ के गुरुओ की तालिका मे कई नाम दिये है।[1] गुरु की तालिका मे धर्मदास, चूरामणि, सुतिदास, आनन्ददास, नरहरदास, युधिष्ठिरदास, फकीरदास, अमृतदास, जगनदास, कृपालदास, कुमारदास, दादा साहब, महकूमदास, करनामदास, चिन्तामणिदास, अस्थिर दास के नाम दिये गये हैं।

(iii) बुरहानपुर वाली शाखा :

कबीरपथ के इतिहास में इस शाखा का महत्त्वपूर्ण स्थान है। डॉ0 'की' ने इस शाखा को काशी कबीरचौरा से सम्बद्ध बताया है परन्तु 'की' ने किसी प्रमाण को नहीं बताया है। डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी ने इस शाखा का सम्बन्ध छत्तीसगढी शाखा से बताया है।[2] डॉ0 द्विवेदी ने इस सम्बन्ध मे एक घटना का उल्लेख किया है– 'कबीर निर्णय मंदिर' बुरहानपुर के प्रथम आचार्य पूरनसाहब छत्तीसगढी शाखा के आचार्य पाकनाम साहब से अपनी तैयार बीजक की 'त्रिज्या टीका' की स्वीकृति लेना चाहते थे परन्तु पाकनाम साहब ने अपनी शाखा के स्वीकृत सिद्धान्तों से भिन्न होने के कारण स्वीकृति नहीं दी। तब असतुष्ट होकर पूरनसाहब ने बुरहानपुर में नवीन शाखा प्रतिष्ठित कर दी। इसे पूर्णत स्वीकार नही किया जा सकता क्योंकि यह जनश्रुति पर आधारित है, जैसा कि स्वय डॉ0 केदारनाथ ने भी माना है। दूसरे डॉ0 परशुराम चतुर्वेदी ने इस शाखा की वंशावली मे अमरदास को पहला स्थान दिया है।[3] इस शाखा मे अमरदास, सुखलाल, पूरनसाहब, हस साहब, संतोष साहब, श्रीराम साहब, नरोतम साहब, काशी साहब, छोटे बालक साहब, रामस्वरूप साहब, आदि आचार्य हुए है। पूरन

1 डॉ0 एफ0ई0 की, 'कबीर एण्ड हिज फालोवर्स', पृष्ठ 100
2 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीरपथ', पृष्ठ 180
3 डॉ0 परशुराम चतुर्वेदी, 'उत्तरी भारत की सत परंपरा', पृष्ठ 309

साहब ने इसे स्वतत्र रूप से प्रतिष्ठित किया होगा। इसकी स्थापना अमरदास साहब ने की होगी।

इस शाखा की मूल विशेषता यह है कि इसमे विचार स्वतन्त्र्य तथा तार्किक चितन प्रणाली को विशेष महत्व दिया गया है। इसके तत्वावधान मे अनेक अन्य कई मठ भी प्रचलित हैं। इनके यहाँ आचार्यों की गद्दी पूर्णत योग्यता पर निर्भर है जिस कारण किसी जन्मजात अधिकारादि के प्रश्नों को उतना प्रश्रय नही मिलता।

(iv) लक्ष्मीपुर बागीचा वाली शाखा :

इसकी स्थापना प्रमोदगुरु बालापीर के समय मे हुई। यह वर्तमान में बिहार प्रान्त के दरभंगा जिले मे रूसड़ा ग्राम में स्थित है। इस शाखा ने छत्तीसगढी शाखा से सम्बन्ध विच्छेद करके अपनी स्वतत्रता कायम की। यहाँ के सभी सामाजिक और धार्मिक नियम छत्तीसगढ शाखा के समान है। इस शाखा के पास काफी जमीन होने के कारण यह काफी समृद्ध है। इसके प्रमुख आचार्यों में खेदीदास, प्रेमदास, खुशियादास, ईश्वरीदास, तुलसीदास, गोविन्ददास, काशीदास, अवधदास, आदि का नाम लिया जाता है।[1] इनमे से प्रथम आचार्य की समाधि मठ के प्रांगण में बनी हुई है। इस शाखा का प्रचार–प्रसार विहार प्रान्त में अधिक हुआ है। इसकी अनेक उपशाखाएँ दरभगा, मुगेर, मुजफ्फरपुर, पुरनिया, सहरसा, नेपाल आदि मे फैली हुई है।

(ग) कबीर से प्रभावित स्वतंत्र शाखाएँ :

इन वर्ग में आचार्य गद्दी बडैया, जौनपुर और आचार्य गद्दी महादेव मठ रूसड़ा उल्लेखनीय है इस सम्बन्ध में स्रोत सामग्री के अभाव की समस्या

---

1 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीरपथ', पृष्ठ 184

उपस्थित होती है। फिर भी प्रयास किया जा रहा है कि कम से कम एक खाका तैयार हो जाय ताकि उनके महत्व को समझा जा सके।

(i) बड़ैया की आचार्य गद्दी :

यह मठ वर्तमान मे उत्तर प्रदेश के जौनपुर जिले मे वरुणा नदी के किनारे स्थित है। इसके प्रवर्तक मदन साहेब माने जाते है। मदन साहेब का जन्म उत्तर प्रदेश के जौनपुर जिले के खरौना नामक ग्राम में कायस्थ परिवार में हुआ था। ये बैरागी थे और लगातार साधना मे लगे रहते थे। कहा जाता है कि, कबीर ने इनको राधापति के रूप मे दर्शन दिया था। यह भावातिरेक की कहानी है, राधापति साहेब नामक संत इनके गुरु थे। मदन साहब भक्ति भावना से परिपूर्ण प्रतिभाशाली महात्मा थे। इनके एक प्रसिद्ध शिष्य श्री दुलमपति साहेब, जो बडैया के निवासी थे, ने अपनी सारी सम्पत्ति देकर बडैया मे आचार्य गद्दी की प्रतिष्ठापना की थी।[1] इसी कारण इन्हे ही इसका प्रथम आचार्य माना जाता है। मदन साहेब की स्थापित शाखा को दूलमपति साहेब ने स्थायी रूप से सगठित करके मठ का निर्माण किया होगा। दूलमपति साहब के उपरान्त विवेकपति साहब उनके बाद गुरुशरणपति साहब मठ के आचार्य बने। प्रकाशपति साहेब गद्दी पर गुरुशरण साहब के बाद विराजमान हुए हैं। वह सच्चे त्यागी, विद्वान् और व्यवहार कुशल पुरुष रहे है। उन्होंने सासारिक मायामोह को त्याग करके कबीर की शिक्षाओं के प्रचार–प्रसार का बीडा उठाया।

(ii) महादेव मठ रूसड़ा की आचार्य गद्दी :

यह शाखा स्वतंत्र रूप से बिहार प्रान्त के दरभंगा जिले में रूसडा नामक स्थान पर स्थित है। इसके सस्थापक कृष्णदास कारख माने जाते है।[2] इस शाखा का

1 'अभिलाषदास कबीर दर्शन', पृष्ठ 492
2 डॉ० प० परशुराम चतुर्वेदी, 'उत्तरी भारत की सत परंपरा', पृष्ठ 311

ग्रन्थ 'पांजीपथ प्रकाश' है। जिसके रचयिता कृष्णदास कारख को माना जाता है। महात्मा कृष्णदास कारख का जन्म रूसड़ा मे हुआ था। इनके पिता का नाम श्री बृजमोहन कारख और माता का नाम लक्ष्मीवती देवी था। कहा जाता है कि कबीर ने प्रकट होकर उनको वचन वंश चलाने का आदेश दिया था। इन्होने जीवित समाधि ली थी। इस शाखा में कृष्णदास कारख, डॅवरदास, झकरीदास, रामभरोसेदास, रामटहल दास, बलदेव दास आचार्य हुये है। कबीरपंथ की इस शाखा का बिहार मे सर्वाधिक प्रचार–प्रसार हुआ है, बगाल मे भी इसके काफी अनुयायी है। इसमे सभी स्त्री, पुरुष, बच्चे जो कण्ठी माला पहन लेते है, वे सत कहलाते है। इसके अनुयायी ऊँच–नीच, छुआछूत को नही मानते है।

(iii) कबीर पारख संस्थान, इलाहाबाद :

कबीर की शिक्षाओं के प्रचार–प्रसार तथा कबीरपथी साहित्य को एकत्रित करके उसको प्रसारित करने के उद्देश्य से इस सस्थान की स्थापना महात्मा अभिलाषदास ने की थी। यह इलाहाबाद के पश्चिमी किनारे पर स्थित है। यह संस्थान दो भागो में विभाजित है। एक भाग कबीर मन्दिर के रूप मे है और दूसरा कबीर आश्रम के रूप में है। यहाँ कबीरपंथी साहित्य का प्रकाशन हो रहा है। कबीर मन्दिर में महात्मा प्रकाशन के सम्बन्ध मे सारे कार्य स्वयं करते है। यहाँ कोई नौकर की व्यवस्था नही है। पारख संस्था का स्वय अपना प्रकाशन है।

इस सस्थान की स्थापना कबीरपंथी साहित्य को प्रकाश मे लाने तथा कबीर की शिक्षाओं के प्रचार–प्रसार के उद्देश्य के तहत की गयी थी। इसके सस्थापक अभिलाषदास कबीर धर्म सेवा समिति जीयनपुर, अयोध्या से सम्बन्धित रहे है। इनके गुरु सदगुरु राम सूरत साहब थे, जो कबीर आश्रम बडहरा, गोडा से स्म्बन्धित रहे है। कबीर पारख संस्थान मे अन्य कबीरपंथी सस्थाओ की तरह

ग्रन्थ 'पाजीपथ प्रकाश' है। जिसके रचयिता कृष्णदास कारख को माना जाता है। महात्मा कृष्णदास कारख का जन्म रूसडा मे हुआ था। इनके पिता का नाम श्री बृजमोहन कारख और माता का नाम लक्ष्मीवती देवी था। कहा जाता है कि कबीर ने प्रकट होकर उनको वचन वश चलाने का आदेश दिया था। इन्होने जीवित समाधि ली थी। इस शाखा मे कृष्णदास कारख, डॅवरदास, झकरीदास, रामसंतोषदास, रामटहल दास, वलदेव दास आचार्य हुये है। कवीरपंथ की इस शाखा का विहार मे सर्वाधिक प्रचार–प्रसार हुआ है, बगाल मे भी इसके काफी अनुयायी है। इसमे सभी स्त्री, पुरुष, बच्चे जो कण्ठी माला पहन लेते है, वे सत कहलाते है। इसके अनुयायी ऊँच–नीच, छुआछूत को नहीं मानते है।

(iii) कबीर पारख संस्थान, इलाहाबाद :

कबीर की शिक्षाओ के प्रचार–प्रसार तथा कबीरपथी साहित्य को एकत्रित करके उसको प्रसारित करने के उद्देश्य से इस सस्थान की स्थापना महात्मा अभिलाषदास ने की थी। यह इलाहाबाद के पश्चिमी किनारे पर स्थित है। यह सस्थान दो भागो मे विभाजित है। एक भाग कबीर मन्दिर के रूप मे है और दूसरा कबीर आश्रम के रूप मे है। यहाँ कबीरपथी साहित्य का प्रकाशन हो रहा है। कबीर मन्दिर में महात्मा प्रकाशन के सम्बन्ध मे सारे कार्य स्वय करते है। यहाँ कोई नौकर की व्यवस्था नहीं है। पारख सस्था का स्वय अपना प्रकाशन है।

इस सस्थान की स्थापना कबीरपथी साहित्य को प्रकाश मे लाने तथा कबीर की शिक्षाओ के प्रचार–प्रसार के उद्देश्य के तहत की गयी थी। इसके संस्थापक अभिलाषदास कबीर धर्म सेवा समिति जीयनपुर, अयोध्या से सम्बन्धित रहे है। इनके गुरु सदगुरु राम सूरत साहब थे, जो कबीर आश्रम वडहरा, गोडा से स्म्बन्धित रहे है। कबीर पारख संस्थान मे अन्य कबीरपंथी सस्थाओ की तरह

महन्त परंपरा नही है और न ही उत्तराधिकारी सम्बन्धी समस्या है। सभी साधु–सन्तो मे समानता की भावना यहॉ की मुख्य विशेषता है। एक प्रबन्ध समिति द्वारा सारी व्यवस्था का संचालन किया जाता है। प्रबन्ध समिति ही अध्यक्ष और कोषाध्यक्ष चुनती है। सस्थान के आय–व्यय का लेखा जोखा प्रतिवर्ष होने वाले वार्षिक उत्सव में प्रस्तुत किया जाता है। प्रतिवर्ष अक्तूबर माह के प्रथम सप्ताह मे वार्षिक उत्सव का आयोजन किया जाता है। यह उत्सव कई दिन तक चलता है। इसमे विभिन्न क्षेत्रों से आकर संत–महात्मा सत्सग करते हैं। ध्यान शिविर का भी आयोजन किया जाता है। संस्थान की आय का प्रमुख स्रोत दान–दक्षिणा ही है हालांकि सस्थान के पास कुछ जमीन भी है, मगर उससे नाममात्र की सब्जियॉ, फल, अनाज की ही पैदावार होती है। इस सस्थान में कबीर जयन्ती भी धूम–धाम से मनायी जाती है।

कबीर पारख संस्थान में लगभग 60 साधु–सन्त निवास करते है। सन्तो को प्रशिक्षण भी दिया जाता है। लगभग 30 कमरो की व्यवस्था है। मेहमानो के लिए 4 कमरे सुरक्षित हैं। सभी के लिए समान व्यवस्था है तथा सबको समानता का अधिकार प्राप्त है। कोई पदाधिकारी हो या साधारण सन्त सभी सारे कार्य स्वय करते है। संस्थान में होम्यिोपैथी का एक चिकित्सालय है, जहॉ जनता के लिए नि शुल्क उपचार उपलब्ध हैं। साधु–सन्तो की दिनचर्या सुबह 4 बजे से शुरू हो जाती है और रात्रि 9 बजे तक चलती है। सस्था मे आधुनिकतम सारी सुविधाऍ जैसे–जेनरेटर, वाटरपम्प और टेलीफोन आदि की व्यवस्था है।

इस सस्थान की विचारधारा और सिद्धांत तर्क पर आधारित है। कबीरदास पारख संस्थान का नामकरण ही इसी आधार पर किया गया है। 'पारख' का अर्थ होता है कि तर्क या विवेक के आधार पर सत्यापित किसी तथ्य को स्वीकार करना। कबीर पारख संस्थान किसी परंपरा या मान्यता पर आधारित सिद्धान्तो को न मानकर तर्क पर आधारित तथ्यों को स्वीकार करता है। कबीर

ने किसी परंपरा या अन्धविश्वास को नही स्वीकार किया, इसी प्रकार यह सस्थान भी कबीर की भॉति सच्चे ज्ञान की खोज करता है ताकि मानव कबीर के सच्चे मार्ग पर चले और कबीर के नाम पर समाज मे फैली भ्रान्तियॉ दूर हों।

पारख सिद्धांत विवेकवाद का कट्टर समर्थक है। यह जड चेतन दोनो को मौलिक सत्ता मानता है और दोनों को सर्वदा भिन्न गुण धर्मी तथा अनादि अनन्त भी स्वीकार करता है।[1] पारख सिद्धान्त के अनुसार भूत–प्रेत, मत्रतंत्र, जादू–टोना ग्रहलगन शकुन–अपशकुन आदि भ्रम एवं अज्ञान जन्य है और मनुष्य शुभाशुभ कर्मानुसार ही सुख–दुख प्राप्त करता है, इसमे किसी ईश्वर या शैतान का कोई हाथ नही है। पारखी दुनिया के सभी महापुरुषो को श्रद्धेय और सभी धर्म ग्रन्थो को पठनीय और आदरणीय मानते है। इसी प्रकार पारखी पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश मे आकाश को धर्म–गुण–क्रियादि रहित होने के कारण शून्य तथा अद्रव्य मानते है। शेष चारो तत्वो के परमाणुओ के घात–प्रतिघात से अनेक विध–पदार्थो के उत्पाद–विनाश, षट्ऋतुओ का परिवर्तन आदि निरन्तर होते रहते है। चारो तत्वों में अनादि–अनन्त षट्भेद होने से ससार भी अनादि और अनन्त है, इसका न सम्पूर्ण प्रलय होता है और न नये सिरे से सृष्टि, निर्माण या उत्पत्ति। प्रकृति के कार्यो में किसी अनादि या अनन्त दैवी सत्ता का हाथ नहीं है।

पारख परंपरा मे महन्त या आचार्य की व्यवस्था को अस्वीकार किया गया है। अन्य कबीरपंथी मठो में उत्तराधिकार सम्बन्धी झगडो से दूर रहते हुए पारखी सन्तों ने अपनी व्यवस्था सामूहिक रूप से संभाल रखी है। पारखी अपने प्रथम आचार्य सद्गुरु कबीर को ही मानते है।[2] कबीर के बाद श्रुति गोपाल, श्री भगवान साहेब, श्री जागू साहेब, श्री धर्म साहेब, श्री गुरु दयाल साहेब, श्री राम रहस साहेब, श्री पूरण साहेब, श्री काशी साहेब, श्री निर्मल साहेब, श्री विशाल

1 महात्मा धर्मेन्द्र दास सद्गुरू, 'कबीर और पारख सिद्धांत', पृष्ठ–6

2 धर्मेन्द्र दास सद्गुरु, 'कबीर और पारख सिद्धान्त', पृष्ठ 6

साहेव आदि इस परपरा के आचार्य और प्रचारक माने गय है।[1] श्री पूरण साहेब के अनुसार, श्रीधर्म साहेब पारख सिद्धान्त के उपदेष्टा थे।

इस प्रकार पारखी सन्तो ने अपने मे सम्पूर्ण कबीरपथ की समाहित करने का प्रयास किया है। सद्गुरु कबीर के कथन है।

'परखि लेहु खरा खोट, हो रमैया राम।'

से पारखी विचारक निष्कर्ष निकालते है कबीर पारख सिद्धान्त के प्रथम आचार्य है। चाहे वे काशी के श्रुति गोपाल हो या छत्तीसगढी शाखा के आचार्य धर्म साहेब आदि प्रमुख कबीर के शिष्यो को पारखी सन्तो ने पारखी विचारधारा का प्रमुख व्याख्याकर्ता और प्रचारक माना है।

कबीर की शिक्षाओ को तोड–मरोड करके प्रचारित करने की प्रवृत्ति और उनके नाम को लेकर आडम्बरों और मठाधीशी के खिलाफ पारखी सन्त कबीर पारख सस्थान के माध्यम से रचनात्मक और मानवतावादी आन्दोलन चला रहे है। अपने प्रकाशन संस्थान द्वारा कबीर के साहित्य की सही और सच्ची तस्वीर पेश करने का प्रयास कर रहे हैं। धमेन्द्र दास का कहना है कि "हम कबीर के सच्चे और वास्तविक मानवतावादी धर्म के उपासक और प्रचारक हैं।"[2] कबीर के साहित्य को पारखी दृष्टिकोण के प्रकाश में लाने का उनका प्रयास प्रशसनीय है क्योंकि इससे कबीर को हर समय और परिस्थिति में प्रासगिक बनाने मे सहायता मिलेगी।

* * * * *

---

1 'अभिलाषदास कबीर दर्शन', पृष्ठ 391

2 कबीर पारख सस्थान, इलाहाबाद के महन्त श्री धमेन्द्र दास जी का कथन, शोधकर्ता को दिये गये एक साक्षात्कार मे।

चतुर्थ अध्याय

कबीरपंथ : सिद्धान्त, संगठन, विचारधारा और साहित्य

1. कबीरपंथ के सिद्धान्त :

कबीरपथियो के सिद्धान्त ईश्वरवादी और अनीश्वरवादी दोनो तरह की विचारधाराओ पर आधारित हैं। ईश्वरवादी और अनीश्वरवादी विचारधाराओं के बारे मे कबीरपथी साहित्य में विस्तृत विवरण मिलता है।[1] प्रथम विचारधारा परमतत्त्व के रूप मे 'ईश्वर' अथवा 'ब्रह्म' की सत्ता को स्वीकार करती है, जो सर्वशक्तिमान, सृष्टिकर्त्ता और अनादि है। जबकि दूसरी विचारधारा 'ईश्वर' अथवा 'ब्रह्म' के अस्तित्व में विश्वास की कट्टर विरोधी है। यह विचारधारा 'जड' और चे'तन' नामक दो तत्वो को ही स्वीकार करती है। प्रथम विचारधारा अद्वैतवादी और दूसरी द्वैतवादी–धार्मिक शाखा का प्रतिनिधित्व करती है। अद्वैतवाद वह सिद्धान्त है जिसमे अन्तिम रूप से एक ही परमतत्त्व की सत्ता मे विश्वारा करने की मान्यता है। भारतीय–दर्शन मे इसका उदाहरण शकराचार्य का ब्रह्मसिद्धान्त है। शकराचार्य ने एक ही परमसत्ता 'ब्रह्म' को ही अन्तत. सत् माना है। उनका दर्शन "ब्रह्म सत्य जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैव नापर" पर आधारित है, जिसके अनुसार 'ब्रह्म' सत्य है, संसार मिथ्या है और जीव (प्राणी) ब्रह्म ही है, दूसरा कोई नही। द्वैतवादी दो परमतत्वों की सत्ता को स्वीकार करता है। द्वैतवाद के लक्षण मध्वाचार्य इत्यादि के दर्शन मे स्पष्ट परिलक्षित होते है। कबीरपथ की आचार्य–गद्दी बडैया (जौनपुर) और छत्तीसगढ की शाखा अद्वैतवादी विचारधारा का प्रतिनिधित्व करती है। बुरहानपुर–वाली शाखा द्वैतवादी विचारधारा का प्रतिनिधित्व करती है। फतुहा और काशी–कबीर–चौरा वाली कबीरपथी शाखाओ के सिद्धान्त भी बुरहानपुर वाली शाखा से समानता रखते है।

---

1 द्रष्टव्य डॉ0 उमा ठुकराल, 'कबीरपथ : साहित्य, दर्शन एव साधना' पृष्ठ 170

(क) ईश्वरवादी विचारधारा पर आधारित सिद्धान्त :

(i) परमतत्व सम्बन्धी सिद्धान्त :

ईश्वरवादी विचारधारा परमतत्व के रूप मे ईश्वर या ब्रह्म को मानती है, जिसको इन्द्रियो से नहीं जाना जा सकता है, जैसा कि निम्न दोहे से स्पष्ट होता है–

"मन बुधि चित् पहुंचे नहीं तहां। अवरण पुरुष बिराजे जहॉ। अगम अगाध गाध वो नाही। ज्यों के त्यों प्रभु आप रहा ही।।"[1]

ईश्वरवादी विचारधारा परमतत्व को "एक (अद्वैत) और अनादि" मानती है। मदन–साहेब के अनुसार–

सत्यपुरुष है एक, दया ज्ञान वो मुक्ति,
जो इतनी जग में रेख, नामरूप अगणित हवें।

कबीरपंथ में परमतत्व को सर्वव्यापी भी माना गया है। 'आत्मबोध' के अनुसार– 'आदि, अंत और मध्य सहित परमतत्त्व, आकाश के समान बाहर, भीतर, एकरस अखण्ड होकर व्याप्त है।'

"सर्व मांह है आप निवासा कहीं गुप्त कहीं प्रगट प्रगासा।"[2]

'आत्मबोध' के विवरणो से पता चलता है कि कबीरपंथ की ईश्वरवादी शाखा में परमतत्व सर्वशक्तिमान और सृष्टिकर्ता है, उसकी इच्छा मात्र से उत्पत्ति, प्रलय और अप्रत्याशित परिवर्तन क्षणभर में होते है, वह उनका साक्षी मात्र है।[3]

---

1 'ज्ञान स्थिति बोध', पृष्ठ 83
2 'अनुराग सागर', पृष्ठ 80
3 'आत्मबोध', पृष्ठ 7

'अम्बु सागर' के अनुसार आदि पुरूष है सिरजनहारा'।[1]
अनुराग सागर के अनुसार सत्यपुरूष ने ही सृष्टि की रचना की है।[2]

कबीरपथ के ईश्वरवादी अनुयायी जिस सत्यपुरुष की उपासना का उपदेश देते हैं, जिसे वे निर्गुण मानते है जो वास्तव न केवल प्राकृत त्रिगुणो से रहित है फिर भी उसमें अप्राकृत दिव्यगुणो का अभाव नहीं है क्योकि वह उपासना के क्षेत्र में आकर दिव्यगुणो से युक्त सगुण सत्ता बन जाता है।

(ii) जीवात्मा सम्बन्धी सिद्धान्त :

जीवात्मा प्राणियों मे व्याप्त उस मूल सत्ता का प्रतीक है, जिसका न तो जन्म होता, न ही कभी मृत्यु होती है और जो शरीर में रहकर भी इन्द्रियों एव बुद्धि से भिन्न है। भारतीय परम्परा में आत्म–सत्ता को अजर, अमर और पापपुण्य रहित माना गया है। कबीरपथ के ईश्वरवादी समर्थक कबीर के विचारो के अनुरूप ही आत्मा को अनादि मानते है। छत्तीसगढी शाखा आत्मा को स्वत प्रकाश–स्वरूप और ज्ञान स्वरूप मानती है। "जीवधर्मबोध' नामक ग्रथ, ब्रह्म मे जीव की स्थिति मानते हुए, इसे अनादि स्वीकार करता है। इसके अनुसार–

ब्रह्म कहूॅ जिन जीव न होई। जीव बिना जिव जिये न कोई।।
जोये ब्रह्म जीव बिन होता। कैसे जीव बीज सो बोता।[3]

छत्तीसगढी–शाखा आत्मा की व्यापकता मे भी विश्वास करती है।[4] कबीरपथ की सभी अद्वैतवादी शाखाऍ आत्मा के एकात्मकवाद का समर्थन करती है। छत्तीसगढी शाखा के अनुसार एक ही आत्मा समस्त प्राणियो में व्याप्त है। आचार्य मदन साहेब के अनुसार– "जिस प्रकार एक ही चन्द्रमा का बिम्ब अनेक घड़ों मे प्रतिबिम्बित होकर अनेक होता है उसी प्रकार एक ही चैतन्य एक से

---

1 'अम्बुसागर', पृष्ठ 4
2 'अनुराग सागर', पृष्ठ 13
3 'जीवधर्मबोध', पृष्ठ 78,
4 डॉ० केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीर पथ', पृष्ठ 238

अनेक होता है।[1]" 'कबीर मंशूर' के अनुसार 'जीव केवल एक है उसका 'मनुष्य' 'पशु' 'पक्षी' इत्यादि कुछ भी नाम रखा जा सकता है।[2]

आत्मा और परमात्मा के सम्बन्ध में कबीरपथ की अद्वैतवादी शाखा कोई भेद नहीं स्वीकार करती, इसके अनुसार दोनों में कोई पारमार्थिक भेद नहीं है। केवल अज्ञान के कारण ही जीव और ब्रह्म मे अद्वैतभाव का ज्ञान नही हो पाता। कबीरपथ की छत्तीसगढी शाखा आत्मा और परमात्मा के सम्बन्ध मे पछी और उसकी छाया की भाति देहात्मवाद का सम्बन्ध मानती है।[3]

(iii) माया–सम्बन्धी–सिद्धान्त :

कवीरपंथ की ईश्वरवादी विचारधारा में भी भारतीय दार्शनिक परम्परा के अनुरूप माया को बाधक तत्व माना गया है। माया बन्धन–रूपा है। गुरुदयाल साहेब ने माया को चंचल नारी, डायन और भूतनी आदि मानते हुए उस पर विश्वास न करने को कहा है।

"कबीर चंचल नारी को मोहिं नहीं इतवार,"[4]

कबीरपंथी विद्वान् माया के विद्या और अविद्या दो रूप मानते हैं।[5] प्रथम रूप जीवात्मा को परमात्मा की ओर उन्मुख करने वाला तथा दूसरा रूप संसारासक्ति मे आवद्ध करने वाला माना गया है, जो माया को ब्रह्म की शक्ति न मानकर इच्छा–शक्ति मानता है। कबीर मंशूर के अनुसार माया ब्रह्म में उठने वाली स्फुरण–शक्ति है और ब्रह्म की अर्द्धांगिनी है, जो सर्वदा ब्रह्म के साथ रहती है और सृष्टि की रचना करती है।

---

1 'शब्द विलास', पृष्ठ 76
2 'कबीर मशूर', पृष्ठ 463
3 'जीवधर्मबोध', पृष्ठ 78
4 गुरुदयाल साहेब, 'कबीर परिचय', साखी, 57
5 'कबीर मशूर' पृष्ठ 1130

(iv) जगत्–सम्बन्धी सिद्धान्त :

अद्वैतवादी ईश्वरवादी विचारधारा मे जगत्–तत्व के सम्बन्ध में विस्तृत ढग से विचार किया गया है। अद्वैतवादी 'जगत्' के सम्बन्ध मे मुख्य रूप से सृष्टिक्रम के सन्दर्भ मे विचार करते है। कबीरपथ की अद्वैतवादी छत्तीसगढी शाखा के जगत्तत्व–सम्बन्धी विचारो पर वैदिक पुराणो का व्यापक प्रभाव पडा है। कबीरपथ साहित्य की की रचनाओ मे 'कबीरवानी', 'खुदवानी', 'दीपकसागर,' 'ज्ञान सागर,' 'अनुराग सागर' और 'कबीर मशूर' आदि मे सृष्टि का वर्णन किया गया है। इन रचनाओ मे सृष्टिक्रम के सम्बन्ध मे साम्य और वैषम्य स्पष्टत दिखाई पडता है। ब्रह्म–सृष्टि, जीव–सृष्टि और माया सृष्टि तीनों वर्गो के अन्तर्गत इस साम्य और वैषम्य को देखा जा सकता है। 'कबीर वानी' मे अचिंत तक की सृष्टि 'ब्रह्म सृष्टि' मानी गयी है, इसके अन्तर्गत आदि पुरूष की इच्छा, मूल और सोह इन चार सुरतियों से उत्पन्न सातकरि, सात इच्छाये, पांचब्रह्म पाच अण्ड और आठ अश आ जाते हैं। 'कबीर मंशूर' स्पष्टत ब्रह्म सृष्टि के अन्तर्गत सत्यपुरूष से सहज, अंकुर, इच्छा सोह, अचिंत और अक्षर नामक छ पुत्रो का उत्पन्न होना मानता है। 'अनुरागसागर' और 'ज्ञान सागर' मे 'कबीर मशूर' की धारणा को ध्यान में रखते हुए, सत्य पुरूष से प्रथमोत्पन्न सन्तानो को 'ब्रह्म सृष्टि' के अन्तर्गत माना गया है। इसी प्रकार जीव सृष्टि और माया सृष्टि के सम्बन्ध मे 'कबीरवानी', 'स्वसवेद बोध', 'कबीर मशूर', और अनुराग सागर आदि मे मतभेद दिखाई पड़ता है।

जहॉ 'स्वसवेदबोध' अक्षर से उत्पन्न सृष्टि को जीव दृष्टि के अन्तर्गत मानता है वहीं 'कबीर वाणी' अक्षर से उत्पन्न सृष्टि तक जीव दृष्टि मानता है। 'माया सृष्टि' का विकास निरजन और आद्या द्वारा सभी कबीरपथी ग्रन्थ स्वीकार

करते है।[1] 'माया सृष्टि' के रचयिता निरजन को सभी कबीरपथी ग्रन्थ प्रपची मानते हुए इसकी सृष्टि को बन्धन, आवागमन का स्थान मानते है।

भारतीय दार्शनिक परम्परा की भांति कबीरपंथ के साहित्य मे भी 'प्रलय सिद्धान्त' को स्वीकार किया गया है। 'कबीर मशूर', स्वसवेदबोध,' और 'कबीर चरित्र बोध,' मे प्रलय लक्ष्यो प्रलय और विधि का विस्तार से उल्लेख किया गया है। इन ग्रन्थो की धारणा है कि प्रलय के समय अनेक भयानक चिह्न परिलक्षित होगे, पृथ्वी पर पाप होगे। 'कबीर मशूर'[2] और 'कबीर चरित्र बोध'[3] में प्राकृतिक या महाप्रलय से भी बडी एक और प्रलय की कल्पना की गयी है जिसमे सभी विलुप्त हो जायेगे मात्र सत्यपुरूष और सत्य लोक के हंस (मुक्त जीव) रह जायेंगे। 'स्वसवेदबोध' के अनुसार केवल 'माया सृष्टि' ही प्रलय के अन्तर्गत आती है, जीव और ब्रह्म सृष्टि नही।[4] इस प्रकार स्पष्ट है कि कबीरपथ की ईश्वरवादी जगत् सम्बन्धी विचारधारा भारतीय दार्शनिक परपरा से कुछ साम्य और वैषम्य रखते हुए भी स्वतंत्र अस्तित्व रखती है। वेद–पुराणो के प्रभाव के कारण इसकी स्वतत्र चितन शैली पर प्रतिकूल प्रभाव अवश्य पडा है।

(ख) अनीश्वरवादी विचारधारा पर आधारित कबीरपंथ के सिद्धान्त :

(i) परमतत्व सम्बन्धी सिद्धान्त :

कबीरपथ की अनीश्वरवादी शाखा का परमतत्व सम्बन्धी सिद्धान्त ईश्वरवादी शाखा के विपरीत है। यह शाखा तर्क पर आधारित परमतत्व सम्बन्धी विचारधारा का समर्थन करती है। यह जीव से श्रेष्ठ कोई अन्य परमसत्ता के अस्तित्व का निषेध करती है। इस शाखा मे पदार्थ विवेचन, प्रमाण विश्लेषण

1 डॉ० उमा ठुकराल कृत 'कबीरपथ साहित्य', 'सिद्धान्त एव साधना', पृष्ठ 220
2 'कबीर मशूर', पृष्ठ 298
3 'कबीर चरित्रबोध', पृष्ठ 298
4 'स्वसंवेदबोध', पृष्ठ 166

आदि वैज्ञानिक दृष्टिकोण पर आधारित माने गये है। इसके अनुसार ईश्वर निमित्त कारण नही हो सकता क्योकि उसका कोई मौलिक शरीर नही है और यदि उसकी कोई देह मान भी ली जाये तो वह पचतत्वों की होगी। तत्व अनादि होते है उनकी उत्पत्ति के लिए ईश्वर परिकल्पना की जरूरत नहीं।[1] इस प्रकार ईश्वर की सत्ता सिद्ध नही होती इस शाखा के समर्थकों का कहना है कि जिस कर्ता ईश्वर को उपादान के रूप में प्रकृति की आवश्यकता है, वह स्वतत्र और सर्वशक्तिमान हो ही नही सकता। इसी प्रकार वे ईश्वर को अवतारी और कर्म नियन्ता भी नही मानते। प्रत्यक्षप्रमाण के बिना वैकुण्ठ लोक या सत्य लोक सिद्ध नही किये जा सकते दूसरे, यदि अवतार हेतु वह देह धारण करता भी है तो निराकार, व्यापक परमात्मा, एक देशी साकार देहधारी के रूप में वह कैसे जन्म ले सकता है, क्योंकि देह का कारण प्रारब्ध कर्म है और उसके पूर्व जन्म के सस्कार किसी ने देखे नही फिर वह जीवों को कैसे मुक्त कर सकता है, जो स्वय ही प्रारब्धवश अवागमन का दुःख उठा रहा है।[2] अनीश्वरवादी कबीर पथ के समर्थक ईश्वर को कर्म नियन्ता भी मानने को तैयार नही है क्योकि यदि वह कर्म नियन्ता है, तो वही सभी कर्मो का प्रेरक है और उसे शुभ–अशुभ कर्मों का फल भी भोगना चाहिए। यदि वह दयालु और सर्वज्ञ नही है, तो सर्वशक्तिमान नही हो सकता क्योकि ससार में निर्दयी और दुराचारी लोगो का अस्तित्व विद्यमान है। इस प्रकार ईश्वर की सत्ता असिद्ध है।

अनीश्वरवादी कबीरपथी इस प्रकार ईश्वर सम्बन्धी परम्परागत विचारधारा का खण्डन करने के लिए वस्तुवादी वैज्ञानिक दृष्टिकोण का आश्रय लेते है। वे मानते है कि पृथ्वी, चन्द्र आदि नक्षत्रों को कूर्म, वाराह अवतार के रूप मे ईश्वर धारण नही करते अपितु पृथ्वी सहित गृह तत्वों की मूलभूत धारणा

1 'तिमिर भास्कर', पृष्ठ 184
2 'निष्पक्ष ज्ञान प्रश्नोत्तर', पृष्ठ 147

कर्षण और गुरुत्वाकर्षण आदि जड शक्तियों के आधार पर स्वय ही स्थित है। काल सम्बन्धी प्रक्रियाये पृथ्वी की नियमित वार्षिक और दैनिक गति का परिणाम है, किसी देवता की कृपा का नहीं।[1] ब्रह्म या ईश्वर तो वाणी का भ्रम है। वाणी जीव पर आश्रित है और जीव से ही ब्रह्मा, विष्णु,महेश आदि सत्ताओ का काल्पनिक अस्तित्व है।

(ii) जीव सम्बन्धी सिद्धान्त :

अनीश्वरवादी विचारधारा मे जीवतत्व पर काफी विचार किया गया है जिससे जीव की महत्ता प्रकट होती है। इस विचारधारा में जीव को स्वयप्रकाशी, स्वयंरूपी अर्थात् अनादि और स्वतंत्र, आकारी अनेक और विभिन्न अवस्थाओ वाला माना गया है। जीव के स्वय प्रकाशी होने का अर्थ है, जिसे जानने के लिए किसी दूसरे साधन की जरूरत नहीं है। जीव अपनी चेतना अथवा ज्ञान से स्वयं को तो जानता ही, साथ ही अन्य पदार्थों को भी जानता है।

'तैसे ही सिद्धान्त में ज्ञान स्वरूप है जीव,
चेतन शुद्ध सारे आप है, परे नहीं कोई जीव।''[2]

इस विचारधारा के लोग जीव को कारण कार्य रहित, स्वयसिद्ध, अनादि अखण्ड और चैतन्य सत्ता मानने के कारण जीव को ईश्वर का अश या प्रतिबिम्ब मानने वाली धारणा को नहीं मानते है। वह जीव को अनेक मानते है, उनका कहना है कि एक जीव के मरने या मुक्त होने पर, सभी जीवो को मुक्त या सभी जीवों को एक के बन्धन मे पड जाना चाहिए था किन्तु ऐसा नहीं होता अत जीवो की अनेकता सिद्ध है। भारतीय दर्शन में सांख्य भी पुरुष (जीवात्मा) की अनेकता को सिद्ध करने के लिए इसी तरह के तर्क देते हैं, उनका कहना है कि व्यावहारिक जीवन में व्यक्तियो में जन्म–मरण, ज्ञानेन्द्रियो–कर्मन्द्रियों,

1 'निष्पक्ष ज्ञान प्रश्नोत्तर', पृष्ठ 452–454
2 'मानव कल्याण प्रबोध', पृष्ठ 297

क्रिया–कलापो, सत्व, राजस और तमस गुणों मे विभिन्नता पायी जाती है, अगर पुरूष एक होता तो सब व्यक्तियो मे गुण क्रिया–कलाप आदि एक समान होते जबकि सबमे विभिन्नता होती है। अत पुरूष अनेक है।[1] जीव अखण्ड और ठोस है और पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि के समान साकार होती है।

> "जड चेतन साकार रूपी है, चार तत्व और जीव।
> पोल शून्य कुछ वस्तु नहीं, पारख पक्ष तजि पीव।"[2]

अनीश्वरवादी कबीरपंथी जीव मे बलरूपी देह शक्ति, चलन गति रूपी शक्ति और इच्छा या स्फुरण शक्ति मानते हुए सुख–दु:ख के अनुभव को जीव का लक्षण मानते है। उनकी दृष्टि में चेतन जीव के अनादि प्रतियोगी पदार्थ हैं जिन्हे वह जड नाम देते हैं परन्तु इनमें ज्ञान ग्रहण करने की क्षमता का अभाव होता है।

(iii) माया सम्बन्धी सिद्धान्त :

अनीश्वरवादी शाखा के कबीरपंथ के अनुयायी माया तत्व पर ज्यादा जोर नही देते है केवल माया को मनुष्य की अज्ञानता का परिणाम मानते हैं। उनका मानना है कि मनुष्य अज्ञानता के कारण अपने से भिन्न किसी इतर ब्रह्म की कल्पना कर लेता है और वह उसे प्राप्त करने के लिए साधन रूप मे नाना ग्रन्थो का निर्माण कर देता है, जिसमे सारी सृष्टि उलझी रहती है। माया को मनुष्य का बाधक तत्व मानने के कारण बुरहानपुर वाली शाखा इससे दूर रहने की सलाह देती है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपनाने के कारण बुरहानपुर वाली शाखा माया तत्व पर बहुत जोर नही देती देती है।

---

1 प्रो0 हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा, 'भारतीयदर्शन की रूपरेखा', पृष्ठ 246

2 'स्वरूप निष्छासार', पृष्ठ 104

(iv) जगत् सम्बन्धी सिद्धान्त :

अनीश्वरवादी कबीरपथियो का जगत् सम्बन्धी सिद्धान्त उनके जड चेतन विषयक सिद्धान्त पर आधारित माना जाता है। उनकी मान्यता है कि देहोपाधियुक्त जीव के ज्ञान के विषय और अनादि जडतत्वो के समूह का नाम जगत् है। कारण और कार्य भेद के कारण जगत् के दो रूप है। पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि कारण रूप जगत् के अन्तर्गत है। इन चारो तत्वो के सम विशेष और सामान्य भागो का भिन्न–भिन्न प्रकार से मिश्रण होने से उत्पन्न होने वाले समस्त भौतिक पदार्थ जैसे पाषाण, वृक्ष, मेज, कुर्सी, देहादि कार्यरूप मे जगत् के अन्तर्गत है। साख्य दर्शन की गुणों पर आधारित जगत् सम्बन्धी व्याख्या अनीश्वरवादी कबीरपथ के समर्थको को मान्य नही है। वह कहते है कि सत्व, रज, तम त्रिगुण ही नहीं है अपितु ये क्रियाये हैं।[1] यह जडतत्वो और जीव के संयोग से केवल देहधारी जीवों में दिखाई देती है। इसी प्रकार वे वैष्णव दर्शन और पुराणो के सृष्टि क्रम को भी दूषित मानते है। उनकी मान्यता है कि सम्पूर्ण प्राकृतिक जगत् का विकास निस्सदेह जडतत्वों मे निहित विभिन्न शक्तियों द्वारा होता है। इन शक्तियों मे मुख्यरूप से गुरुत्वाकर्षण, रसायनकर्षण, धाराणकर्षण और स्नेहाकर्षण उल्लेखनीय हैं। प्रत्यक्ष प्रमाणवादी होने के कारण अनीश्वरवादी कबीरपथी सदैव दिखाई पड़ने वाले जगत् को सत्य मानते है इसी कारण वे सत्यकार्यवादी है। वह आत्यन्तिक प्रलय की कल्पना को स्वीकार नही करते क्योकि ऐसा माना जाता है कि इस प्रलय मे देहधारी जीवो सहित समस्त ब्राह्मण का अस्तित्व नहीं रहता।[2] महाप्रलय के बल केवल कल्पना मात्र है।[3]

---

1 'निर्पक्ष सत्यज्ञान दर्शन', पृष्ठ 125

2 'पच ग्रथी', टकसार खण्ड, दोहा– 361–364

3 'सत्यज्ञानबोध' नाटक, पृष्ठ 93–94

कबीरपथी अनीश्वरवादी सन्त महाप्रलय को नहीं मानते क्योकि यह धारणा तर्क की कसौटी पर खरी नहीं उतरती।

इस प्रकार स्पष्ट है कि अनीश्वरवादी कबीरपथ के अनुयायी तर्क की कसौटी पर खरा न उतरने के कारण प्रलय या महाप्रलय की धारणा को स्वीकार नही करते हैं। वे प्राकृतिक परिवर्तनो को वैज्ञानिक क्रियायें जैसे गुरुत्वाकर्षण, रसायनाकर्षण आदि मानते है।

2. कबीरपंथ : संगठन और व्यवस्था :

(क) मठ–व्यवस्था :

कबीरपथ की विभिन्न शाखाओं मे सगठन और प्रबन्ध व्यवस्था स्वतत्र रूप से स्थापित की गयी है। उनमें एकरूपता केवल महत की व्यवस्था के रूप में ही दिखाई देती है। महन्त का पद सभी शाखाओं मे पाया जाता है। महन्त के चुनाव की प्रक्रिया सभी मठो मे अलग–अलग प्रकार की है। अनेक पदाधिकारी भी मठ व्यवस्था के संचालन मे अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। आर्थिक व्यवस्था के लिये 'दीवान' या एकाउन्टेन्ट आदि की व्यवस्था अनेक मठो मे प्रचलित है। वही रूपये, पैसे आदि का हिसाब भी रखता है। पुजारी पूजा की वस्तुओ की व्यवस्था करता है, आरती इत्यादि कार्यों को सम्पन्न कराना उसका उत्तरदायित्व होता है।

'कोठारी' भोज्य पदार्थों के रख–रखाव की व्यवस्था करता है। वह 'भण्डारी' को प्रतिदिन की आवश्यकतानुसार भोज्य पदार्थों को देता है। 'भण्डारी' प्रतिदिन भोजन तैयार करवाता है। भोजन तैयार करने मे सभी साधु सहायता करते है। मठ मे स्वामी नौकर कोई नहीं होता बल्कि सभी कबीरपंथी साधु झाड़ू, सफाई आदि का कार्य स्वयं करते हैं और सभी भोजनोपरान्त अपने बर्तन स्वयं साफ करते है।

(ख) रहन–सहन :

कबीरपंथ मे भक्तों की दो श्रेणियां पायी जाती है। प्रथम श्रेणी मे वे लोग आते है, जो पारिवारिक जीवन व्यतीत करते हुए कबीरपथ और उसकी विविध मान्यताओ के प्रति श्रद्धाभाव रखते है और महात्माओ द्वारा दीक्षित होते है, इन्हे गृही कबीरपथी कहा जाता है। दूसरी श्रेणी में ऐसे लोग आते है, जो परिवार विछेद कर मठो मे रहकर वैरागी जीवन व्यतीत करते है। ऐसे व्यक्तियो की आचरण की भली–भॉति परीक्षा निर्धारित समय में होती है और उसमे सफल होने पर उन्हे 'वैरागी' सत की मान्यता प्रदान की जाती है।[1] विभिन्न मठो मे इसकी भिन्न–भिन्न विधिया प्रचलित है।

महन्त का स्थान कबीरपंथ मे काफी महत्वपूर्ण होता है। मठ की सम्पूर्ण व्यवस्था और कबीरपथ का प्रचार–प्रसार उसी के व्यक्तित्व पर निर्भर करता है। महन्त का जीवन काफी व्यस्त रहता है, वे भ्रमण और पंथ के प्रचार–प्रसार मे अपना काफी समय व्यतीत करते है, शिष्यगण उसके प्रति आदर भाव रखते है और महन्त भी शिष्यो को सदुपदेश देते हुए मठ का निरीक्षण करते रहते है। महन्त गृही शिष्यों के यहां जाकर उसे तथा परिवार के अन्य सदस्यो को भी सदुपदेश देता है। कुछ शाखाओं मे महन्त अपने जीवन काल मे ही अपने शिष्यो मे से किसी को उत्तराधिकारी घोषित कर देते हैं। किसी–किसी शाखा मे महन्त या आचार्य की वशानुगत परम्परा है जैसे, छत्तीसगढ़ी शाखा मे यह व्यवस्था है कि महन्त या आचार्य की संतान ही आचार्य बनती है। कुछ शाखाओ में ऐसी व्यवस्था है कि महन्त अपनी योग्यता के बल पर ही महन्त बन सकता है। कबीरपंथ की प्रधान शाखा के महन्त द्वारा सहायक मठ मे आचार्य नियुक्त करने की व्यवस्था भी रही है परन्तु कालातर में समयाभाव और दूरी के कारण मठों

1 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीरपंथ', पृष्ठ 191

को अपना उत्तराधिकारी चुनने की छूट मिली और महन्त को अपने प्रधान मठ की ओर से नये सदस्य बनाने की भी स्वीकृति भी मिली।

कबीरपथ की प्रत्येक शाखा शिष्यों के दीक्षित करने के सम्बन्ध मे, आचार विचार सम्बन्धी नियम बनाने के सम्बन्ध मे और छुआछूत के सम्बन्ध मे भी अपने सिद्धान्त बनाने मे स्वतन्त्र है। किन्ही किन्ही शाखाओ मे हिन्दू और मुसलमान शिष्यो के अलग–अलग खाने–पीने की व्यवस्था है। किन्ही–किन्ही शाखाओ की उपशाखाओं मे हिन्दू और मुसलमान नाम से अलग–अलग मठ है। जैसे, कबीरचौरा मठ काशी की उपशाखा मगहर मे मुस्लिम कबीरपथी मठ और हिन्दू कबीरपथी मठ आज भी विद्यमान है। दूसरी ओर कुछ शाखाओ में जैसे वचनवंश गद्दी, रसडा और बिद्दपुर की कबीरपंथी शाखाओं मे हिन्दू और मुसलमानो के बीच किसी प्रकार का भेदभाव नही किया जाता है। कबीरपथ के विभिन्न मठो में सदस्यो के ऊपर कठोर नियंत्रण रहता है। पथ विरूद्ध आचरण या अनियमित आचरण का बर्ताव करने पर मठ से उन्हें अलग भी कर दिया जाता है।

(ग) आय के साधन :

कबीरपथ के मठो की आय के साधनों मे जनता द्वारा प्राप्त भेट स्व से प्राप्त धन, स्वय की भूमि से प्राप्त उपज, मठों के मकानो के किराये से प्राप्त आय, पुस्तकों और पत्र–पत्रिकाओ के प्रकाशन से प्राप्त धन आदि प्रमुख रूप से उल्लेखनीय है। अधिकांश मठो के पास पर्याप्त भूमि है जिसके कारण उनकी आर्थिक दशा अच्छी है। दामाखेडा, धनौती, फतुहा, काशी और बिद्दूपुर आदि कबीरपथी मठो से सम्बन्धित इतनी अधिक भूमि है कि उससे वे उपार्जित सम्पत्ति से मठ का खर्च तो चलाते ही हैं और दान–पुण्य का भी कार्य करते है। अधिकाश मठों में जनता द्वारा भेट को स्वीकार करने हेतु दान–पात्र रखे

गये है जिसे मठो को काफी आय होती है। मगहर और काशी कबीरचौरा मठो में कबीर की समाधि के आगे दानपात्र भी रखे गये है। इसके अतिरिक्त प्रधान मठ के आचार्य जब अपने मठ से सम्बन्धित गृही और वैरागी के यहा पाते है तब भी उनको भेट स्वरूप सामग्री मिलती है जो मठ की आय मे वृद्धि करती रहती है। दामारवेडा, इलाहाबाद, दिल्ली आदि कबीरपंथी मठो ने अपना प्रेस भी खोल रखे हैं जहॉ से कबीरपथी पुस्तकों एव पत्र–पत्रिकाओ का प्रकाशन होता है। इनसे कबीरपथ का प्रचार–प्रसार तो होता है साथ ही आय भी होती है।

(घ) वेशभूषा और दिनचर्या :

कबीरपथी साधुओ की वेशभूषा और दिनचर्या में एकरूपता का अभाव दिखाई देता है इसका कारण संभवत. विभिन्न कबीरपथी शाखाओं में आचार विचार और बाह्योपचार के सम्बन्ध मे पायी जाने वाली भिन्नता रही होगी। अधिकाश कबीरपथी साधु सफेद पात्र धारण करते है, जो उनकी धारणानुसार शुद्धि और ज्ञान का प्रतीक है। कबीरपंथ के अनुयायी अधिकाशत. लगोटी और अचला धारण करते हैं। महन्त, टोपी शैली और विशेष प्रकार का पचशाल धारण करता है। दाढी रखने की प्रथा किसी–किसी शाखा मे अनिवार्य है और किसी–किसी मे अनिवार्य नही है। जैसे धनौती, फतुहा और विद्दूपुर मे इसकी अनिवार्यता नहीं है। फतुहा शाखा में जहॉ महन्त के लिये सिर और दाढी के बाल बनाना अनिवार्य है तो छत्तीसगढी की शाखा मे यह कार्य प्रधान महन्त की इच्छा पर निर्भर करता है। इसके अलावा कबीरपथ में माला और कण्ठी भी धारण करने की व्यवस्था है। कण्ठी को पंथ मे बैर त्याग एव जीव–दया का प्रतीक माना जाता है इसी तरह कबीरपथ मे 'द्वादश तिलक' का भी महत्वपूर्ण स्थान है। तिलक के रूप में ललाट पर तीन खडी रेखाये होती है। तिलक

अन्याय और पक्षपात की प्रवृत्ति समाप्त कर निष्पक्ष न्यायपूर्ण जीवन व्यतीत करने का प्रतीक रूप माना जाता है।

'कबीरपथी जीवनचर्या' मे अभिलाषदास ने कबीरपंथी वैरागी' और गृही शिष्यो के रहन–सहन वस्त्र भोजनादि के बारे मे वर्णन किया है।[1] उनका भोजन सादा शाकाहारी और तेल मसाला रहित होता है। प्रत्येक कबीरपंथी मठ मे दिन में दो बार भोजन ग्रहण करने का नियम है। कबीरपथ मे बदगी का महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। गुरु और श्रेष्ठ महात्माओ को तीन बार 'बन्दगी' की जाती है उनकी धारणा है कि बन्दगी से व्यक्ति त्रिताप और त्रिगुण जाल से मुक्त हो जाता है। प्रातःकाल शय्या से उठते समय, फिर नित्य कर्म से निवृत्त होकर और अत मे भोजनोपरान्त बन्दगी की जाती है। किसी किसी शाखा मे पाच बार 'बदगी' किये जाने का भी प्रावधान, है, जैसे कबीरपथ की कबीर पारख सस्थान शाखा मे इस शाखा मे सर्वप्रथम प्रातःकाल सोकर उठने पर, फिर स्नान के पश्चात उसके बाद भोजनोपरान्त तत्पश्चात सायकाल मे और अत में सोने के पूर्व बदगी की व्यवस्था है।[2] इस प्रकार विभिन्न कबीरपथी शाखाओ में आचार–विचार और सगठन और विचारधारा मे अन्तर दिखाई देता है।

3. साधनात्मक पक्ष और विचारधारा :

(क) साधनात्मक पक्ष और विचारधारा :

कबीरपथ के साधनात्मक पक्ष के अन्तर्गत ज्ञान, भक्ति, कर्म और नाना प्रकार के बाह्योपचारों को शामिल किया गया है। कबीरपथ की विभिन्न शाखाओ में साधनात्मक पक्ष के सम्बन्ध में काफी साम्य तथा वैषम्य दिखाई देता है। यह साम्य और वैषम्य कबीरपंथ के ईश्वर और अनीश्वरवादी विचारधारा मे विभाजन के कारण है।

1 अभिलाष दास, 'कबीरपथी दिनचर्या', पृष्ठ 11
2 अभिलाष दास, 'कबीरपथी दिनचर्या', पृष्ठ 26

(i) ज्ञानात्मक पक्ष :

कबीरपंथ मे ज्ञान को मुक्ति का साधन माना गया है

"ज्ञान गहे बिनु मुक्ति न होयी, कोटिक लिखे पढ़े जो कोई।।[1]

"कबीरपथी ग्रन्थो, जैसे 'कबीरवानी', 'मुहम्मद बोध, आदि मे ज्ञान के विविध भेदो का वर्णन किया गया है। इनमे ब्रह्मज्ञान, अनभैज्ञान, त्वचाज्ञान, क्षुद्रज्ञान, रूहण ज्ञान आदि उल्लेखनीय है। आत्मज्ञान को सभी कबीरपथी शाखाओ मे माना गया है। ईश्वरवादी और अनीश्वरवादी दोनो ही शाखाएँ सद्गुणो के अभ्यास एव 'अहंत्याग' द्वारा आत्मस्वरूप के अपरोक्ष बोध को वास्तविक ज्ञानमार्ग मानती है। अनीश्वरवादी पारख ज्ञान को वास्तविक मानते हैं क्योंकि इसमें किसी भी कल्पना के लिये कोई स्थान नही है। 'पारख' का सामान्य अर्थ है, परीक्षण (परख), यह ज्ञान तर्क बुद्धि पर आधारित ज्ञान है।

(iii) भक्ति सम्बन्धी पक्ष :

कुछ कबीरपथी शाखाओं मे भक्ति को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है जैसे– धनौती और छत्तीसगढ़ी शाखा मे। अनीश्वरवादी शाखाएँ जैसे बुरहानपुर और काशी की शाखा भक्ति को महत्वपूर्ण नही मानती है। कबीरपंथी ग्रन्थो में 'ज्ञान प्रकाश', 'ज्ञान बोध,' 'भवतारण बोध', मे सत्य प्राप्ति के साधनो मे भक्ति को श्रेष्ठ माना गया है। कबीरपंथ की छत्तीसगढी शाखा के अनुसार मुक्ति के लिये भक्ति एक आवश्यक तत्व है। भक्ति के साधनो मे गुरु, सत्सग, सत्वगुण, प्रेम और विरह के अतिरिक्त सयोग को भी कबीरपंथ में स्वीकार किया गया है। इन तत्वो को कबीर ने भी माना है।

---

1 'हनुमानबोध' पृष्ठ 129

(iii) योग :

योग के अन्तर्गत कबीरपंथी की विभिन्न शाखाओ में हठयोग, स्वरयोग, राजयोग ध्यानयोग, सहस्र योग, सुरतियोग का वर्णन किया गया है। कबीरपथी साहित्य मे इस बारे में काफी चर्चा मिलती है। भवतारणबोध, 'कबीर वानी,' 'आगम निगम बोध' मे हठयोग की चर्चा की गई है परन्तु बहुत अधिक महत्त्व नही दिया गया है। प्राण वायु से सम्बन्धित होने के कारण 'स्वरयोग' का साधनात्मक पक्ष में महत्वपूर्ण स्थान है। 'पवन स्वरोदय' नामक कबीरपथी ग्रन्थ में 'स्वरोदय सिद्धान्त' का विस्तार से वर्णन किया है। सुरति शब्द योग शब्दाद्वैत सिद्धान्त पर आधारित सुमिरन या जप योग साधना है। वृत्ति जपपूर्वक स्व स्वरूप की अनुभूति का साधन राजयोग कहलाता है।[1] सहज की महत्ता 'धर्मबोध' मे वर्णित है। सहजयोग में सासारिक कार्य करते हुए भी साधक परमतत्व को पहचान कर उसे पा सकता है। अनीश्वरवादी कबीरपथी हठ, राजयोग आदि को निकृष्ट और अनावश्यक मानते हैं।

साधना का उद्देश्य मोक्ष होता है, परन्तु कबीरपंथ मे इस सम्बन्ध मे अलग विचार व्यक्त किये गये है। कबीरपंथ के अनुयायी जीव मुक्ति और विदेहमुक्ति मे विश्वास करते हुए भी परम्परागत भारतीय परम्परा पर आधारित न होकर स्वतंत्र विचारधारा रखते है कबीरपंथ की ईश्वरवादी और अनीश्वरवादी दोनो शाखाएँ एक स्वर से घोषणा करती है कि मरने के बाद मुक्ति की आशा रखने वाला कभी मुक्त नही होता। अनीश्वरवादी कबीरपथ के समर्थको की मान्यता है कि जिसके मोह का क्षय हो गया, जो आत्म स्वरूप मे स्थिर हो गया, वह जीवन मे ही मुक्त हो जाता है। ईश्वरवादी कबीरपथ के अनुयायी सतो की मान्यता है कि अविद्या का आवरण हटने पर अपने ब्रह्म स्वरूप मे लौटना जीवन

1 डॉ0 उमा ठुकराल, 'कबीरपथ साहित्य', 'दर्शन एव साधना', पृष्ठ 340

मुक्ति है। विदेह मुक्ति की धारणा को छत्तीसगढी शाखा मानती है। अनीश्वरवादी शाखा के अनुसार, विदेह मुक्ति की अवस्था मे लोक, सत्यलोक, स्वर्ग आदि की स्थिति भ्रम है, इस अवस्था में आनन्द का अभाव होता है।

(iv) बाह्योपचार :

कवीरपंथ के साधनात्मक पक्ष के अन्तर्गत वाह्योपचार का वर्णन भी आवश्यक है। कवीर ने वाह्योपचारों का विरोध और हमेशा मन की शुद्धता और हृदय की निष्पक्षता पर जोर दिया परन्तु इसके विपरीत कबीरपथ में अनेक प्रकार के बाह्योपचारो को अपनाया गया है। व्रत, तीर्थ, यज्ञ, चौका आरती, पान परवाना और तिनुका तोडना आदि बाह्योपचार को कबीरपथ की लगभग सभी शाखाऍं विभिन्न रूपो मे स्वीकार करती है। छत्तीसगढी शाखा मे 'पूर्णिमाव्रत' का विशेष महत्व है। इस व्रत के पालन से साधनों को सिद्धि, मुक्ति आदि मिलती है। कबीरपथ मे चौका आरती को मोक्ष के साधन के लिये अनिवार्य माना जाता है। इसकी विधि केवल महन्त ही सम्पन्न करा सकते है। चौका आरती को कबीरपथ मे सात्विक यज्ञ कहा जाता है। यह आनदी चौका, जन्मौती या सोलह सुत का चौका, चलावा चौका और एकोतरी चौका चार प्रकार का होता है। चौका विधि सम्पन्न करने के लिये चावल का आटा, गेहू का आटा, घी, दूध, तेल, चन्दन, इत्र, ताबे के पैसे, इलायची, कपूर, अगरबत्ती, फूल, कपास आदि सामग्री की जरूरत पडती है। चौका विधि सम्पन्न हो जाने के पश्चात 'ज्योत प्रसाद' बाटा जाता है। जो आटा, घी और नारियल आदि से बनाया जाता है। कबीरपथ में चौका विधान को त्रिदोष (मल, आवरण और विक्षेप) नाशक माना गया है। इन दोषो का नाश कर्म, उपासना और ज्ञान से होता है। कबीरपंथी ग्रंथ मे 'कबीरोपासना पद्धति' में नित्य कर्म की विधियो का वर्णन किया गया है। सोने, जागने, मनन, अध्ययन आदि के सम्बन्ध मे विधि का इसमे वर्णन किया

गया है। कबीरपथ की अधिकांश शाखाओ मे शवो को जमीन मे गाडने की विशेष विधि प्रचलित है। गृहस्थ कबीर पथियो का अग्नि सस्कार भी किये जाने का प्रावधान है। इस प्रकार वाह्योपचार कबीरपथ की विभिन्न शाखाओ मे मान्यता प्राप्त कर चुके है।

(ख) विचारधारा :

कबीरपथी विचारधारा के अन्तर्गत धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक आदर्शों की चर्चा की जा सकती है। किसी भी विचारधारा मे बौद्धिकता और तार्किता मूल तत्व होते हैं, इस सम्बन्ध में कबीर पथियों की प्रतिक्रिया और स्वीकृति उनकी बहुमुखी विचार प्रवाह की परिचायक मानी जा सकती है।

(i) धार्मिक :

कबीरपथी धार्मिक विचारधारा में सदाचार को प्रमुख स्थान दिया गया है। कबीरपथी विचारकों के अनुसार शारीरिक धर्म, आत्मिक धर्म, सामाजिक धर्म, गुण धर्म, देश धर्म, राजधर्म आदि सभी धर्म तीन कर्तव्यों (अपने प्रति, दूसरो के प्रति और ईश्वर के प्रति) का रूपान्तर है।[1] कबीर मंशूर के अनुसार सदाचार से ही यज्ञ, योग, जप, तप आदि कर्मो से सुनिश्चित फल की प्राप्ति होती है। सदाचार से ही सद्गुरु की प्राप्ति होती है और वही मोक्ष का मार्ग बताता है। कबीरपथ की विचारधारा मे धर्म मे कर्मकाण्ड की अपेक्षा सदाचार को महत्व दिया गया है। उनका धर्म सहिष्णु और साम्यवादी होते हुए चितन शील और विश्वबन्धुत्व पूर्ण है और मानवीयता पर आधारित है। वाह्योपचारो को जहॉ कबीरपंथ की छत्तीसगढी शाखा जहॉ प्रश्रय देती है, वही बुरहानपुर वाली जैसी शाखाऍ इसकी कट्टर विरोधी है।

---

1 'कबीरोपासना पद्धति', पृष्ठ 9, 10

(ii) सामाजिक :

कबीरपथी सामाजिक विचारधारा जाति और वर्णव्यवस्था के विरोध और वैज्ञानिक तर्कों पर आधारित है। वे इस सम्बन्ध मे कबीर के तर्को को ही दुहराते है। कबीरपथी सतो ने सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने और हीनभावना से मुक्त करने के लिये सबसे पहले शूद्रों को सर्वोपरि स्थान दिया है। जीवधर्मबोध के अनुसार, सबसे पहले कोरी, चमार को दीक्षित करके उनका उद्धार करो उसके बाद अन्य जातियो को।[1] आधुनिक सामाजिक समस्याओ जैसे, परिवार नियोजन, स्त्री स्वातत्रय और फैशन पर भी उन्होने अपने विचार व्यक्त किये है, वे आज के भौतिकवादी विचारक छात्र–छात्राओ को परिवार नियोजन के कृत्रिम साधनो की शिक्षा देना चाहते हैं। इसी प्रकार कबीरपंथी नारी के कामिनीरूप (विषवेली, नागिनी, वाधिनी आदि) की आलोचना करते हैं, परन्तु गृह स्वामिनी और माता के रूप में उसे ऊँचा स्थान भी देते हैं। फैशन की अनावश्यक भौतिक स्पर्धा और प्रदर्शन की वस्तु पाकर आलोचना करते हुए वे सादा जीवन और उच्च विचार का समर्थन करते है।

(iii) राजनीतिक :

राजनीतिक विचारधारा के सम्बन्ध में कबीरपथियो की धारणा का स्पष्ट वर्णन नहीं मिलता। सभवतः इसका कारण यह रहा होगा भक्ति भावना और पंथीय कार्यो मे व्यस्तता परन्तु कुछ कबीरपथी ग्रन्थों, जैसे– 'सुल्तान बोध,' 'अमर सिंह बोध', भोपाल बोध, 'वीर सिंह, वोध, 'जगजीवन बोध,' आदि के नायक राजा, है। जिनकी (विलासी प्रवृत्ति और भक्ति मार्ग से विमुख रहने के कारण आलोचना की गई है।[2] कुछ आधुनिक कबीरपथी ग्रन्थ जैसे कबीर मशूर,, भक्तिपुष्पांजलि आदि अहिसा पर आधारित राजनीतिक विचारधारा का समर्थन

1 'जीवधर्म बोध', पृष्ठ 26

2 'जगजीवन बोध' पृष्ठ 31, 32

करते है। कुछ कवीरपथी आचार्य समाजवाद के भी समर्थक है जैसे– महन्त बालकृष्ण दास साहब, ऐसे समाजवादी शासन के पक्षधर हैं, जिसमे उत्पादन विनिमय और वितरण के अधिकार सभी के लिये सुरक्षित हो।

4. कबीरपंथ साहित्य :

कवीरपथ के साहित्य के विविध रूप देखने को मिलते हैं। कबीरपथ से संबधित सभी रचनाओ मे अपनी विशिष्ट विचारधारा की श्रेष्ठता पर काफी बल दिया गया है।[1] कवीरपंथ का प्रारंभिक साहित्य विशेष रूप से छत्तीसगढी शाखा से सम्बन्धित है। छत्तीसगढी शाखा के साहित्य मे कबीर को दिव्य अवतारी पुरूष सिद्ध करने की चेष्टा की गयी है। बुरहानपुर वाली शाखा, काशीवाली शाखा और फतुहा वाली शाखा आदि कबीरपथ की शाखाएँ छत्तीसगढी शाखा के विचारो का विरोध करते हुए वैज्ञानिक दृष्टिकोण के आधार पर कबीर के विचारो को पोषित करने का प्रयास अपने साहित्य के माध्यम से करती है।

कबीरपथ के साहित्य को वर्गीकृत करने का प्रयास डा0 परशुराम चतुर्वेदी, डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी और डॉ0 उमा ठुकराल आदि ने किया है। डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी ने कबीरपंथी साहित्य को पांच भागो में बाटा है। जो इस प्रकार है– 1 पौराणिक साहित्य 2 जीवनी साहित्य 3 बाह्योपचार सम्बन्धी साहित्य 4 मत सम्बन्धी साहित्य 5 अन्य सामग्री सम्बन्धी साहित्य।[2] डॉ0 परशुराम चतुर्वेदी ने 'कबीर साहित्य की परख मे विषय के आधार पर' कबीरपंथी साहित्य को पाच वर्गों मे बाटा है। 1. चरितकाव्य 2. मत साहित्य 3 बाह्योपचार साहित्य 4 व्याख्यापरक साहित्य 5. पन्थ साहित्य।[3] डॉ0 उमा ठुकराल ने कबीरपंथी साहित्य की विस्तृत ढंग से व्याख्या करते हुए उसे पौराणिक सम्बन्धी,

---

1 डॉ0 उमा ठुकराल, 'कबीरपथ साहित्य', 'दर्शन एव साधना', पृष्ठ 76
2 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, कबीर और कबीरपंथ', पृष्ठ 37
3 डॉ0 परशुराम चतुर्वेदी, 'कबीर साहित्य की परख', पृष्ठ 71

वाह्योपचार सम्बन्धी और मठ सम्बन्धी साहित्य मे वर्गीकरण करके उसके अनेक भेद किये है।[1]

कबीरपथी साहित्य को निम्नलिखित वर्गों के अन्तर्गत विभक्त करके अध्ययन किया जा सकता है।

क पौराणिक साहित्य।

ख सैद्धान्तिक साहित्य।

ग. वाह्योपचार सम्बन्धी साहित्य।

घ टीकाएँ।

ड लोक साहित्य।

च फुटकर साहित्य, जैसे पजे, चिट्ठियां आदि।

पौराणिक साहित्य के अन्तर्गत ज्ञान सागर, दीपक सागर, खुदवानी, लक्ष्मणबोध, गरूडबोध, आगम निगम बोध, अम्ब सागर, कबीर मंशूर आदि कृतियॉ उल्लेखनीय है। इस साहित्य मे सृष्टि की उत्पत्ति और उसके विस्तार, कबीर के काल्पनिक अवतारों की कथायें उल्लिखित है।

सैद्धान्तिक साहित्य के अन्तर्गत निर्णयसार, मानव कल्याण, पचग्रथी, दीपक सागर, कर्मबोध, भवतारण बोध, मुक्ति बोध, ज्ञान बोध, हठ्योग, राजयोग, सहजयोग आदि कृतियॉ उल्लेखनीय हैं। इस वर्ग का इस साहित्य दार्शनिक, धार्मिक और साधनात्मक सिद्धान्तों का वर्णन करता है।

बाह्योपचार सम्बन्धी साहित्य के अन्तर्गत अमरमूल, कबीरवाणी, धर्मदास गुसाईं की समाधि, सुमिरन बोध, चौका स्वरोदय, सध्यापाठ, पूर्णिमा व्रत कथा, गुरु महिमा तथा कबीरोपासना पद्धति आदि कृतियॉ मुख्य रूप से उल्लेखनीय है। इनमे कबीरपन्थी विभिन्न शाखाओं के नाना प्रकार के बाह्योपचारों को सम्पादित करने की विधिया एव नानो मत्रो से सम्बन्धित अनेक पुस्तको की

---

1 डॉ0 उमा ठुकराल, 'कवीरपथ साहित्य', 'दर्शन एव साधना', पृष्ठ 78

रचना भी हुई है। इस प्रकार का साहित्य अधिकतर छत्तीसगढी शाखा में ही उपलब्ध है।

टीका ग्रन्थो मे आने वाली रचनाएं दो प्रकार की है। 1 कबीरकृत वीजक की टीकाए 2 विभिन्न कबीरपंथी ग्रंथों की टीकाए। प्रथम वर्ग मे बीजक काव्य, शिशुवोधिनी टीका त्रिजा टीका, बीजकार्थ प्रबोधिनी आदि तथा दूसरे वर्ग में इक्कीस प्रश्न, निर्णयसार, एकादश शब्द, कबीर परिचय साखी, पारख विचार, कबीर मंशूर, भ्रम विध्वसिनी टीका आदि कृतियाँ उल्लेखनीय है।

लोक साहित्य के अन्तर्गत नाटक, गीतिकाव्य आदि जैसे लोकगीत सम्बन्धी विधाएं आती है, जो कि सत कवियो की पद रचनाओ पर आधारित है। छन्द पर आधारित मुक्तक जैसे सवैया, साखी, दोहावली आदि तथा अरवी–फारसी की रचनाएँ मुख्य रूप से उल्लेखनीय है। ज्ञान स्थिति बोध, कर्मबोध, कबीर मशूर, भजन अमरसागर, बारहमासा,, पारखपद शव्दामृत, शब्द विलास, धर्मदास शब्दावली आदि रचनाएं इस वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है।

फुटकर या अन्य साहित्य के अन्तर्गत पंजे और चिट्ठिया आदि उल्लेखनीय है। कबीरपंथी साहित्य के निर्माण में इनकी महत्वूर्ण भूमिका है क्योंकि इनकी प्रामाणिकता के बारे मे सदेह नही है। यह प्रमाणपत्र के रूप मे आचार्यों द्वारा बैरागियों को दिये गये हैं।[1]

क. पौराणिक साहित्य :

ज्ञान सागर

ज्ञान सागर को कबीरपथी साहित्य के अन्तर्गत महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है।[2] इस ग्रंथ में मुख्यरुप से विश्व की उत्पत्ति का वर्णन किया गया है।

---

1 डा० केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीरपथ', पृष्ठ 54

2 द्रष्टव्य डॉ० केदारनाथ द्विवेदी, 'कृत कबीर और कबीरपथ', पृष्ठ 37–38 ओर डॉ० उमा ठुकराल कृत 'कबीरपथ साहित्य', 'दर्शन एव साधन', पृष्ठ 88

इसमे पापो के बढने के कारण विष्णु के द्वारा अवतार लेने की कथा का उल्लेख किया गया है। नारद, श्रवण कुमार आदि से संबंधित पौराणिक कथाओं पर प्रकाश डाला गया है। सतीदाह, शिव की समाधि भग करने के लिए कामदेव का प्रयत्न, नारद द्वारा विष्णु के शापित होने का वर्णन रोचक ढग से किया गया है।

अनुराग सागर :

यह ग्रंथ कबीरपथी साहित्य का महत्वपूर्ण ग्रन्थ माना जाता है। यह उस समय की रचना मानी गयी है, जब प्राणनाथ (सन् 1618 से 1694) धामी सम्प्रदाय तथा जगजीवनदास (जन्म 1670ई0) के सतनामी सम्प्रदाय चलाया।[1] इसमें भी कबीर के विभिन्न युगो में अवतार धारण करने की कथा का पौराणिक घटना के रूप मे वर्णन किया गया है। यह ग्रन्थ कबीर और धर्मदास की वार्तालाप शैली मे चौपाई, सोरठा, सवैया छन्द पर आधारित है।

लक्ष्मण बोध :

डॉ0 उमा ठुकराल ने इस ग्रथ की पौराणिक साहित्य के अन्तर्गत गणना की है।[2]यह ग्रन्थ जगन्नाथ जी की स्थापना की पौराणिक गाथा का उल्लेख करता है। इसकी कई प्रतियां हैं परन्तु उनका रचना काल और लेखक का नाम ज्ञात नही है। इसमे जगन्नाथ मन्दिर के निर्माण में समुद्र द्वारा बार–बार बाधा डालने और अत में कबीर के प्रताप से समुद्र द्वारा बाधा न डालने की घटना का उल्लेख किया गया है। इस ग्रथ में लक्ष्मण का थोड़ा प्रसग है परन्तु मूलत कबीर के पौराणिक रूप का ही वर्णन है।

1 डॉ0 पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल, 'हिन्दी काव्य मे निर्गुण साहित्य', पृष्ठ 434
2 डॉ0 उमा ठुकराल कबीरपथ, 'साहित्य दर्शन एव साधना', पृष्ठ 94

खुदबानी (हस्तलिखित) :

इस पुस्तक की एक प्रति डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी को दामाखेडा से प्राप्त हुई है।[1] इसमे ज्ञानी जी और सत्यपुरुष का सम्वाद वर्णित है। इस ग्रथ में अनुराग सागर की भॉति सत्यपुरूष सृष्टि की उत्पत्ति कथा का वर्णन किया गया है। इस पुस्तक का अंत ज्ञानी जी के कबीर के रूप में अवतीर्ण होने की कहानी के रूप मे होता है।

गरूड बोध :

डॉ0 उमा ठुकराल ने इस पुस्तक को भी लक्ष्मण बोध की तरह पौराणिक साहित्य के अन्तर्गत स्थान दिया है।[2] इस पुस्तक मे कबीर द्वारा गरूड के शिष्य बनाये जाने का उल्लेख किया गया है। यह छत्तीसगढी शाखा की महत्वपूर्ण कृति है। इस पुस्तक मे जन्म जन्मान्तरवाद पर प्रकाश डालते हुए कबीर ने ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि अन्य देवो को आवागमन के बन्धन मे आबद्ध दिखलाकर समस्त देवताओ का वृहद् सम्मेलन कराया है और अत मे सगुण ब्रह्म का उपहास करके निर्गुण ब्रह्म का महत्व घोषित किया गया है।

सुल्तान बोध :

इस ग्रंथ मे कबीर द्वारा बल्ख के सम्राट अब्राहिम अद्धम को सासारिक भोग–विलास के मुक्त करने का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। इसमे अनेक अलौकिक घटनाओ से कवीर का सम्बन्ध दिखलाकर उन्हे विशिष्ट व्यक्तित्व भी प्रदान करने का प्रयास किया गया है। इस ग्रन्थ को पौराणिक साहित्य के अन्तर्गत डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी ने स्थान दिया है।[3]

---

1 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी कबीर और कबीरपथ, पृष्ठ 54
2 डॉ0 उमा ठुकराल, कबीरपंथ, 'साहित्य दर्शन एव साधना', पृष्ठ 93
3 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी 'कबीर और कबीरपथ' पृष्ठ 40

कबीर मंशूर

इस पुस्तक के बारे मे डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी ने सभावना व्यक्त की है[1] कि छत्तीसगढी शाखा में प्रचलित अधिकाधिक पुस्तको के आधार पर स्वामी परमानद दास ने इसकी रचना की है। इसमें भी सृष्टि की उत्पत्ति और विभिन्न युगों मे कबीर के अवतार धारण कर मानव को काल–जाल से मुक्त करने का विवरण गद्य मे प्रस्तुत किया गया है।

अम्बु सागर :

अम्बु सागर को डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी ने पौराणिक साहित्य मे महत्वपूर्ण स्थान दिया है।[2] यह विशिष्ट पौराणिक कबीरपथी ग्रन्थ है इसमे अद्यासुर, बलभद्र, इन्दर, पुरवन, अनुमान, चरण, नदी, कैववत्, सतयुग, त्रेतादि युगो में कबीर के अवतार ग्रहण करने तथा चमत्कारपूर्ण घटनाओ द्वारा विभिन्न राजाओं को प्रभावित कर कबीरपंथी मान्यताओं के अनुसार दीक्षित करने का वृत्तान्त दिया गया है।

ख. सैद्धान्तिक साहित्य :

इस वर्ग की रचनाओं में दार्शनिक, धार्मिक तथा साधनात्मक सिद्धान्तो पर आधारित ग्रन्थ महत्वपूर्ण है।

दार्शनिक सिद्धान्तों का निरूपण करने वाली रचनाएँ :

निर्णयसार :

यह पूरण साहब की रचना मानी जाती है। इस रचना का कबीरपथी सिद्धान्तों का वर्णन करने वाली रचनाओ मे महत्वपूर्ण स्थान है। इस ग्रथ मे

---

1 *डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीरपथ', पृष्ठ 41*

2 वही पृष्ठ 41

शिष्यों के प्रश्नो का उत्तर देते हुए गुरु को दिखाया गया है। प्रश्न ब्रह्म, जीव, माया आदि से सबधित हैं।

पारख विचार

इस ग्रथ के लेखक के बारे मे स्पष्ट जानकारी का अभाव है। यह भी प्रश्नोत्तर रूप से लिखी गयी है। कहा जाता है कि पूरण साहब के कोई योग्य शिष्य इसके रचयिता थे, जो अपने शिष्यो के द्वारा पूछे गये प्रश्नो का उत्तर देते थे, इन्ही को हस्तलिखित रूप मे 'पारख विचार' शीर्षक देकर मठ मे रख दिया गया था। इसमे कवीर छद के दार्शनिक सिद्धान्तों का वर्णन किया गया है।

पंथग्रंथी :

इसकी रचना रामरहस साहब ने की थी। जो कबीरपंथ के प्रसिद्ध सत हुए है। इसमे पाच प्रकरण हैं। प्रथम प्रकरण में अन्नमय, मनीमय, ज्ञानमय, विज्ञानमय तथा मनोमय का विस्तृत विवरण है। अन्त में निष्कर्ष दिया गया है कि इन पच कोशो मे ही उलझ जाता है और मनुष्य पारख पद को भूल जाता है।

(ii) धार्मिक सिद्धान्तों का निरूपण करने वाली रचनाएँ :

इरा वर्ग की रचनाओ मे 'दीपकसागर' और 'कर्मबोध' मुख्य रूप से उल्लेखनीय हैं।[1]

दीपक सागर .

इस ग्रन्थ मे सृष्टि उत्पत्ति की कथा के पश्चात् नरक के चौरासी कुण्डों की रूपरेखा का विस्तृत वर्णन है। इसमे स्वर्ग–नरक और कर्म सिद्धान्त का वर्णन किया गया है।

---

1 डॉ0 उमा ठुकराल कबीरपथ, 'साहित्य दर्शन एव साधना', पृष्ठ 108

इस पुस्तक का प्रतिपाद्य विषय कर्म की महत्ता का तार्किक ढग से उदाहरण द्वारा प्रतिपादन करना है। जब तक जीव कर्म बन्धन का पूर्णत वहिष्कार करके 'सहजयोग' का आश्रय नही ग्रहण करता, तब तक मुक्ति सभव नही है। लेखक के अनुसार कबीर ही मुक्त है और ससार कर्मजाल मे उलझा हुआ है।

(iii) साधनात्मक सिद्धान्तों का निरूपण करने वाली रचनाए :

(i) भक्ति विषयक

(ii) ज्ञान विषयक

(iii) योग विषयक

भक्ति विषयक रचनाओं में 'भवतारण बोध', 'मुक्तिबोध' आदि प्रमुख है। इनमे ग्रथो मे भक्ति के विभिन्न रूपो और साधनों पर प्रकाश डाला गया है। 'आत्म बोध' सहज भक्ति की महत्ता स्थापित करता है और नाम तथा गुरु का महत्व बताता है।

ज्ञान विषयक ग्रन्थो में 'ज्ञान बोध', 'ज्ञान स्थिति बोध' मूल ज्ञान आदि मुख्य हैं। इसमे सत्य पुरूष प्रदत्त 'मूल ज्ञान' को ही सत्य ज्ञान माना गया है। इन ग्रन्थो के अनुसार यह ज्ञान कबीर के उपदेशों द्वारा ही ग्रहण किया जा सकता है और केवल इसी ज्ञान द्वारा मनुष्य मुक्त हो सकता है।[1]

योग के विविध रूपो का वर्णन छत्तीसगढी शाखा के 'काया पांजी', 'सतोष वोध', 'कबीरवानी', आदि मे हुआ है। यह रूप है हठयोग, राजयोग, सहजयोग, स्वरयोग और सुरति शब्द आदि। आत्मबोध, जीवधर्म बोध, धर्मबोध

---

1 डॉ0 उमा दुकराल, 'कबीरपथ, साहित्य दर्शन एव साधना', पृष्ठ 109

आदि मे मुख्यत सहजयोग के स्वरूप का निरूपण किया गया है। 'पचमुडा', श्वासगुजार, ज्ञान स्वरोदय मे स्वरोदय सिद्धान्तो का विवेचन मिलता है।

(ग) बाह्योपचार सम्बन्धी साहित्य :

इस वर्ग मे विशेषरूप से उल्लेखनीय ग्रथ है अमरमूल, कबीरवानी, सुमिरनबोध, चौका स्वरोदय, सध्यापाठ, गुरुमहिमा, कबीरोपासना पद्धति।

अमर मूल

डॉ० एफ०ई० की ने इस रचना का रचना काल 1800 ई० माना है और इसकी पुष्टि मे इसमे छत्तीसगढी शाखा के आठवे गुण हकनाम साहब की विनयशीलता के उल्लेख को उद्धृत किया है।[1] इस रचना के आरभ मे छत्तीसगढी शाखा के सुरतसनेही नाम तक के गुरुओ की वन्दना की गयी है। इसमे धर्मदास की गोष्ठी शैली अपनायी गयी है और पथ चलाने की विधि का उल्लेख कबीर के मुह से कराया गया है। इस पंथ मे प्रचलित बाह्योपचारो का रहस्य समझाकर पाठको में कबीरपथ के प्रति श्रद्धा जागृत करने का प्रयास किया है। इस ग्रथ मे नारियल, चौका विधि, आरती, पान परवाना इत्यादि की मीमांसा करने के लिए दैनिक क्रियाओ के लिए निर्धारित विभिन्न मत्रो का उल्लेख मिलता है।

कबीरवानी :

इस पुस्तक के रचनाकाल और रचनाकर्ता के नाम के बारे मे स्पष्ट जानकारी के अभाव के कारण विद्वानो ने केवल अनुमान व्यक्त किये है। डॉ० पीताबर दत्त बडथ्वाल के अनुसार कबीरवानी, नाम से सूचित होता है कि यह

---

1 डॉ० एफ०ए० की, 'कबीर एण्ड हिज फालोवर्स', पृष्ठ 432

कबीर की रचना है।[1] सन् 1775 मे होने वाली घटना की भविष्यवाणी करना इस बात का प्रमाण है कि इसकी रचना काफी पीछे हुई होगी। इसमे चार धर्म गुरुओ का वृतान्त, पाजीभेद, चौका, माहात्म्य, द्वादशपथ, कबीरपथी वश परपरा और कबीरपथी बाह्योपचारो का भी विवेचन हुआ है।

सुमिरन बोध :

सुमिरनबोध में तीन खण्ड हैं। पुस्तक में प्रभात, मध्यान्ह और सन्ध्या समय के लिए विभिन्न प्रकार के गायत्री मंत्रो का उल्लेख हैं। कबीरपथ मे प्रचलित लगभग सभी प्रकार के मत्रो से परिचित होने के लिए यह अत्यन्त उपयोगी ग्रन्थ है।

चौका स्वरोदय

इस ग्रन्थ में मकर सक्रांति, कबीर बानी, ध्यानभेद, लग्न भेद इत्यादि की साम्प्रदायिक ढग से व्याख्या की गयी है।

"संध्या पाठ" :

इस ग्रन्थ में पूरण साहब कृत बीजक की त्रिज्या टीका की तथा 'वैराग्य शतक' और 'निर्णय सार' दो पुस्तकों के आदि और अन्त की स्तुतियो का संग्रह हुआ है। इसमे केवल बन्दना के पद हैं। कबीरपथ मे इसका पाठ सध्या–समय किया जाता है।

'गुरुमहिमा' –'पूनो महात्म्य' :

इस पुस्तक के आरंभ मे गुरुमहिमा का उल्लेख फिर 'वृहद पूनो' कथा का आरभ होता है। वृहद पूनो कथा के पश्चात क्रमश लघुपूनो, वरसाइत–महिमा, सुमिरण षडकर्म विधि इत्यादि के प्रकरण आये है। यह भाग

---

1 डॉ0 पीताबरदत्त बडथ्वाल, 'हिन्दी साहित्य मे निर्गुण सम्प्रदाय', पृष्ठ 432

धर्मदास और कबीर के वार्तालाप शैली मे है। अन्त मे सन्ध्या पाठ, कायापाजी, श्वासभेद, टकसार और मुक्त पत्रिका मे कबीरपथी वाह्योचारो का वर्णन है।

कबीरोपासना पद्धति :

इसके सम्पादक श्रीयुगलानद बिहारी है। सम्पादक के अनुसार इस ग्रथ की रचना कबीर मशूर के अनन्तर ही हुई होगी।[1] कबीर की उपासना विधि का ज्ञान प्राप्त करने के लिए यह पुस्तक विशेष उपयोगी है। इसे 11 विश्रामों मे विभक्त किया गया है। सप्तक तक 'मृदा और वैरागी' की नित्य कर्म विधि पर प्रकाश डाला गया है। शेष मे अधिकतर तत्सबधी मंत्रों का चयन हुआ है। पुस्तक के अत मे 'कबीर चालीसा' को भी जोडा गया है।

(घ) टीकाएँ :

टीका ग्रन्थ सबधी साहित्य मे श्रेणी के आने वाली रचनाए गद्य मे है। इस वर्ग की रचनाए दो प्रकार की हैं।

(i) कबीर बीजक की टीकाएँ :

इस वर्ग मे श्री सदाफल दास कृत 'बीजक भाष्य' स्वामी हनुमान दास साहब कृत 'शिशुबोधिनी टीका, आचार्य पूरण साहब कृत, 'त्रिज्या टीका', श्री विचारदास शास्त्री कृत बीजकार्थ प्रबोधिनी टीका और बाबा राघवदास जी कृत 'बीजक मूल सर्वांग पद प्रकाशित टीका मुख्य रूप से उल्लखनीय हैं। इन रचनाओ मे विद्वानो ने अपने विशिष्ट दृष्टिकोण से कबीर बीजक पर टीका करते हुए अपने पथ के धार्मिक, दार्शनिक और साधनात्मक सिद्धान्तो का निरूपण किया है।

---

1 सम्पादक युगलानद बिहारी, 'कबीरपथी शब्दावली', पृष्ठ 11

इन विद्वानो ने हनुमानदास और विचारदास की विचारधारा अद्वैतवादी और लगभग एक समान है। पूरण साहब और राघवदास की धारणा द्वैतवादी है और एक–दूसरे से काफी समानता रखती है। दूसरी सदाफल दास की टीका भिन्न प्रकार की विशिष्ट विचारधारा पर आधारित है।

(ii) कबीरपंथी ग्रन्थों की टीकाएँ :

इस वर्ग में 'इक्कीस प्रश्न', 'निर्णयसार' 'एकादश शब्द', 'पारख विचार', 'कबीर परिचय साखी', 'भ्रम विध्वंसिनी टीका' संध्या पाठ की भावार्थ बोधिनी टीका, 'न्याय नामा' 'तिमिर भाष्कर', 'हस मुक्तावली' आदि मुख्य रूप से उल्लेखनीय है। इसमे अधिकांश रचनाएं बुरहानपुर वाली शाखा से सबधित टीकाएं है, जबकि स्वामी युगलानद बिहारी कृत 'हंस मुक्तावली टीका' पद्यबद्ध है तथा छत्तीसगढी शाखा से संबंधित है।

इक्कीस प्रश्न के लेखक श्रीराम साहब है। इसमें इक्कीस प्रश्नो का वर्णन है जो ईश्वर और जीव से सबधित है। 'निर्णय सार' की रचना पूरण साहब ने की थी। इसमे भी प्रश्नोत्तर शैली में ब्रह्म, जीव, माया आदि से संबधित जानकारी दी गयी है। 'पारख विचार' मे दार्शनिक सिद्धान्तो का विवेचन किया गया है। 'तिमिर भाष्कर' में ग्रन्थकर्ता ने सत्यार्थ प्रकाश, पारख विचार सागर, वृत्ति प्रभाकर आदि ग्रन्थो की कतिपय बातो को भ्रमात्मक समझकर उनमे प्रतिपादित सिद्धान्तों की टीका टिप्पणी की है और ब्रह्म, जीव तथा जगत् के संबंध मे विचारो का प्रतिपादन किया है। 'हस मुक्तावली' मे मनुष्य के स्वस्थ भावों और अस्वस्थ मनोविकारो के पारस्परिक सघर्ष की चर्चा करके अतत स्वस्थ भावो की विजय घोषणा की गयी है। मन जब प्रवृत्ति को उपेक्षित करके निवृत्ति मार्ग द्वारा 'पारख पद' को प्राप्त करता है तब वह स्थिर होता है और उसे सतत् सुख की प्राप्ति भी होती है।

(ङ) लोक साहित्य :

(i) छंद पर आधारित मुक्तक रचनाएँ :

सवैया :

'कवीरोपासना पद्धति' मे सवैयो का उल्लेख है, जो 'कबीर भानु वियोग सवैया' के नाम से उल्लिखित इनमे रात्रि के रूपक के माध्यम से अज्ञानवश सद्गुरु कबीर के वियोग का दुख झेलने वाली आत्मा की दशा का वर्णन प्रतीको के माध्यम से किया गया है। 'सवैया पद बीसा' साधु तितिक्षादास की रचना है जिसमे बोधवृत्ति का प्राधान्य है।

साखी :

साखी को दोहा छद ही माना गया है। कबीरपथी रचयिताओ ने प्रबन्ध रचनाओ मे चौपाइयो के अनन्तर दोहे के समान ही इनका प्रयोग किया है। 'सध्या साखी', प्रात साखी, मध्याह्न साखी आदि कबीरदासना पद्धति मे संग्रहीत स्तुतिपरक मुक्तक है। 'निर्णय शतक साखी' और 'साखी रामदश शतक' भी महत्वपूर्ण रचनाएँ हैं।

कवित्त और कुण्डलियॉ :

'कवित्त पद चालीसा' कवित्त छद मे है, जिसमें भक्ति के विभिन्न अगों विनय, श्रवण, मनन, कीर्तन, स्मरण, पाद सेवन, अर्चन वेदन आदि का वर्णन है और भक्ति के विभिन्न रूपो दास्य, सख्य आदि का निरूपण है। 'कुण्डलियॉ, पद चालीसा' कुण्डलियॉ छंद में हैं जिनमे बुरहानपुर शाखा मे सिद्धान्तो पर प्रकाश डाला गया है।

दोहावली :

स्वामी हनुमानदास साहेब कृत 'तत्वार्थ दोहावली' पूज्य खण्ड, वर्णाश्रम खण्ड, धर्माधर्म काण्ड, सिद्धसाधना काण्ड, ज्ञानादि काण्ड, सन्तमत काण्ड खण्डो मे विभक्त है। इस रचना का दोहा अर्थ की दृष्टि से स्वतंत्र अस्तित्व है।

पूजादि से सम्बन्धित रचनाएँ :

चौका विधान और छत्तीसगढी शाखा से सम्बन्धित 'धरमदास की शब्दावली', 'शब्द विलास,' बालक भजनमाला, भजन अमर सागर' कबीरपासना पद्धति आदि रचनाएँ महत्वपूर्ण हैं।

ऋतु उत्सव मूलक रचनाएँ :

इस वर्ग मे ऋतुआश्रित और उत्सवमूलक काव्य उल्लेखनीय है। बसन्त, होली, हिण्डोला, बारहमासा ऋतुआश्रित मे और मंगल सोहर आदि उत्सवमूलक में आते है। आचार्य रामस्वरूप साहब कृत 'बालक भजन माला' मे सग्रहीत ग्रीष्म ऋतु भजन, वर्षा भजन, शरद ऋतु भजन, शिशुर ऋतु भजन, बसन्त ऋतु आश्रित मुक्तक रचनाएँ है। 'धर्मदास की शब्दावली' में संग्रहीत 'बारहमासा' भी इसी तरह की रचना है। ये सभी रचनाएँ केवल पथीय सिद्धान्तो पर प्रकाश डालती है। छत्तीसगढी शाखा से सम्बन्धित चौका विधान के अवसर गाये जाने वाले विभिन्न मगल शब्द तथा प्रगट मगल तथा जन्मौती मगल आदि उत्सव मूलक वर्ग मे उल्लेखनीय है।

(ii) अरबी–फारसी की काव्यात्मक रचनाएँ :

शेर, गजल, नज्म, मुरूम्मत आदि अरबी फारसी के विविध काव्यरूप उर्दू के माध्यम से कबीरपथी साहित्य मे मिलते हैं। 'कबीर मंशूर' मूलत.' उर्दू भाषा मे ही है।

गजल :

कबीर मशूर मे सग्रहीत गजलो की सख्या 200 से अधिक है। यह भक्ति ज्ञान, नैतिक उपदेश, गुरु, ईश्वर, दार्शनिक सिद्धान्तो के खण्डन और मण्डन आदि विषयो से सम्बन्धित है।[1] इनमे कबीर के अवतारी स्वरूप और लीलाओ का सत्यपुरुष, सत्यलोक और हस (मुक्तात्माओं) के रूप का वर्णन हुआ है।

उदाहरण :

जिसे कहते जगत्‌कर्ता, कहां उसका ठिकाना है ?
फकत वाणी का डंका है, बांझ–सुत का कहना है।। (टेक)
जो व्यापक है चराचर में, खोला निज नैन से देखो।
जीव को छोड़ देने पर वो मुर्दा क्यों सडाना है।
कहो जो एक देशी है कौन से देश में रहता?
रूप रेखा किया गुण की कहो किसने पिछाना है।
रूपरेखा जिसे इच्छा, नही प्रयत्न भी जिसको।
बिना इच्छा जगत् रचता, महत भी न लजाता है।
तुम्हें जो मुक्त होना हो पक्षापक्ष को छोड़ों।
शरण कबीर आ "भगवत', न आना न जाना है।।[2]

नज्म :

कबीर मशूर में नज्मो के विषयो में मुख्य रूप से पुनर्जन्म सिद्धान्त, अहिंसा पालन, अहत्याग और भक्ति मार्ग के अनुरूप का उपदेश आदि उल्लेखनीय है।[3] कबीर मंशूर मे नज्म का प्रयोग हुआ है। गजलो की तुलना मे नज्म की सख्या कम है।

उदाहरण :

आफत है मफत यह नौ कोश दो जख है किसी–किसी को फिरदोस।।
कोई बन्द हुआ है कोई मौला। मफलूक है कोई शुजाउदौला।।
राहत नहीं है जीव की जराहत मुफलिस हुआ छोड बादशाहत।।

---

1 डॉ० उमा ठुकराल, 'कबीरपथ, साहित्य, दर्शन एव साधना', पृष्ठ 118
2 'पारख पद शब्दामृत', भागवत भजनमाला, शब्द 88
3 'कबीर मशूर', पृष्ठ 159, 739, 1030, 1125 आदि

हिर्स हैवान रूख खां हो यह खुमस खवीस दिले दवां हो।।
दिलदार हिला--मिला न दिलदार। को गौहर जौहरी खरीदार।।
क्या जाने कोई भेद अन्दर बन्दर है बदस्त दिल कलन्दर।[1]

रेखता :

रेखता का अर्थ होता है बनाना, ईजाद करना या नयी वस्तु का निर्माण करना। रेखता गीत या छद की नयी शैली मानी जाती है, जिसमे फारसी ख्याल हिन्दी के मुताबिक और दोनो जबानो के सऊद एक राग और एक ताल मे बधे होते हैं। 'आत्मबोध', 'जीवधर्मबोध' और 'शब्द प्रकाश' मे रेखता का प्रयोग हुआ है।

उदाहरण :

अधर दरियाब दरगाह कुछ अजब है, निर्मली ज्योति जहॉ खूब सांई।
ज्योति के ओट यम चोट लागे नहीं, तत झंकार ब्रह्माण्ड मांही।।
ज्ञान बाग जहॉ गैब चॉदना, वेद कितेब की गम्म नाहीं,।
खुल गये चश्म जब इश्म सब पशम है, दीन अरू दुनी का काम नाहीं।
कहे कबीर यह भेद विरला लहै, झलमले ज्योति जहॉ झूले झांहीं।।[2]

कव्वाली :

यह सामूहिक गान की विशिष्ट शैली है। सूफियो के इसको लोकप्रिय बनाया कबीरपथी साहित्य मे बुरहानपुर शाखा से सम्बन्धित कव्वालियॉ मिलती है-- जो उसके सिद्धान्तो का उल्लेख तथा उसकी प्रशंसा मे लिखी गयी है। पारखपद शब्दामृत, निर्पक्ष सत्य ज्ञान दर्शन आदि में कव्वालियो का उल्लेख मिलता है।

---

1 'कबीर मशूर', पृष्ठ 1125--1126
2 'आत्मबोध', पृष्ठ 46

(iii) गीति काव्य सम्बन्धी साहित्य :

कबीरपथ के गीति सम्बन्धी साहित्य को मोटे तौर पर दो वर्गो मे बाटा गया है– लोक गीतात्मक और कलात्मक साहित्य।[1] दोनो वर्गों मे भाव प्रधान और विचार प्रधान पदों का वर्णन किया गया है। इनमें 'धर्मदास की शब्दावली', गदन साहब का 'शब्द विलास' जवाहरपति साहब का 'शब्द प्रकाश', महन्त बालकदास सपादित 'कवीर शब्द संग्रह, रामस्वरूप साहब कृत 'बालक भजन माला', 'भजन अमर सागर', 'पारख शब्दामृत', साधु अधीनदासकृत 'अधीन भजनादि वाटिका', गुरु दयाल साहब कृत 'एकादश शब्द', गुरु शरण दास कृत 'स्वरूप निष्ठासार शान्तिसदन' मुख्य रूप से उल्लेखनीय है।

लोक गीतात्मक गीति काव्य :

इस प्रकार के साहित्य के अन्तर्गत वे पद रचनाएँ आती है जो विभिन्न अवसरो पर गाये जाने वाले लोक गीतो के अनुकरण पर लिखी गयी है। सोहर, गवना, मगल, होरी, फाग, बसंत, हिण्डोला आदि गीतो का कलेवर और अभिव्यक्त भाव कबीरपथी साहित्य मे लोक गीतों के समान है। इस प्रकार का साहित्य लौकिकता से परे और आध्यात्मिकता से परिपूर्ण है।

कबीरपथ में भी हिन्दू संस्कृति की भाति जीवन के विभिन्न अवसरो पर सम्पन्न किये जाने वाले संस्कारों का महत्वपूर्ण स्थान है, जन्म, मुण्डन, विवाह, गौना आदि अवसरो पर इन सस्कारो का महत्वपूर्ण स्थान है। सोहर गीत पुत्र जन्मोत्सव के अवसर और स्त्री के गर्भवती होने पर गाये जाते है। सोहर का विषय दाम्पत्य प्रेम है। स्त्री–पुरूष की रति कामना, मान, आकुलता, गर्भाधान, गर्भिणी के सौदर्य का वर्णन, पुत्रकामना आदि का वर्णन इन गीतो के माध्यम से

---

1 डॉ0 उमा ठुकराल 'कबीरपथ साहित्य दर्शन एव साधना', पृष्ठ 132

किया गया है। धनीधर्मदास द्वारा रचित सोहरों मे ये सभी गुण है परन्तु इनमें व्यक्त रति कामना लौकिक नही आध्यात्मिक है।

उदाहरण :

प्रिय मिलन की व्याकुलता मे विरहिणी ननद से आग्रह करती है।

'तुम्ही इस नगरी में, बसने वाले प्रिय को जगाओ
जाके दुवरवा जमिरिया सो कैसे सोइल हो।
महर–महर करे फूल नींद आइल हो।।
काटों मैं पेड़ जमिरिया तो पलंग बिनाइब हो।
तेहि पर सोवें मो साहब, बेनिया डोलाइब हो।।
सासु मोरी सूतल अंगनिया, ननद गज ओबर हो।
सैयां मोर सुतल घोरहरिया मैं कैसे जगाइब हो।।
उठो मोरी लहुरी ननदियां, तुम ठकुराइन हो।
पांच चोर घर मुसै, तो दियना जगाइब हो।।
एहि नगरी बसे पिय मोर, तो कोइ न जगावल हो।
नइहर के अभिमानी, पिया नहीं चीन्हल हो।।
इहां के नाच भवनवा, नीक नहिं लागै हो।
घटहि में एक छिदुनिया, नाच तहं देखब हो।।
छोट–मोट पेड़ जमिरिया, तो फुलवा लहर करै हो।
तेहि तरे बाजन बाजै, तो सब सुनावल हो।।[1]

रांस्कार गीतो में सोहर की अपेक्षा विवाह गीतो का वर्ण्य विषय बहुत विस्तृत है। कबीरपंथी साहित्य में इन गीतो मे आध्यात्मिक विवाह' का निरूपण हुआ है। 'धर्मदास शब्दावली' मे इसके उदाहरण देखे जा सकते है। पुत्री के विवाह के लिये वर ढूढने की माता–पिता की चिता, वर–वधू के सौदर्य, विवाह सस्कार मे प्रयुक्त सामग्री, हास–परिहास और वर–वधू के मगल कामना आदि का वर्णन विवाह गीतो में मिलता है। धनी धर्मदास ग्राम्य बाला के स्वर मे कहते हैं।

1 'धरमदास की शब्दावली', सोहर, शब्द 2

'सतगुरु सगुन धरावों मोरे बाबा, हम भई ब्याहन जोग हो।
तन मन सबै प्रेम रस मातै, हंसे नैहर के लोग हो।।[1]

धर्मदास के विवाह गीतों मे विवाह सम्बन्धी रीति रिवाजो का वर्णन पूर्वी उत्तर प्रदेश मे प्रचलित रीति रिवाजो के अनुसार हुआ है। जवाहरपति साहब ने भी विवाह गीतो की रचना की है।

विवाह गीतों की भाति 'गवना' का भी कबीरपथी साहित्य मे उल्लेख हुआ है कबीर साहब की शब्दावली मे निम्नलिखित गवने का रोचक ढग से वर्णन किया गया है।

सैया बुलावे मै जैहो ससुरे, जल्दी से महरा डोलिया कस रे।
नैहर के सइ लोग छूटत रे। कहा करूं अब कछु नहीं बस रे।।
वीरन आवो गरे तोरे लागूं। फेर मिलव ह्वे न जानो कस रे।।
चालन हार भई मैं अचानक, रहौं बाबुल तोरी नगरी सुबस रे।।
सात सहेली ता पै अकेली। संग नहीं कोउ एक न दस रे।।
गवना चाला तुराव लगो है। जो कोउ रोवे वा को न हंस रे।।
कहैं कबीर सुनो भई साधो। सैयां के महल में बसहु सुजस रे।।[2]

कबीरपथी साहित्य में सस्कार गीतों की भांति विभिन्न अवसरों पर गाये जाने वाले गंगल गीतो का भी उल्लेख किया गया है। विषय और शैली की दृष्टि से इनमे विविधता है 'धर्मदास जी की शब्दावली' मे बधावा के अन्तर्गत सातपद और गगलगीत के अन्तर्गत उन्नीस पद संग्रहीत है। यह भक्ति, ज्ञान और विषय योग साधना पर आधारित है। 'चेतनशब्दावली के भक्ति काण्ड', आरती चौका' के अन्तर्गत अनेक मगल गीत सग्रहीत है।

बसत, चैती, होली, फाग, सावन, हिडोला बारहमासा आदि ऋतु उत्सव गीतो के माध्यम से कबीरपंथी सन्तो ने माधुर्य भाव का चित्रण किया है। इसके

---

1 धनी धर्मदास की शब्दावली', मगल, शब्द 17
2 'कबीर साहब की शब्दावली', भाग 2 शब्द 34

अतिरिक्त दार्शनिक सिद्धान्तो, यौगिक क्रियाओं और धार्मिक मान्यताओ का भी निरूपण हुआ है। मदन साहब और जवाहरपति साहब ने स्थान–स्थान पर बसत, फाग, होरी का वर्णन किया है। धर्मदास जी ने 'अलौकिक कठ' से गगनगीतो मे होली खेलती हुई आतम नारि का बहुत स्वाभाविक और हृदय ग्राही चित्र खीचा है।

'होरी खेलों रायानी, फागुन की ऋतु आनी।
सील संतोष के केसर घोरी, छिरकत पिय रूचि मानी।
आतम नारि करत न्यौंछावर, तन मन धनहिं लुटानी।
जब पिय के मनमानी।
बाजत ताल मृदंग झांझ डफ, अनहद घोर निसानी।
पांच पचीस लिये संग अबला, गगन में धूम मचानी।।
उठे सुर बारह बानी।।
गगन गली में छेंके अविनासी, मगन भई मुसुकानी।
भक्तिदान मोहिं फगुवा दीजे, अमर लोक सहदानी।।
मिटे जब आवाजानी।
जग के भरम छोड दे बौरी, लोक लाज बिसरानी।
साहबे कबीर मिले मोहिं सतुगुरु, धरमदास भल जानी।।
भई निर्भय पटरानी।।'[1]

सावन हिण्डोला का वर्णन धर्मदासजी और जवाहरपति साहब ने किया है। जवाहरपति साहब ने 'सावन' गीत मे प्रतीको के माध्यम से अज्ञानबद्ध जीव की दुर्दशा का वर्णन किया है। जवाहरपति साहब का हिण्डोला गीतदृष्टव्य है।

'झूलों पिया संग शब्द हिण्डोलना।
रस रस झूलों सरस सुख उपजै, सुरति निरति मन भावना।
कुमति विकार कपट छल तजि के, सुमति हृदय लै अवना।।'[2]

---

1 'धमरदास शब्दावली', होली–2, पृष्ठ 54

2 'शब्द प्रकाश', शब्द 88

वर्षा ऋतु मे गाया जाने वाला 'बारहमासा' कबीरपथी साहित्य मे उपलब्ध है। धर्मदासजी की बारहमासा रचना 'योग' है और 'कबीर शब्द संग्रह मे सग्रहीत 'बारहमासा' वैराग एव भक्ति प्रधान है।

कलात्मक गीत काव्य :

इस वर्ग मे विरह मिलन के गीत, वैराग्य परक, सिद्धान्तपरक, उपदेशात्मक, नीतिपरक और साधनापरक लोक गीतो का उल्लेख किया जा सकता है। इनमे रूपको और प्रतीको का सफल प्रयोग हुआ है। सतो की उलटवासी रचनाओं की भी इसी वर्ग के तहत गणना की जाती है। प्रेम विरह के गीत धनी धरमदास की रचनाओं में द्रष्टव्य है–

मेरा पिया बसे कौन देस हो।।
अपने पिया के ढुंढन हम निकसी, कोई न कहत सनेख हो।
पिया कारन हम भहइ है बावरी, धरो जोगोनिया के भेस हो।।
ब्राह्मा विष्णु महेस न जाने, का जाने सारद सेस हो।।
धनि जो अगम अगोचर पहलन, हम सब सहत कलेस हो।
उहां के हाल कबरी गुरु जानैं, आवत जात हमेश हो।[1]

वैराग्यात्मक गीतों मे ससार की नश्वरता पर विचार किया गया है। इनमे नैराश्य और अवसाद के भाव भरे हुए हैं। इसका उदाहरण इस प्रकार है–

जग है चला चली का गेला
एक एक दिन सबको जाना, जैसे गाडी का रेला।
रागी त्यागी ध्यानी योगी, जावे गुरु ओ चेला।
जग में रहै न पावे कोई, चाहे सिद्ध बनेला।
स्वप्न के साथ जग के जैसे, बाजीगर का खेला।
क्षण भंगु तन बिनसै जैसे, पानी से माटी ढेला।।
बिनु पारख बन्धे सबहीं, चौरासी के जेला।
अधीन दास बिनु पारखगुरु के, छूटे न गर्भ की जेला।।[2]

---

1 'धमरदास शब्दावली', 'प्रेम और विरह', शब्द 8

2 'अधीन भजनादि वाटिका', खण्ड– 3, भजन– 7

उपदेशात्मक गीत भावनात्मक न होकर बोधात्मक है। उदाहरण के रूप मे निम्नलिखित गीत प्रस्तुत हैं :-

संतो! रार परस्पर भारी।
काम क्रोध मद लोभ भयंकर, तृष्णा परख विकारी।
उठत रैन दिन शान्ति होय नहि, बिना विवेक विचारी।।
सबको मान नशाय शत्रु यह, राव रंक नर-नारी।
सुख दरशावत सबहिं भुलावत, विकल भेष संसारी।
सन्मुख पर बचे नहिं कोई, गाफिल नष्ट हजारी।
बोध विराग सजगता धारण, मनसिज परख निकारी।।
सम दम औ अभ्यास निरन्तर, मुक्ति हेतु निरु वारी।।
दया गुरु सत्संगत घेरा, सावधान हुशियारी।।
गुरुशरण पारख पद अविचल, हंस रहनि उर धारी।।[1]

सिद्धान्त परक गीत दार्शनिक सिद्धान्तों का निरूपण करते है। उदाहरण के रूप मे निम्नलिखित गीत प्रस्तुत है -

एक रस चेतन स्वरूप।
सदा एक रस चेतन मेरा, घट बढ सत्य स्वरूप नहीं।।
अजर अमर अमृत अविनाशी, बदल बदल बनि बिगड़ नहीं।।
घटना बढना जड कारज में, कारण कार्य जड़ माहि रही।
जडते चेतन सदा बिजाती, कारण कार्य स्वरूप नहीं।।
ज्ञान स्वरूप अखण्ड निरन्तर, ज्यों का त्यों हि सदा से सही।
नित्य अनादी है अविनाशी, दृष्टा दृश्य स्वरूप नहीं।।
जीव सदा जीवित कहावे, नित अवत तेहि अक्षय कही।
तीन काल व्यवस्था माहीं, एक सम बदल स्वरूप नहीं।।[2]

साधना परक पद वर्णानात्मक होते हुए तार्किकता से परिपूर्ण है। उदाहरण स्वरूप निम्नलिखित पद प्रस्तुत है :-

अचरज ख्याल हमारे देसवा।
हमरे देसवा बादर उमड़े, नान्ही परे फोहरिया।
बैठि रहीं चौगान चौक में, भीजे हमरी देहिया।।

---

1 'स्वरूप निष्ठासार', शांतिसदन, 33/73

2 'भजन अमर सागर', 10/2

हमरे देसवा उर्धमुख कुंकइया, साकर वाकी खोरिया।
सुरत सुहागिनि जल भरि लावे बिन रसरी बिन डोरिया।
हमरे देसवा चूनरि उपजै, मंहगे मोल बिकइया।
की तो लेइहैं सतगुरु साहेब, की कोई साध सुजनिया।
हमरे देसवा बाजा बाजै, गैबी उठे अवजवा।
साहेब धरमदास मगन ह्वैवे, बैठे तखत परगसवा।। [1]

(च) फुटकर साहित्य, जैसे पंजे और चिट्ठियां आदि।

इस वर्ग मे पजों, पुरानी चिट्ठियों, नाटको तथा चरित्र प्रधान रचनाओ की गणना की जा सकती है।

'पजा' एक प्रकार का प्रमाण पत्र की तरह का दस्तावेज है, जो बहुधा प्रधान आचार्य द्वारा उस वैरागी कबीरपथी को प्रदान किया जाता है, जो किसी मठ विशेष का महन्त वनाया जाता है। इसमे प्रधान आचार्य की मुहर तथा सवत् का भी उल्लेख रहता है। कबीरपथी साहित्य के इतिहास मे इनका महत्वपूर्ण स्थान माना जा सकता है। इनके आधार पर विभिन्न–विभिन्न आचार्यों का समय निर्धारित करने मे सहायता मिलती है। छत्तीसगढी शाखा मे पजा देने की प्रथा प्रमोद गुरु बालापीर के समय से प्रचलित हुई।[2] डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी ने मठो के भ्रमण के क्रम मे इनको देखा और उल्लेख भी किया है। कबीरपथी साहित्य मे पजो की तरह पुरानी चिट्ठियां का भी महत्वपूर्ण स्थान माना जा सकता है। इन पर प्रधान आचार्यो की मुहर लगी हुई हैं और काल सवत् का भी उल्लेख किया गया है। इनके आधार पर पथ साहित्य के आन्तरिक क्रिया–कलापो की जानकारी मिलती है। डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी को पुरानी चिट्ठिया देखने को मिली है, जिनका इन्होने उल्लेख भी किया है।[3]

---

1 'धरमदास की शब्दावली' भेद का अग, शब्द 10
2 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कवीर और कवीरपथ', पृष्ठ 54
3 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीरपथ', पृष्ठ 55

कबीरपंथी साहित्य मे काशी साहब कृत 'सत्यज्ञानबोध नाटक' नाटको मे उत्कृष्ट कृति मानी जाती है। 'सत्यज्ञानबोध' एक विशिष्ट प्रकार का नाटक है। प्रथम नाटक के विषय स्त्री विषय निषेध तथा यथार्थ विषय मडन, मदिरा मास खण्डन, योगमार्ग वर्णन आदि उल्लेखनीय हैं। दूसरा खण्डन–मण्डन शैली मे लिखा गया है। इसकी विषय वस्तु धार्मिक विचारधारा पर आधारित है।

चरित्र प्रधान या कथात्मक बोध साहित्य मे 'भोपाल बोध', 'अमर सिंह बोध' 'जगजीवन बोध', 'कमाल बोध', 'हनुमानबोध' आदि की गणना की जा सकती है। इनमे नायक कबीर के उपदेश से सद्बुद्धि (बोध) प्राप्त करके भवचक्र से मुक्त हुए है।[1] इन रचनाओं का उद्देश्य यही है कि कैसे मुक्ति पायी जा सकती है और इसी उद्देश्य को विस्तापूर्ण ढग से उक्त रचनाओ मे वर्णित किया गया है।

* * * * *

1 डॉ० उमा ठुकराल, 'कबीरपथ, साहित्य दर्शन एव साधना', पृष्ठ 162

पंचम अध्याय

कबीरपंथ का प्रभाव

कबीरपंथी विचारधारा ने 16वी से 18वी सदी के मध्य सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा साहित्यिक आदि क्षेत्रो में काफी प्रभाव छोडा है, जिसमे काशी वाली शाखा के श्रुति गोपाल, धनौती के भगवान गोसाईं और छतीरागढी के धर्मदास आदि का योगदान सराहनीय रहा है।

कवीरपंथ की उक्त शाखाओ ने समाज के सभी वर्गो मे एकता और समन्वय लाने की भरपूर कोशिश की है। सामाजिक समता के शत्रु उच्चावचता भाव ऊँच–नीच की भावना, अस्पृश्यता इत्यादि बुराईयो को दूर करने के लिये उन्होने उपदेश, सत्संग, मेलों इत्यादि का सहारा लिया। कबीर के शिष्यों तथा अनुयायियों ने धार्मिक कट्टरता और धर्मान्धता की भर्त्सना करके सहज भक्ति का मार्ग जनता को सुलभ कराया। दरियापंथ, गरीबदासी पथ, साहिब पंथ, शिवनारायणी सम्प्रदाय आदि धार्मिक पथ तथा सम्प्रदाय भी कबीरपथ के प्रभाव से बच न सके। कबीरपथ से सम्बन्धित सभी शाखाओ ने आर्थिक असमानता की घोर निन्दा करते हुए अर्थ के विकेन्द्रीकरण पर विशेष जोर दिया। तत्कालीन राजनीतिक व्यवस्था मे प्रचलित निरकुशता, कट्टरता और अव्यवस्था आदि पर कडा प्रहार करके उन्होने लोकतांत्रिक और मानवतावादी मूल्यो पर आधारित राजनीतिक व्यवस्था का समर्थन किया। कबीरपथी सतो, महात्माओं जैसे धर्मदास, रामरहरा साहब आदि ने हिन्दी, सस्कृत आदि भाषाओ मे अनेक ग्रथो की रचना करके साहित्य को समृद्ध बनाने में सराहनीय योगदान किया है। समाज मे व्याप्त अज्ञानता, अविश्वास, कुरीतियों इत्यादि को दूर करने के लिए उन्होने ज्ञान के सस्थानो यथा– की स्थापना की। इसी प्रकार मनुष्य शरीर की विद्यालयो, महाविद्यालयो अनेक व्याधियो को दूर करने के लिए चिकित्सालयो की भी व्यवस्था की है।

कबीरपथी विचारधारा ने तत्कालीन समाज पर अमिट प्रभाव छोड़ा है। संतो, महात्माओं, वैरागियों ने समता मूलक समाज के निर्माण के लिए व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से जाकर कबीर की शिक्षाओं को जैसे–जातिवाद को निरर्थक सिद्ध करना, स्त्रियो को भी पुरुषो के समान समझना, वर्ण–व्यवस्था–जन्य दोषों यथा अस्पृश्यता इत्यादि का विरोध करना आदि को प्रचारित–प्रसारित करके आचरण द्वारा चरित्रार्थ भी किया है। उन्होंने कबीर की शिक्षाओं को जनता तक पहुंचाने के लिए पत्र–पत्रिकाओं और मेलो एव उत्सवो (जैसे– कबीर जयन्ती) आदि साधनो का सहारा लिया है।[1] इससे समाज के सभी वर्गो का आकर्षण उस समय कबीरपथ की ओर हुआ जिस समय समाज का एक बडा वर्ग शोषण और पीडा का शिकार था। इस पंथ से सम्बन्धित अनेक सतो, महात्माओ वैरागियों ने उनकी पीडा को समझते हुए शोषक वर्ग को सचेत किया इस पथ ने तत्कालीन समाज में शहरीकरण से व्याप्त बुराईयो जैसे वेश्यागमन, नशाखोरी, मद्यपान आदि को दूर करने के लिए लोगों को सदाचार और नैतिकता का उपदेश दिया। कबीर पारख सस्थान, इलाहाबाद के आचार्य धर्मेन्द्र दास के शब्दो मे "कबीर के बाद उनके अनुयाइयो ने सभी वर्गों को जोडने का कार्य तो किया ही, साथ ही समाज मे व्याप्त बुराईयों जैसे जातिवाद, सम्प्रदायवाद, वर्णव्यवस्था जन्य दोषो और कट्टरता आदि को काफी हद तक कम करने मे सहायता की।[2]

कबीरपथ का सबसे अधिक प्रभाव धार्मिक क्षेत्र मे रहा है। तत्कालीन मुगल बादशाहों– अकबर, बहादुरशाह प्रथम, फरुर्खसियर आदि शासको की नीतियो में यह प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। अकबर की सुलह–कुल की

1 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीरपथ', पृष्ठ 195
2 'कबीर पारख सस्थान', इलाहाबाद के महत श्री धर्मेन्द्र दास जी का कथन, शोधकर्ता को दिये गये एक साक्षात्कार मे।

नीति कबीर की विचारधारा से प्रभावित रही है।[1] इस पथ ने समाज को धार्मिक सहिष्णुता का पाठ पढाया और सभी वर्गों के लोगों को एकता के सूत्र मे बॉधने मे वह सफल भी रहा। इस पंथ ने अपनी जीवन्त शक्ति से दरियापथ, सरभग सम्प्रदाय, राधास्वामी सत्संग, साहिब पंथ, गरीबदासी पथ और शिवनारायण सम्प्रदाय को प्रभावित किया है। उपरोक्त पंथो पर कबीर की शिक्षाओ का प्रभाव स्पष्ट झलकता है। कबीरपंथ मुख्य रुप से निरंजन, अमरलोक, सृष्टि, कबीर के लोकोत्तर व्यक्तित्व, सगठन व्यवस्था और बाह्योपचार आदि मान्यताओ के आधार पर प्रभावित किया है।

कबीर, दादू, रज्जब इत्यादि सतो ने निरजन शब्द का प्रयोग परमतत्व के अर्थ मे रूप मे किया है। छत्तीसगढी शाखा ने निरंजन को कालपुरुष या यमराज के रूप मे स्वीकार किया है, ठीक इसी प्रकार सरभग सम्प्रदाय भीखमराम वाली शाखा भी निरजन को कालपुरुष या यमराज के रूप मे स्वीकार करती है।[2]

अपने सृष्टि सम्बन्धी विचारो से भी कबीरपंथ ने उत्तरवर्ती पंथों को प्रभावित किया है। कबीरपथ में मान्यता है कि 'निरजन और आद्या' के संयोग से ब्रह्मा, विष्णु और महेश की उत्पत्ति हुई। छत्तीसगढी शाखा की सृष्टि सम्बन्धी प्रक्रिया को 'साहिब पथ' ने उसके मूल रुप में स्वीकार किया है। दरियासाहब ने स्वरचित ग्रन्थ 'ज्ञानदीपक' 'दरिया सागर' तथा 'ज्ञान रत्न' आदि मे जिस सृष्टि प्रक्रिया का उल्लेख किया है, वह छत्तीसगढी शाखा से बहुत हटकर नही है। कबीरपथ की 'आधा' और ज्ञानी जी ही साहिब पथ में 'ज्योति' और 'जगजागृत, नाम से अभिहित हुए है। राधास्वामी सम्प्रदाय मे 'निरजन' को सृष्टिकर्ता के रुप

---

1 पी0एन0 चोपड़ा, बी0एम0 पूरी, एम0एन0 दास, 'भारत का सामाजिक, सास्कृतिक और आर्थिक इतिहास', पृष्ठ 86

2 डॉ0 उमा दुकराल, 'कबीरपंथ, साहित्य दर्शन एवं साधना', पृष्ठ 526

मे स्वीकार किया है। 'विवेक सागर' मे सत कीनाराम ने सृष्टि की उत्पत्ति 'निरजन' से बताई है।

जिस प्रकार कबीरपथ मे कबीर को सत्यपुरुष या उनका अश स्वीकार कर लिया और विभिन्न युगो में उनके विभिन्न अवतारो की रोचक कथाये गढ ली गई, इसी प्रकार कतिपय उत्तरवर्ती पथो ने भी अपने प्रथमगुरु के विभिन्न अवतारों की कल्पना कर ली। 'ज्ञान दीपक' मे दरिया साहब ने कबीर के अवतार के रुप मे स्वयं को भी स्वीकार किया है। राधास्वामी सम्प्रदाय वाले भी कबीरपथ की भॉति राधास्वामी दयाल को ब्रह्म का अवतार मानते हैं। शिवनारायणी सम्प्रदाय मे भी सतपति दुख हरण तथा संत शिवनारायण के विभिन्न अवतारो की कल्पना की जाने लगी जिसका 'मूल ग्रन्थ' मे उल्लेख है। गरीबदास ने 'दास गरीब कबीर का चेरा' रहकर अपने को कबीर का शिष्य होना स्वीकार किया है।[1]

इस पथ की सगठन व्यवस्था का भी अनेक अन्य पंथो पर व्यापक प्रभाव पडा है। कबीरपंथ की भाँति सरभंग सम्प्रदाय ने भी महात्माओं के विवाह सम्बन्ध को विहित समझी जाने वाली परम्परा को चलाया है। कबीरपथ की छत्तीसगढी शाखा की भॉति गरीबदासी पथ में भी यह नियम है कि उनके वश मे ही उत्पन्न व्यक्ति को ही आचार्य गद्दी का उत्तराधिकारी बनाया जा सकता है। दरिया पंथ मे भी कवीरपंथ की ही तरह साधु और गृहस्थ दो प्रकार के साधक पाये जाते है।[2] सरभंग सम्प्रदाय मे भी जाति–पॉति की दीवार को उसी प्रकार ध्वस्त किया गया, जिस प्रकार कवीरपथ की विभिन्न शाखाओ मे किया गया है।

कवीरपथी बाह्योपचारो का भी विभिन्न पथों पर व्यापक प्रभाव पडा है। 'पानप पंथ' और 'शिवनारायणी' सम्प्रदाय के अतिरिक्त 'दरिया पथ' भी

1 'गरीबदास की वानी', पृष्ठ 11
2 डॉ0 उमा ठुकराल, 'कवीरपथ, साहित्य दर्शन एव साधना', पृष्ठ 530

कबीरपंथी बाह्योपचारो से प्रभावित है। कबीरपंथी बाह्योपचारों से दरियापथ सबसे अधिक प्रभावित है। कबीरपथ की ही भॉति दरिया पथ में भी चौबीस घटे मे पॉच बार पूजा करने का विधान है। इन दोनों ही पथो मे पूजा के लिए किसी मन्दिर या मस्जिद मे जाने की जरुरत नहीं पडती है। कबीरपथ का चौका विधान भी परिवर्तित रूप के साथ दरियापथ मे अन्तरमुक्त हो गया है। शिवनारायणी सम्प्रदाय में भी कबीरपंथ की भॉति नाना मंत्र स्वीकृत है। 'सरल पूजन विधि' नामक पुस्तक मे हाथ–मुख धोने, आचमन करने, गद्दी पर ग्रन्थ स्थापित करने, सिहासनपूजन, ग्रन्थ पढने और आरती करने आदि बाह्योपचारो के विविध मत्र दिये गये है।[1]

तत्कालीन समाज की आर्थिक गतिविधियॉ कबीरपथी विचाधारा से अछूती न रह सकी। कबीर ने धन के सचय की आलोचना की थी। वे उतने ही धन रखने के हिमायती थे जितने से आजीविका चल सके। उन्होने पूॅजी–पतियो को प्रेरित किया था कि वे निर्धनो की सहायता करें उनका अर्थशास्त्र निम्नलिखित पक्तियो पर आधारित था।

"साईं उतना दीजिए, जामे कुटुम समाय।
आप न भूखा रहि सकै, साधु न भूखा जाय।।

कबीर के आदर्शो को कबीरपंथ ने जनता के सम्मुख रखा और स्वयं सादा जीवन व्यतीत करते हुए निर्धनों और असहायो की पीडा को दूर करने का प्रयास किया। आज भी कबीरपंथी मठों मे विलासिता और फैशन से दूर सफेद वस्त्र, बिना तेल–मसाला का भोजन प्रचलित है। कबीरपथ ने हमेशा भूखे, नगे लोगो का स्वागत किया है। कबीर द्वारा कर्म की महत्ता पर जोर देने की भावना ने समाज मे लोगो को श्रम की महत्ता का अहसास कराया है। कबीरपंथ के पास सैकडों एकड जमीन है, जिसमे कबीरपथी महात्मा स्वय के श्रमदान द्वारा

---

1 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीरपथ', पृष्ठ 337

उत्पादन करते है और भजन–कीर्तन में लीन रहते है। उन्होंने कबीर की भॉति पूॅजी–पतियो को गरीबो की सहायता करने हेतु प्रेरित किया है। पूॅजीपतियो की पूॅजी संचयन प्रवृत्ति का कबीरपथ आलोचक रहा है। हो सकता है कि औरगजेब कबीर की कर्म की महत्ता से प्रभावित हुआ हो तभी तो वह अपने दैनिक खर्चो के लिये स्वय कुछ न कुछ कार्य किया करता रहता था। कबीरपथ ने सफलतापूर्वक अपनी इस विचारधारा को प्रचारित–प्रसारित करने और लोकप्रिय बनाने का प्रयास किया। यह उनकी सफलता है कि पूॅजीपतियो ने उदारता पूर्वक उनके मठों को दान दिया जिससे मठो को व्यवस्था सुचारू रुप से चल सकी और आज भी इसी तरह की व्यवस्था चल रही है।

कबीरपथी विचारधारा ने तत्कालीन शासकों को अपनी नीतियों मे परिवर्तन लाने के लिये बाध्य किया। अकबर, शिवाजी आदि ने राजनीतिक निरकुशता, कट्टरता और विलासिता को छोडकर प्रजाहित मे सहिष्णुता आदि की नीति को अपनाया। कबीर की वाणी से जिन समाजवादी विचारो का प्रस्फुटन हुआ था उनसे धीरे–धीरे समाजवादी आन्दोलन को मजबूत आधार प्रदान किया। कबीर की क्रातिकारी विरासत ने देश को सास्कृतिक एकता के सूत्र मे पिरोया था और इसी वजह से मुक्ति आन्दोलन सफल हुआ।[1] कबीरपथ के समक्ष प्रारम्भ मे मुगल साम्राज्य और निरन्तर लडते रहने वाले अनेक हिन्दू–मुसलमान, राजा–रजवाडे थे। कबीरपथियो ने उनका डटकर सामना किया और बांदियों–खवासिनो, सखी–सेविकाओं और सुन्दर पत्नियो से घिरे कामातुर, ऐश्वर्य भोगी राजाओ की आलोचना की। इसका प्रभाव शासकों की नीतियो मे देखा जा सकता है।

1 सम्पादक कुॅवर पाल सिह प्रोफेसर, 'भक्ति आन्दोलन, इतिहास और सस्कृति', पृष्ठ 169

कबीरपथी सतो, महात्माओ तथा वैरागियो ने अनेक ग्रथो की रचना करके भारतीय साहित्य के विकास मे महत्वपूर्ण योगदान किया है। इन्होने हिन्दी, संस्कृत, उर्दू आदि भाषाओं में अनेक ग्रंथों की रचना की। जिससे कबीरपथ जन–साधारण मे लोकप्रिय हुआ और लोक साहित्य की समृद्ध हुआ। भारतीय साहित्य को धर्मदास, राम रहेस दास आदि सतो ने कबीरपथी साहित्य के माध्यम रो अमूल्य योगदान किया है।

कबीरपथ की विभिन्न शाखाओं ने जनकल्याणकारी कार्यों जैसे– शिक्षा, चिकित्सा आदि क्षेत्रो मे भी सराहनीय योगदान किया। छत्तीसगढी शाखा, कबीर पारख सस्थान इलाहाबाद, खरसिया (बिहार) आदि शाखाओ ने विद्यालयो, महाविद्यालयो और चिकित्सालयो की स्थापना की है, इनमें जनता को मुफ्त मे शिक्षा और चिकित्सा की सुविधा उपलब्ध करायी जाती है। इसके अतिरिक्त कबीर मन्दिर खैरा (बिहार) में भी कबीर औषधालय की स्थापना की गयी है। जो आम जनता की सेवा के लिए समर्पित रहा है। बिहार, मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश आदि राज्यो के अधिकांशतः कबीरपंथी मतो मे विद्यालय, महाविद्यालय और चिकित्सालय आज भी जनता की सेवा में लगे हुए हैं।

कबीरपथ की विभिन्न शाखाओ मे सिद्धान्त और विचारधारा मे मतभेद के कारण कबीरपथ उतनी प्रभावी भूमिका नही निभा पाये जैसी तत्कालीन परिस्थितियों मे उससे अपेक्षित थी। कबीर ने जिन बाह्योपचारो को हास्यास्पद कहा था, उन्हीं को कबीरपथ की कई शाखाओ मे, जैसे– छत्तीसगढ वाली शाखा आदि ने अपनाकर कबीर की शिक्षाओं के प्रचार–प्रसार मे व्यवधान डाला है। कबीर ने महत व्यवस्था का हमेशा विरोध किया है परन्तु कबीरपंथ की विभिन्न शाखाओ ने महत व्यवस्था अपनाकर कबीर की शिक्षाओं के प्रभाव को धूमिल किया है। छत्तीसगढी शाखा में तो आनुवशिक आचार्य व्यवस्था पायी

जाती है और वहाँ इस पद को लेकर सघर्ष भी हुए है।[1] कबीरपथ में सगठन व्यवस्था, पदलिप्सा और सतो, महात्माओ द्वारा बदलते समय के साथ अपने को दूसरे पथो से अलग न रखने की प्रवृत्ति सम्बन्धी आदि अनेक कमियाँ विद्यमान रही है जिनके कारण यह पंथ पूरी सक्रियता से कार्य न कर सका। इन कमियो को इस प्रकार से वर्णित किया जा सकता है।

सर्वप्रथम, कबीर ने जिन बाह्योपचारो को हास्यास्पद कहा था, उन्ही को कबीरपंथ की विभिन्न शाखाओ ने अपनाया, जिससे कबीरपंथ जनता मे लोकप्रियता खो बैठा। कबीरपंथ की छत्तीसगढ़ी शाखा मे बाह्योपचारो को काफी महत्व दिया गया है। यह शाखा वेदान्त से काफी प्रभावित है। बाह्य प्रभाव के कारण कवीरपथ अपनी मौलिकता खो बैठा। अतः उसका समाज पर प्रभाव धूमिल हो गया।

दूसरे, कबीरपथ की विभिन्न शाखाओ के पारस्परिक सघर्ष ने भी कबीरपथ को कमजोर किया है। कबीरपंथ की छत्तीसगढ़ी शाखा और बुरहानपुर वाली शाखा का वैचारिक और सैद्धान्तिक सघर्ष विख्यात रहा है। ऐसी स्थिति मे कबीरपथ का पतन कैसे सक्रिय भूमिका निभा पाता।

तीसरे, सगठन में एकरुपता की कमी ने भी कबीरपंथ के प्रचार'–प्रसार मे बाधा पहुँचाई है। अगर किसी विचारधारा या सस्था का सशक्त, देशव्यापी और विश्वव्यापी सजाल है और उसके सिद्धान्तो मे एकरुपता है, तो कोई शक्ति उसके सतत् विकास को रोक नही सकती। कबीरपंथ मे इसकी कमी रही है।

चौथे, आपसी मतभेदो ने कबीरपथ के प्रचार–प्रसार मे अवरोध का कार्य किया है। किसी भी सस्था या सगठन का भला नहीं कर सकते। कुछ शाखायें अनीश्वरवादी सिद्धान्तों मे विश्वास करती हैं जैसे छत्तीसगढी शाखा, धनौती की

1 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीरपंथ', पृष्ठ 173

शाखा आदि। दूसरी ओर कुछ शाखाये है ऐसी है जो अनीश्वरवादी सिद्धान्तो मे विश्वास करती है, जैसे,–बुरहानपुर वाली शाखा और काशीवाली शाखा आदि। इनके आपसी मतभेदो ने कबीरपंथ के प्रचार–प्रसार मे बाधा पहुँचाई।

पॉचवें, कबीरपथ एक प्रकार से सामाजिक समस्याओ के निराकरण का प्रयास था, किन्तु सम्भवत वौद्धिक शक्ति की कमी के कारण सामाजिक समस्याओं के निराकरण मे सफल न हो सका। कबीरपथी कबीर के प्रौढ दर्शन को सामने रखकर जनता को आकृष्ट करना चाहते थे किन्तु वे स्वय कोई नवीन देन समाज के सामने उपस्थित करने में असमर्थ रहे। समय के साथ ऐसा आवश्यक था। इसी कारण कबीरपथ धीरे–धीरे प्रभावहीन हुआ।

छठें, कबीरपंथ को कभी राजाश्रय भी नही मिला अगर बौद्ध और जैन आदि धर्मो की तरह उसको राजाश्रय मिला होता तो सम्भवत कबीरपथ तेजी से विकास करता। अकबर के समय जरूर उदार परिवेश मिला मगर उत्तरवर्ती मुगलकाल में राजाश्रय तो दूर उन्मुक्त वातावरण भी नही मिल सका।

सातवे, कबीरपंथ के संचालको ने समय साथ चलने का प्रयास नही किया। जिससे कबीरपंथ का उतना विस्तार न हो सका, जितने प्रचार–प्रसार की अपेक्षा थी। बदलते समय के साथ प्रचार–प्रसार के साधनो का विकास करना पडता है और पंथ की शिक्षाओ को लोकप्रिय बनाने के लिये तकनीक विकसित करनी पड़ती है तभी किसी पथ या विचारधारा को कालजयी बनाया जा सकता है मगर कबीरपथ इसमे असफल रहा है, इसी कारण कबीरपथ पूर्ण रुप से सफल न हो सका।

आठवे, कबीर जैसे असाधारण व्यक्तित्व की कमी ने भी कबीरपंथ के विकास को प्रभावित किया है। अगर कबीर जैसा कोई असाधारण सत हुआ होता और कबीरपंथ को एकरुपता प्रदान करता और मतदभेदो को दूर करता तो

क्रातिकारी आदोलन खडा हो जाता ऐसी स्थिति मे जनमानस प्रभावित होने के लिये मजबूर हो जाता।

कबीरपथ तमाम थपेडे झेलते हुए आज भी आम जनता मे सम्माननीय है। सस्कारी साधको ने इसको जनसाधारण मे लोकप्रिय बनाया तथा सत्यान्वेषण के द्वारा अन्य लोगो को जगाने का भी प्रयास किया। जिस प्रकार सूर्य को बादल ढॅककर कुछ क्षण के लिये अन्धकार उत्पन्न कर देता है, उसी प्रकार का प्रभाव विजातीय तत्वो ने कबीरपथ पर क्षणिक प्रभाव डाला। कबीर कालजयी संत सम्राट है, इनकी शिक्षाओ को विजातीय तत्व प्रभावित न कर राके और इसी कारण कबीर द्वारा स्थापित सत्य की धारा अक्षुण रही है। आम जनता को मठो की ओर आकर्षित करने के लिये और कुछ धन दक्षिणा पाने की विवशता ने कबीरपथियो को अन्य पंथों, धर्मों के रीति–रिवाजो को अपनाने के विवश किया, इससे लाभ कम हानि अधिक हुई है। आज भी देश के विभिन्न भागो मे फैले कबीरपथी मठ मानवता की सेवा में शिक्षा, चिकित्सा आदि सुविधाये उपलब्ध कराके सामाजिक समरसता लाने हेतु सतत् प्रयासरत है।

* * * * *

षष्ठ अध्याय

उपसंहार

कबीर ने भारतीय सस्कृति के प्रचार–प्रसार मे महत्वपूर्ण योगदान किया है।[1] ऐसे महापुरूष और उसके उपदेशो की महत्ता आज भी बरकरार है। कबीर कि उपरान्त उनके शिष्यो ने कबीरपथ के द्वारा उनका गौरव बढाया है समाज–सुधारक के रूप मे और सर्वधर्म समन्वयकारी व्यक्ति के रूप मे, कबीर की प्रसिद्धि है। इन्ही विशेषणों के आलोक में कबीरपंथी सगठनो की भी महत्ता रही है।

सामाजिक बुराइयो को दूर करना कबीर और कबीरपथ का मूल उद्देश्य रहा है। उन्होने ऐसी शिक्षाये दी हैं जिनसे समाज के दोषो के निवारण तथा एक समन्वयकारी समाज के निर्माण्ण में सहायता मिलती है। उनकी परिकल्पना का समाज साम्प्रदायिकता, वैमनस्यता, रूढिवादिता, अंधविश्वास और ऊँच–नीच से परे है। कबीर की विचारधारा मे जिस नव्य समाज के निर्माण की सम्भावना है, उसमे वैयक्तिक और सामाजिक चेतना की प्रति ध्वनि है, चारित्रिक निर्माण का संकल्प है। मानवीय गुणों के परिष्करण और परिमार्जन से सामाजिक परिवर्तन का यह प्रयास कबीर को एक चितक, समाज सुधारक और दार्शनिक रूप मे स्थापित करता है। जाति–पॉति के विरुद्ध तथा साम्प्रदायिकता को धिक्कारती कबीर की वाणी जनमानस को झकझोर गयी है। उनका कहना है कि

एक बूँद एक मल मूतर, एक चाम, एक गुदा।
एक खेत सो सब उतवन फिर कौन ब्राह्मण कौन सूदा।

कवीर ने आचरण की शुद्धता पर सबसे अधिक जोर दिया, क्योकि जब तक मनुष्य के आचरण में शुद्धता घर नही कर जाती तब तक समाज कल्याण की बातें सोचना भी व्यर्थ है। उन्होने विश्व–बन्धुत्व की भावना पर काफी जोर

1 सम्पादक डॉ0 वासुदेव सिह, 'कवीर' पृष्ठ 59

दिया, जिसमें जातिय अहंकार मूल बाधा रहा है इसलिये उन्होने असमानता के जड़ मे उच्च वर्गीय मानसिकता की स्थिति पर व्यंग करते हुए कहा है कि–

"ऊँचे कुल का जनमियॉ, करनी ऊँच न होय।
स्वर्ण कलस मदिरा भरा, साधु निंदै सोय।।

इस प्रकार कबीर का भावी समाज मानवतावादी मूल्यो पर आधारित रहा है, जिसके निर्माण में कबीरपंथी संतों, महात्माओ ने काफी कार्य किया है। कबीरपथी मठो में भी जाति और वर्ग विहीन समाज की स्थापना पर हमेशा जोर दे दिया है। चाहे श्रुति गोपाल हो या धर्मदास या फिर भगवान गोसाई आदि ने अनवरत् सामाजिक असमानता का विरोध करके समता की स्थापना मे काफी सराहनीय कार्य किया है। सभी कबीरपथी मठ सभी व्यक्तियो के कल्याण हेतु बिना भेद–भाव के आज भी दिन–रात लगे हुए है।

कबीर का धर्म साम्प्रदायिकता विरोधी, समानता और हिन्दु–मुस्लिम ऐक्य की भावना पर आधारित है। कबीर भक्ति अन्य संतों की भक्ति से भिन्न है उन्होंने सामाजिक आडम्बरो का विरोध किया, जातिवाद, वर्णवाद और सम्प्रदायवाद की संकीर्ण वैचारिक दीवारो को चकनाचूर करके प्रेम की व्यापक सत्ता को जीवन के लिए अनिवार्य बताया। उन्होने व्रतों, उपवासो और तीर्थो को एक साथ अस्वीकार कर दिया।[1] उन्होंने निर्गुण आराध्य की प्राप्ति के लिए विश्वास, निष्कपट आस्था, हृदय का सम्पूर्ण समर्पण, तर्कातीत प्रेममय भावना को सत्य सम्बल का साधन बताया है। सामाजिक विषमताओ को दूर करने और नैतिक वलो के प्रसार के निमित्त ही कबीर ने भक्ति भावना पर अत्यधिक बल दिया। इतना ही नही उन्होने भक्ति भावना के बल पर साम्प्रदायिक वैमनस्य को दूर करने का प्रयास किया। कबीर कदाचित प्रत्येक संकीर्ण सम्प्रदायिक भावना

1 हजारी प्रसाद द्विवेदी, 'कबीर', पृष्ठ 158

से मुक्त थे और उनका मुख्य अभिप्राय किसी ऐसी विचारधारा को जन्म देना था जो स्वभावत सर्व मान्य बन सके।[1]

कबीर की दृष्टि से हरि भक्त तो हरि का ही हो सकता है, किसी धर्म, सम्प्रदाय और जाति विशेष का नही। उनका कहना है कि **"जाति पाति पूछै नहि कोई हरि को भजैसा हरि का होई।"** परन्तु कबीर ने उपरान्त उनके अनुयाइयो ने उनकी धार्मिक मान्यताओ मे काफी परिवर्तन कर लिये है। कबीरपथी सगठनो मे ईश्वरवादी और अनीश्वरवादी आधार पर विभाजन दिखाई देता है। छत्तीसगढी शाखा ईश्वरवादी और काशीवाली शाखा व बुरहानपुर वाली शाखा अनीश्वरवादी विचारधारा पर आधारित है। छत्तीसगढी शाखा मे अनेक प्रसार के वाह्योपचारों को प्रभाव देखा जा सकता है। कबीर बाह्योपचारो के कट्टर विरोधी थे।[2] सम्भवतः इसी कारण कबीर के उपरान्त कबीर से सम्बन्धित सगठन पूर्णसफल नही हो सके। कबीर ने जिस मठाधीशी और कर्मकाण्डो की आलोचना की थी उन्ही को इन संगठनो ने महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है।

कर्म की महत्ता पर कबीर ने सर्वाधिक जोर दिया। स्वय उन्होंने जुलाहेपन को नही छोडा। उन्होंने संत रविदास की तरह "मन चगा तो कठौती में गगा।" की भावना मे विश्वास करते हुए "साईं इतना दीजिए जामै कुटुम समाय।" की भावना चरितार्थ किया। उन्होने आजीवन कर्मशील जीवन व्यतीत किया और कर्मण्यता का ही संदेश दिया। कर्मण्यता उनका आदर्श तो ही साथ ही उनके दैनिक व्यवहार का एक अंग था। आजीवन अपना कर्म करते हुए किस प्रकार हृदय में भगवत भक्ति की धारण किया जा सकता है। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण उन्होंने समाज के सम्मुख प्रस्तुत किया। वे वास्तव मे सच्चे कर्मयोगी थे। उनका कर्म अनिवार्य रूप से हमारी संस्कृति की असमानताओ की नकार है,

---

1 डॉ० परशुराम चतुर्वेदी, 'उत्तरी भारत क सत परम्परा', पृष्ठ 132

2 डॉ० केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीरपथ', पृष्ठ 291

विभिन्न तत्वो का समायोजन मात्र नही।[1] कबीर के कर्म सदेश को अपना कर आज भी अनैतिकता, भ्रष्टाचार, बेरोजगारी जैसी बुराइयो को दूर किया जा सकता है। उनका कर्म सदेश हमेशा प्रासंगिक रहेगा। कबीरपंथी संगठनो ने भी कबीर के इस मूल मन्त्र को व्यवहार मे लाकर चरितार्थ किया है।

कबीर की वाणी मे प्रेम की प्रचुरता थी। 'प्रेम' की समाज मे महत्ता और आवश्यकता हमेशा रही है और आज भी है। प्रेम मानव जीवन के लिए भौतिक, नैतिक एव आध्यात्मिक निधि है। हृदय की अन्त वृत्तियो के परिष्कार के लिए प्रेम एक दवा के समान है। इसलिए कबीर ने कहा है कि–

"ऐसी वाणी बोलिए, मन का आपा खोय।
औरन को शीतल करे, आपहु शीतल होय।।

उन्होने मानव प्रेम की बात तो कही ही साथ ही ईश्वर के प्रति भी भक्ति की बात कही। उनका आध्यत्मिक प्रेम उर्ध्वगामी मन की गतिज अवस्था हैं जिसमे ऐन्द्रिय दूरियॉ कोई अर्थ नहीं रखती। उनके अनुसार प्रेम ही सब कुछ है, वेद नहीं, शास्त्र नही, कुरान नही, जप नहीं, माला नही, मन्दिर नहीं, मस्जिद नहीं और प्रेम समस्त बाह्योपचारों की पहुँच के बहुत ऊपर है। कबीर का कहना है कि–

पोथी पढि–पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोय।
ढाई अक्षर प्रेम का, पढै सो पडित होय।।

कबीर के प्रेम की महत्ता को उनके समय और उनके बाद भी सभी ने स्वीकारा है। उनके अनुयाइयो ने विभिन्न संगठनो के द्वारा समाज के विभिन्न वर्गों मे हमेशा ही प्रेम का संदेश दिया है, और आज भी ऐसा ही सदेश दे रहे है। कबीर के प्रेम से ही प्रभावित होकर सतनामी, जसरानी आदि सम्प्रदायो ने भी प्रेम को मूल मन्त्र माना है वर्तमान मे भी प्रेम और भाई चारे की सबसे

---
1 डॉ0 इरफान हवीब, 'भारतीय इतिहास मे मध्यकाल', पृष्ठ 155

अधिक आवश्यकता है, तभी इस हिसा, आतकवाद साम्प्रदायिकता और भ्रष्टाचार आदि बुराईयो पर विजय प्राप्त कर सकते है।

उक्त आदर्शों को प्रस्तुत करते समय कबीर ने इस बात का सदैव ध्यान रखा कि उनकी वाणी आसानी से लोगों को ग्राह्य हो। एतदर्थ उन्होने मिली–जुली भाषा का प्रयोग तो किया परन्तु साथ ही यह भी प्रदर्शित किया कि उनका साहित्य सर्वग्राह्य होने पर भी हिन्दी साहित्य के विकास मे सहायक हो सके। कबीर की मिली–जुली भाषा से यह संदेह होता है कि शायद उन्हे भाषा का ज्ञान न रहा हो, किन्तु आधुनिक शोधों ने यह सिद्ध कर दिया है कि कबीर पढे लिखे थे और भाषा पर उनकी गहरी पकड थी। उनकी भाषा समस्त उत्तर भारत की जनभाषा का प्रतिनिधित्व करती है उनके काव्य मे तत्कालीन प्रचलित ब्रज अवधी, खडीबोली, बुन्देली, राजस्थानी और भोजपूरी के साथ पजाबी, गुजराती आदि भारतीय भाषाओ तथा अरबी–फारसी आदि विदेशी भाषाओ के लोक प्रचलित शब्दो का सहज एवं स्वाभाविक समावेश देखा जा सकता है।[1] कबीर के उपरान्त उनके अनुयायी शिष्यों सतों तथा अनेक विद्वानो ने उनके सिद्धान्तों, विचारो आदि पर काफी लेखक कार्य करके साहित्य की सवृद्धि मे महत्वपूर्ण योगदान दिया है। धर्मदास, अनन्त दास, परमानन्द दास, आदि ने कबीरपंथी साहित्य को समृद्ध बनाया है। 'अनुराग सागर', 'कबीर मसूर', 'निरंजन बोध' और 'हनुमान वोध' आदि इस सम्वन्ध में विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

इतना स्पष्ट है कि कबीर ने किसी पन्थ का सम्प्रदाय की स्थापना स्वय नही की थी और न ही अपने किसी शिष्य को ऐसा करने का आदेश दिया था। कबीर ऐसी धारणा के विरोधी थे। कबीर के बाद उनके धर्म से प्रभावित श्रुतिगोपाल, धर्मदास, और भगवान गोसाई ने उत्तर भारत के विभिन्न स्थानो पर

---

1 सम्पादक वासुदेव सिह, 'कबीर' पृष्ठ 177

कबीर नाम के संगठन बनाये जो बाद मे कबीरपथ की शाखाये घोषित कर दी गयी। सभी शाखाएँ कबीर के ग्रन्थ बीजक को धर्म ग्रन्थ के समान पवित्र मानती है। इन तीनो शाखाओ (काशीवाली, धनौती और छत्तीसगढी) का इतिहास उपलब्ध है सभी का अपना अलग–अलग साहित्य भी है। साहित्य की दृष्टि से सबसे अधिक समृद्ध शाखा छत्तीसगढी शाखा ही है। इन सभी की अनेको उपशाखाएँ भी देश विदेश को फैली हुई है। श्रीलका, नेपाल, तिब्वत, फिजी आदि देशो में कवीरपथ का विस्तार हुआ है।[1] अनेको कबीरपथी माठ आज भी कवीर की मानवतावादी शिक्षाओ का प्रचार–प्रसार अपनी उपशाखाओ और शाखाओ के माध्यम से कर रहे है। कबीर से सम्बन्धित इन सगठनो ने साहित्य तो समृद्ध बनाया ही साथ ही धार्मिक–दार्शनिक सिद्धान्तो की भी विभिन्न प्रकार से रूपको के माध्यम से व्याख्याये भी की है। कबीर के शिष्यों में इस सम्बन्ध मे काफी मतभेद भी पाया जाता है। यह मतभेद द्वैतवाद और अद्वैतवाद विचारधाराओ के रूप मे प्रचलित है। द्वैतवादी दार्शनिक विचारधारा ईश्वरवादी सिद्धान्त का प्रतिनिधित्व करती है। वही अद्वैतवादी दार्शनिक विचारधारा अनीश्वरवादी सिद्धान्त की समर्थक है, प्रथम वर्ग का काशीवाली शाखा और बुरहानपुर वाली शाखा दूसरी विचारधारा की समर्थक है।[2] प्रथम वर्ग में की शाखाओ मे धार्मिक दृष्टिकोण रखने वाले साधक है, अत इनकी रचनाओं मे दर्शनशास्त्र के वैज्ञानिक तत्व चिन्तन और तर्कजन्य खण्डन–मण्डन का अभाव ही है। दूसरी ओर अनीश्वरवादी या द्वैतवादी शाखाएँ अपने सिद्धान्तो की सत्यता के लिए अनेक तर्क और प्रमाण प्रस्तुत करते है। इन सिद्धान्तो का यह प्रभाव साहित्य पर भी देखा जा सकता है। साहित्य स्पष्टत दोनो विचारधाराओ मे विभाजित दिखाई देता है। ईश्वरवादी शाखा मे विशेष रूप से छत्तीसगढी

1 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीरपथ', पृष्ठ 209
2 डॉ0 उमादुकराल, 'कबीरपथ, साहित्य दर्शन एव साधना', पृष्ठ 170

शाखा पौराणिक प्रभाव से अधिक प्रभावित रही है। इसमे महन्त बनने को लेकर उत्तराधिकार संघर्ष भी हुए है। कबीर ने जिन बुराईयो का पुरजोर विरोध किया था उनका इस शाखा मे काफी मात्रा मे समावेश हो गया है। काशीवाली शाखा ओर बुरहानपुर की शाखा कबीर के सच्चे सिद्धान्तों पर आज भी पूर्णत कायम है परन्तु आचार्य पद की व्यवस्था यहॉ भी दिखाई देती है। कबीरपथी सगठन भले ही धार्मिक–दार्शनिक सिद्धान्तो के मामले में कबीर की विचारधारा से अलग हट गये हो मगर यह तथ्य सबसे महत्वपूर्ण है। कि यह सगठन मानवकल्याण की आज भी जीती जागती मिसाल कायम किये है कबीरपथी मठो, मन्दिरों के सगठन और व्यवस्था मे एकरूपता की कमी रही है। काशीवाली, छत्तीसगढ़ी और धनौती वाली शाखाओं में महन्त या आचार्य, दीवान, पुजारी आदि पदाधिकारी की व्यवस्था रही है। कबीरपंथी सफेद वस्त्र धारण करते रहे है, तथा उनका खान–पान सादा है। उनकी आय का साधन दान दक्षिणा तथा मठो की जमीन से होने वाली पैदावार रही है। साधु और वैरागी के रूप मे कबीरपथी विभाजित रहे है। सभी मठो में अनुशासित जीवन उनकी महत्वपूर्ण विशेषता रही है, अनुशासन भग होने की स्थिति मे मठ से निष्कासित कर दिया जाता है। कुछ कबीरपथी मठो मे स्त्री संत और वैरागी भी रहे हैं। जिन्हे 'माता साहिबाएं कहा जाता था। कबीर की विचारधारा को आत्मसात करते हुए कबीरपथ की विभिन्न शाखाओ मे उनके मूल सिद्धान्तो को स्वीकार किया है। कबीर की समतामूलक मानवतावादी, आर्थिक विकेन्द्रीयकरण, निरंकुशता और कट्टरता से विहीन राजनीतिक व्यवस्था और सर्वधर्म सम्भाव पर आधारित धार्मिक विचारधारा को सभी कबीरपंथी शाखाओ में पूर्णत. अपनाया है, हालाकि बदलते हुए समय की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए इस पथ की सभी शाखाओ ने बाह्योपचारों को भी प्रश्रय दिया है। कबीरपथ का साहित्य काफी समृद्ध रहा है। कबीरपथ की छत्तीसगढी शाखा साहित्य के क्षेत्र मे सबसे अधिक धनी है। इस

पथ के साहित्य को अध्ययन की सुविधा को ध्यान मे रखते हुए छ भागो में विभक्त किया गया है– पौराणिक, सैद्धान्तिक, बाह्योपचार सम्बन्धी, टीका, लोकसाहित्य और फुटकर साहित्य। इस पंथ के साहित्य की मुख्य विशेषता लोकगीत जैसे– फाग, मगलगीत, कव्वाली, नज्म आदि हैं। ज्ञान सागर, अनुराग सागर, कबीर मंसूर, कबीर वाणी, कबीरोपासना पद्धति आदि रचनाये इस साहित्य की मुख्य रचनाएँ हैं, जिनमे सृष्टि की उत्पत्ति पंथ के सिद्धान्त, अनेक प्रकार के वाह्योपचार, कवीर द्वारा विभिन्न रूपो मे अवतार लेने आदि का वर्णन किया गया है, साहित्य की भाषा कवीर की तरह लोकभाषा है। कबीरपथी कुछ ग्रथ हिन्दी के अतिरिक्त सस्कृत, उर्दू मे भी लिखे गये हैं। कबीरपथी सगठन अनेक स्कूलों, महाविद्यालयों द्वारा शिक्षा और जन–जागरूकता मे लगे हुए है। इसी प्रकार चिकित्सालयो द्वारा भी यह सगठन गरीबों शोषितो आदि की नि निस्वार्थ भाव से सेवा कर रहे है। कुछ आधुनिक कबीरपंथी मठ तो देशभक्ति साक्षरता और परिवार नियोजन आदि की भी शिक्षायें दे रहे है। कबीर के मानवता वादी कार्यो और मेलो, त्यौहारो, गोष्ठियो आदि के द्वारा भारतीय सभ्यता और सस्कृति की समृद्धि में भी इनका योगदान सराहनीय माना जा सकता है। आज का समय मानवतावादी नारी और दलित कल्याण का है इसमे इनका योगदान सराहनीय माना जा सकता है।

कवीर और उनके धर्म ने समाज के सभी वर्गो को प्रभावित किया है। कबीर का सर्वाधिक प्रभाव उत्तर भारत मे रहा है, मगर कबीर की आवाज दक्षिण भारत और विदेशो मे गूँजती रही हैं। कबीरपंथी सतो, महात्माओ और गृहस्थों ने भी सभाज को अपने–अपने तरह से प्रत्येक क्षेत्र मे प्रभावित किया है। कवीर से प्रभावित और लाभान्वित होने वाले वर्ग में दलित शोषित और मजलूम ही मुख्य रूप से माने जा सकते हैं। समाज का उच्च वर्ग उनसे दूर ही रहा है, इसका कारण सम्भवत उच्चवर्ग का सुविधापूर्ण, ऐश्वर्य पूर्ण जीवन यापन और

विशेषाधिकार प्राप्त होना रहा होगा। कबीर की शिक्षाओ से अकबर भी प्रभावित था और उसकी दीने इलाही सकल्पना कबीर के धर्म की एक शाखा भी मानी गयी है। कबीर के उपरान्त उनके शिष्य उनकी शिक्षाओ को कबीर की तरह प्रभावी रूप से प्रचारित–प्रसारित न कर सके। कबीर के शिष्यों के धर्म दर्शन सम्बन्धी मतभेदो ने भी इसमे बाधा पहुँचाई है। कबीरपंथी सगठनो की पद लिप्सा और ऐश्वर्य पूर्व जीवन जीने की चाह ने भी कबीर के धर्म के प्रचार–प्रसार मे बाधा पहुँचाई है। इसके अलावा कबीरपंथ पर पौराणिक प्रभाव ने भी इनका भला नही किया है। कबीरपंथ की छत्तीसगढी शाखा पर सर्वाधिक पौराणिक प्रभाव देखा जा सकता है। कबीरपंथी विभिन्न संगठनो ने आपसी मतभेदो के बावजूद कबीर की मूल शिक्षाओ को जीवन्त रखा है और उसका प्रचार प्रसार किया है सभी सगठनों ने कबीर बीजक को गीता, महाभारत, कुरान, बाइबिल की तरह पवित्र माना है। अधिकांश कबीरपंथी सतो, महात्माओ ने बीजक की अपनी–अपनी तरह से व्याख्या की है और बीजक पर टीकाएँ की है।

कबीर के वास्तविक व्यक्तित्व का चित्रण किया जाना चाहिए चाहे, वह किसी भाषा के साहित्य मे हो या किसी वस्तुनिष्ठ विषय मे जैसे इतिहास मे तभी हम इस दलितो, पीडितों और तिरस्कृत जीवों के उन्नायक समता, मानवता और विश्व बन्धुत्व के नायक के साथ न्याय कर पायेंगे। कबीर को स्वयं का गुरू या आराध्य मानकर अपना स्वार्थ सिद्ध करने से कबीर का अहित ही हुआ है कबीरपंथी संतो, महात्माओं और गृहस्थो आदि ने ऐसा अधिक किया है। इसलिये कबीर के शिक्षाओं के प्रचार–प्रसार में बाधा आयी है। आज की राजनीतिक ,सामाजिक, आर्थिक, नैतिक और धार्मिक परिस्थितियो मे कबीर के मार्ग की सबसे अधिक आवश्कता है तभी हम इस विश्व से अनैतिकता, साम्प्रदायिकता, लिंग–भेद, भ्रष्टाचार, असमता भेद मिटा सकते हैं।

आज हम वैज्ञानिक युग मे जी रहे है ऐसी स्थिति मे वैज्ञानिक दृष्टिकोण के आधार पर कबीर को समझाने की जरूरत है। ज्ञानमार्गी होने के कारण कबीर ने बाह्यआडम्बरों और अन्धविश्वासो का विरोध किया और मानसिक जप, मन साधन और सत्संग की महिमा को स्थापित किया। इतिहास विषय मे ही नही सभी विषयों और साहित्य मे कबीर के मानवतावादी धर्म को व्यापक परिप्रेक्ष्य मे विश्लेषण की जरूरत है। कबीर के शिष्यो का परम कर्तव्य है कि निःस्वार्थ भाव से कबीर के सच्चे मार्ग का प्रचार–प्रसार करे तभी वह कबीर के सच्चे शिष्य होने के वास्तविक दावेदार माने जायेगे।

परिशिष्ट – 1

कबीर और कबीरपंथ के सिद्धान्त तथा विचारधारा : तुलनात्मक अध्ययन

कवीर और कबीरपंथ की विचारधारा में साम्य और वैषम्य दिखाई देता है। कवीर के उपरान्त की परिस्थितियॉं, विभिन्न पंथों के प्रभाव और विभिन्न कबीरपथ की शाखाओ के आचार्यो की भूमिका के कारण कवीरपथी विचारधारा मे काफी परिवर्तन आया है। जिन बाह्योपचारो की कबीर ने हॅंसी उडायी उन्ही को कवीरपंथी सतो ने प्रश्रय दिया। कबीर पथ की सभी शाखाओ मे साम्य यह दिखाई देता है कि सभी 'बीजक' को प्रामाणिक धर्मग्रन्थ की तरह आराध्य और सम्माननीय मानती हैं। 'बीजक' कबीर की सच होने के कारण कबीरपथी मठो मे वेद, उपनिषद, गीता और कुरान की तरह सम्मानित और प्रतिष्ठित है। सभी मठो मे बीजक पाठ भक्तों द्वारा किया जाता है। कबीरपथी कबीर को नायक और बीजक को धर्मग्रन्थ के रुप मे स्वीकार करते हैं। परमतत्व और जीवात्मा के सम्बन्ध मे कबीर और कबीरपथी सिद्धान्तो मे अन्तर दिखाई देता है। कबीरपंथी उपनिषदों से प्रभावित लगते है। कबीरपथ की छत्तीसगढी शाखा पुराणो से काफी प्रभावित है। परमतत्व के अस्तित्व को स्वीकार करते हुए कबीर ने उसे मन, वाणी और बुद्धि से परे बताया है। कबीरपंथ की छत्तीसगढी शाखा मे भी इसी रुप में परमतत्व को स्वीकार करती है।[1] कबीर का परमतत्व अविगत अलख, निराकार और सर्वव्यापी है। इसी प्रकार का विचार छत्तीसगढी शाखा और बुरहानपुर की कबीरपंथी शाखा का भी विचार हैं। इसी तरह कबीर और कवीरपंथी परमतत्व सृष्टिकर्ता मानते है। बुरहानपुर की शाखा अपना अलग मत रखती है, इस शाखा के अनुसार सृष्टिकर्ता कोई ब्रह्म या ईश्वर नही है। कबीर का ब्रह्म अनादि होते हुए सगुण और निर्गुण से परे है और इसी तरह

---

1 ब्रह्मनिरुपण, पृष्ठ 68, श्लोक 54 (टीकाकार, श्री विचारदास जी)

कवीरपथी भी उसे अनादि सगुण और निर्गुण मानते हैं। अवतारवाद के सम्बन्ध मे कबीरपथी कबीर की धारणा से हटकर औपनिषदीय अवतारवाद को स्वीकार करते है। कबीर की जीवात्मा सम्बन्धी धारणा को छत्तीसगढी शाखा स्वीकार करती है। कबीर की भॉति कबीरपथी भी जीवात्मा को अनादि, आनन्दस्वरुप और ज्ञानस्वरुप मानते है। प्रतिबिम्बवाद सिद्धान्त को कबीर की भॉति कबीरपथ की छत्तीसगढी आदि शाखाऍ मानती है।

माया ओर जगत सम्बन्धी सिद्धान्तों के बारे मे भी कबीर की विचारधारा और कवीरपथी विचारधारा मे काफी साम्य और वैषम्य दिखाई देता है, कबीर और कबीरपथी दोनो माया को बाधक तत्त्व तथा व्यावहारिक रुप से असत् मानते हैं। कबीरपथी सत गुरुदयाल साहब ने भी कबीर की विचारधारा की तरह माया को चंचल नारी, डाइन आदि रुपो वाली कहा हैं।[1] कबीर की माया निर्गुणात्मिका और प्रसवधर्मिणी है। कबीर के अनुसार सारी सृष्टि की उत्पत्ति माया से हुई है, कनक और कामिनी इसके दो रुप है। कबीर पंथ की छत्तीसगढ की शाखा भी माया को त्रिगुणात्मिका और दो स्थूल रुपो वाली मानती है। जहॉ कबीर माया के दोनो रुपो वाली मानती है जहॉ कबीर माया के दोनो रूपो की भर्त्सना करते है, तो कवीरपथी उन्हे भ्रम कहते है। जगत्तत्व के सम्बन्ध मे भी कबीर और कबीरपथ की छत्तीसगढी शाखा मे कुछ साम्य प्रतीत होता है। छत्तीसगढी शाखा के सृष्टि सम्बन्धी विचार पर वैदिक पुराणो का प्रभाव दिखाई पडता है, परन्तु बुरहानपुर वाली शाखा का विश्वास इसी सृष्टि कर्ता मे नहीं है। कबीरपथी शाखाओं मे जगत या सृष्टि क्रम सम्बन्धी धारणा की व्याख्या कबीर की तुलना मे अधिक व्यापक ढग से की गयी हैं। कबीर ने ब्रह्म को सृष्टि का निमित्तोपदान कारण माना है, दूसरी ओर बुरहानपुर वाली शाखा के अनुसार सृष्टि अनादि है।

---

1 गुरुदयाल साहव, 'कबीर परिचय', साखी 57

जिसका एक साथ नाश नही हो सकता। इसी प्रकार की काशीवाली शाखा की भी धारणा है।

ज्ञान :

ज्ञान के बारे में कबीर का मत परम्परागत भारतीय दृष्टिकोण से अलग हटकर है, उनके अनुसार ज्ञान की प्राप्ति पुस्तकीय ज्ञान से नही बल्कि चितन और विवेक से ही सम्भव है। ज्ञान मन पर विजय प्राप्त करने का साधन है। दूसरी ओर कबीरपंथी ज्ञान को मुक्ति का साधन मानते हैं। कबीरपथी भी कबीर विचारधारा को अपनाकर मुक्ति का मार्ग खोजते है। अनीश्वरवादी शाखा 'पारखी ज्ञान' को वास्तविक ज्ञान मानते है।

भक्ति :

कबीर भक्ति को भूरि–भूरि प्रशसा करते है। विषयाशक्ति के निवृत्ति पूर्वक स्वस्वरुप का स्मरण की स्थिति ही भक्ति है। कबीर ने निष्काम भक्ति को सबसे अधिक महत्व दिया है, सकाम भक्ति को नहीं। भक्ति के साधनो मे गुरु, सत्संग, ज्ञान और विश्वास मे सत्सग को भी उन्होंने स्वर्ग माना है। धनौती और छत्तीसगढी शाखा मे भी भक्ति को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है, परन्तु अनीश्वरवादी कबीरपथी शाखाएँ भक्ति को महत्वपूर्ण नही गानती जैसे– बुरहानपुर वाली आदि शाखाएँ।

योग :

योग के सम्बन्ध में कबीर की विचारधारा का स्पष्ट वर्णन नही मिलता। हठयोग को उन्होने मन को एकाग्र करने का साधन माना है।[1] यम, नियम आदि का उन्होने उल्लेख भी किया है। कबीरपंथी विचारधारा मे हठयोग स्वरयोग,

---

1 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीरपथ', पृष्ठ 119

राजयोग, ध्यानयोग, सहजयोग और सुरति योग का वर्णन किया गया है। 'पवन स्वरोदय' नामक कबीरपथी ग्रन्थ में 'स्वरोदय सिद्धान्त' का वर्णन किया गया है। दूसरी ओर अनीश्वरवादी कबीरपथी विचारधारा हठ राजयोग आदि को अनावश्यक मानती है।

मोक्ष :

मोक्ष से सम्बन्ध मे कबीर की धारणा स्पष्ट रुप से वर्णित नही है। डॉ केदारनाथ द्विवेदी की मान्यता है कि कबीर जीवनमुक्ति को ही परमकाम्य समझते थे। कबीर माया से मुक्त हो जाने को सबसे बडा मोक्ष मानते थे। स्वर्ग–नरक की धारणा में उनका विश्वास नही था। वे विदेह मुक्ति की धारणा के भी समर्थक थे, कबीरपथी ईश्वरवादी विचारधारा जीवनमुक्ति और विदेह मुक्ति को मानते हुए स्वतत्र रुप से चिंतन करती है तो अनीश्वरवादी शाखा की मान्यता है कि जिसके मोह का क्षय हो गया, जो आत्म स्वरुप मे स्थिर हो गया। वह जीवन में मुक्त हो जाता है। अनीश्वरवादी शाखा मोक्ष की प्राप्ति के लिए बाह्योपचारो को निरर्थक मानती है।

कबीर के आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक विचारो को भी कबीरपथी शाखाओ ने यत्र–तत्र परिवर्तन के साथ स्वीकार किया है। कबीरपथी धार्मिक विचारधारा दो भागों विभाजित है– ईश्वरवादी और अनीश्वादी। इनमें ईश्वरवादी पर वेदान्त आदि का प्रभाव देखा जा सकता है, परन्तु दूसरी ओर अनीवश्वरवादी शाखा कबीर के धार्मिक सिद्धान्तो का अधिकाशत. पालन करती हुई दिखाई पडती है।

जहॉ कबीर के धार्मिक विचारों मे बाह्योपचारो को कोई स्थान नहीं प्राप्त है, उनके लिए तीर्थयात्रा, दान, हज, रोजा आदि व्यर्थ है। सभी धर्मो की सत्यता और समानता मे उनका विश्वास है। उन्होने सदाचार और कर्म की महत्ता को

सर्वोपरि स्थान दिया। उनका धर्म स्वानुभूति पर आधारित मानवतावादी मूल्यो का पोषक है। दूसरी ओर कबीरपंथी ईश्वरवादी शाखा कबीर के सदाचार और नैतिक मूल्यो को पूरा सम्मान देते हुए बाह्योपचारों को भी स्वीकार करती है। छत्तीसगढी शाखा इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। अनीश्वरवादी शाखा में काशी और बुहरानपुर वाली आदि शाखाएँ बाह्योपचारों की कट्टर विरोधी है परन्तु वे सदाचार और नैतिकता की पोषक है।

इसी प्रकार कबीर का आर्थिक चितन समाजवादी मूल्यो पर आधारित माना गया है, जिसमे समानता के आधार पर सभी को आर्थिक सुरक्षा की बात कही गयी है। कबीर पूँजीपतियों की मनोवृत्ति को उदार बनाकर वितरण की व्यवस्था को हल करने की कोशिश करते हैं। उनके शब्दो मे वास्तव मे निर्धन वह है जिसके हृदय में राम के प्रति प्रेम का भाव न हो। इस अर्थ मे पूँजीपति भी निर्धन है। कुछ कबीरपथी समाजवादी विचारधारा को खुलकर अपनाते है, जैसे महन्त बालकृष्णदास साहब। कबीरपंथी विचारधारा का आर्थिक चिंतन कबीर के विचारधारा के समान परन्तु समय के साथ बदलते हुए मूल्यो पर आधारित है। कबीरपंथी भी कबीर की ही भॉति अत्यधिक सचय की कुप्रवृत्ति के विरोधी हैं और वे भी कर्म की महत्ता के प्रबल पोषक है।

सामाजिक विचारधारा के बारे में कबीर और कबीरपथी सामाजिक सहिष्णुता के पक्षधर है दोनो वर्णव्यवस्था जन्य दोषो जैसे– अस्पृश्यता आदि को वैज्ञानिक और विश्वसनीय नही मानते हैं। कबीर ने सामाजिक विषमता का मूल कारण विभिन्न धर्म ग्रन्थो के प्रति अंधविश्वास को माना। उन्होने पुस्तकीय ज्ञान को निरर्थक सिद्ध करने के लिये अनुभूति–मूलक सत्य का महिमा मण्डन किया। कबीरपथी सभी शाखाएँ भी सामाजिक समानता की पक्षधर और वर्ण व्यवस्था, अस्पृश्यता आदि की विरोधी हैं। कबीरपथी समाज मे सुदृढता के लिए

सबसे पहले शूद्रो को सर्वोपरि स्थान प्रदान करते है। समय परिवर्तन के साथ बदलते सामाजिक मूल्यो के प्रति भी कबीरपंथी अपने विचार व्यक्त करते हैं। वे परिवार नियोजन स्त्री स्वातत्र्य आदि के समर्थक है। वे फैशन को अनावश्यक व प्रदर्शन की वस्तु मानकर उसकी आलोचना करते है।

कबीर के समय राजनीतिक निरकुशता और कट्टरता का बोल–बाला था। अत उन्होने इन प्रवृत्तियो पर कडी प्रतिक्रिया दिखाई। राजनीतिक सिद्धान्तो के बारे मे उनके स्पष्ट विचार नहीं मिलते है, परन्तु फिर भी वे राजनीतिक निरकुशता, विलासिता, कट्टरता और अत्याचारो के विरोधी और सर्वधर्म समभाव पर आधारित राजनीतिक विचारधारा के पोषक माने जा सकते है। कबीर को समाजवादी मूल्यो का आदि प्रवर्तक कहा जाता है।[1] कबीरपथी सत महात्मा आदि राजनीतिक विचारो को खुलकर व्यक्त करते हैं। कबीर मशूर' और 'भक्ति पुष्पाजलि' आदि ग्रन्थों में आहिसा पर आधारित राजनीतिक विचारधारा का समर्थन किया गया है। गांधीवाद और स्वतत्रता के प्रति कबीरपथी आशक्त है। इसका प्रभाव कबीरपंथी काव्य पर भी पड़ा है, भक्ति पुष्पांजलि का कवि कबीर को सम्बोधित कर प्रार्थना करता हुआ कहता है कि हे भगवन ! मै विघ्न समूह को त्यागकर कर्मठ बनूँ, देशों द्वार के लिए तैयार रहूँ और आपकी कृपा से स्वतत्रता का पुजारी रहूँ, मेरा व्रत अहिसा हो तथा मै जनसेवी बनूँ।[2]

---

1 सपादक हरिश्चन्द्र वर्मा, 'मध्यकालीन भारत', भाग 1, पृष्ठ 440

2 भक्ति पुष्पाजलि, 'श्रीमद्भागवद् गोस्वामी प्रार्थना', स्तवक, श्लोक 4

परिशिष्ट – 2
कबीरपंथ पर प्रभाव

जिस प्रकार कबीरपथ ने दूसरे पथो, धर्मो को प्रभावित किया उसी प्रकार वह भी अनेक धर्मों, सम्प्रदायों, पथो आदि से प्रभावित हुआ है। कबीरपथ पर धर्म सम्प्रदाय का प्रभाव पडा है। कबीरपंथ के प्रादुर्भाव काल मे आसाम से लेकर उडीसा तक 'धर्म सम्प्रदाय' लोकप्रिय था। अत कबीरपंथी महात्माओं ने समाज में लोकप्रिय होने के लिए उसमे प्राप्त मंगल काव्यो की विश्वासपरक मान्यताओ को ग्रहण करना उचित समझा। ऐसा विश्वास किया जाता है कि धर्म पूजा राढ देश मे उद्भूत हुई थी। इसके पूज्य देव धर्म–ठाकुर है। अधिकतर निम्नवर्गीय लोग इसके उपासक थे। इस धर्म सम्प्रदाय की सृष्टि प्रक्रिया का प्रभाव कबीरपंथ की छत्तीसगढी शाखा पर पडा है।[1] मंगल साहित्य मे धर्म स्वय कुमारी का रुप धारण करता है और स्वय ही उसके सम्पर्क मे आता है, जिससे ब्रह्मा, विष्णु और महेश की उत्पत्ति होती हैं। धर्म सम्प्रदाय की सृष्टि विषयक उद्भावना का मूल स्रोत वैदिक साहित्य है। इस प्रकार जहॉ धर्म सम्प्रदाय भी स्वय अन्य धार्मिक मान्यताओ से प्रभावित हुआ है और कबीरपथ धर्म सम्प्रदाय से।

कवीरपंथ पर जैन धर्म का भी प्रभाव माना जाता है। महावीर के ज्ञान सिद्धान्त का प्रभाव कबीरपथ की छत्तीसगढी शाखा पर माना जाता है। मन, श्रुति अवधि, मन· पर्याय और केवल पॉच प्रकार के ज्ञान को महावीर स्वामी ने माना है।[2] कबीरपंथ की छत्तीसगढी शाखा मे भी इन पॉचों प्रकार के ज्ञान का

---

1 डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, 'कबीर और कबीरपथ', पृष्ठ 315

2 डॉ0 चन्द्रधरशर्मा, 'भारतीय दर्शन', पृष्ठ 30

समर्थन किया गया है। 'कर्मबोध' नामक पुस्तक मे इनका वर्णन देखा जा सकता है।

कबीरपथ पर ईसाई धर्म का भी प्रभाव माना जाता है। कबीरपथ की कुछ शाखाओ मे परवाना देने की प्रथा है। ऐसा विचार व्यक्त किया जाता है कि कबीरपंथ में इस परवाना देने की प्रथा की शुरुआत ईसाई संतो के प्रभाव के कारण हुई होगी। ईसाई धर्म में पूर्व मध्ययुग में रोम मे पोप की ओर से ईसाइयो को स्वर्ग दिखाने के लिये एक प्रकार का अनुग्रह पत्र दिया जाता था।[1] सम्भव है कि छत्तीसगढ़ी शाखा ने भी ईसाई प्रभाव में आकर इस प्रथा को अपनाया हो।

कबीरपंथ पर रामानन्दी सम्प्रदाय का भी प्रभाव पडा है। ऐसी धारणा है कि कबीर रामानन्द के शिष्य थे। 'रामानन्द सम्प्रदाय' की भक्तो की दिनचर्या पृथ्वी प्रार्थना मंत्र, लघुशका मंत्र, दीर्घशंका मंत्र, कुल्ला करने की विधि इत्यादि अनेक प्रकार के मत्र कबीरपंथ की छत्तीसगढी शाखा मे स्वीकृत है। रामानन्दी सम्प्रदाय की भॉति कबीरपंथ मे भी 'द्वादश तिलक' की प्रथा है।

कबीरपंथ पर तांत्रिक मान्यताओ का भी व्यापक प्रभाव पडा है। यह प्रभाव दर्शन, साधना और बाह्योपचारों आदि रुपो में देखा जा सकता है। छत्तीसगढी शाखा पर इस प्रकार का प्रभाव परिलक्षित होता है। दार्शनिक सिद्धान्तों की दृष्टि से कबीरपथ की सृष्टि क्रम सम्बन्धी मान्यताओ पर तत्रो का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। कबीरपथ सृष्टि विकास के तीन प्रमुख भेद ब्रह्म–सृष्टि, जीव–सृष्टि और माया–सृष्टि को स्वीकार करता है। कबीरपथ के ब्रह्म सृष्टि की तुलना पाचरात्र सम्प्रदाय की शुद्ध सृष्टि से और माया सृष्टि की तुलना शुद्धेत्तर

---

1 डॉ0 कालूराम शर्मा एव डॉ0 प्रकाश त्याग, 'विश्व इतिहास', पृष्ठ 330

सृष्टि से की जा सकती है।[1] कबीरपंथ की माया सृष्टि सम्बन्धी कल्पना पुराणो से अधिक प्रभावित है और माया सृष्टि सम्बन्धी कल्पना पर शैव, शाक्त तथा पॉचरात्र आगमो का मिश्रित प्रभाव पडा है। तंत्रो के समान कबीरपंथ शब्द प्रमाण (वेद) को नहीं आप्त प्रमाण का समर्थक है और गुरुवचन को सर्वोच्च मानता है। गुरु और नाम के अतिरिक्त कबीरपथ तत्रों के समान ही साधना के लिए दीक्षा को भी वहुत महत्व देता है। इसी प्रकार कबीरपथ की छत्तीसगढी शाखा में प्रचलित 'चौका विधान' की रुपरेखा उसकी क्रियाओ और उपकरणो की प्रतीकात्मकता कर्मकाण्ड की दृष्टि से कबीरपथ को सहज ही तत्रो के प्रभाव क्षेत्र में ले जाती है। तत्रों के समान कबीरपंथ में भी समस्त बाह्योपचारो मे मंत्रो को बहुत महत्व दिया जाता है।

कबीरपंथ पर पुराणो का भी प्रभाव पड़ा है। कबीरपथी साहित्य विशेष रुप से छत्तीसगढी शाखा से सम्बन्धित समस्त प्रबन्ध रचनाएँ सम्मिलित रुप से एक वृहद पुराण जैसा प्रभाव उत्पन्न करती है, जिनके प्रधान देव है सत्यपुरुष स्वरुपी कबीर साहब। पुराणो के समान कबीरपथ रचनाओं में परब्रह्म, सत्यपुरुष, आद्या व निरजन से माया सृष्टि की उत्पत्ति हितचिंतक के रुप में सत्यपुरुष स्वरुपी कबीर की सर्वश्रेष्ठता का प्रतिपादन, कबीर के विभिन्न अवतारो आदि का वर्णन बार–बार हुआ है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि विभिन्न पंथो का विभिन्न विचारधाराओ पर बाह्य प्रभाव पडता ही रहता है और वे एक दूसरी विचारधाराओ और पथो को भी प्रभावित करते रहते हैं। यह महत्वपूर्ण नहीं है बल्कि महत्वपूर्ण यह है कि उन्होने जनमानस को कितना प्रभावित किया है। इस सम्बन्ध मे कबीरपथ विचारधारा इसलिये महत्वपूर्ण है कि इस विचारधारा ने दूसरी विचारधाराओ से

---

1 डॉ0 उमा ठुकाराल, 'कबीरपथ, साहित्य, दर्शन एव साधना' पृष्ठ 519

प्रभावित होते हुए अपने मूल सिद्धान्तो को बरकरार रखा है और जनमानस को भी अपनी ओर आकृष्ट किया है। हो सकता है कि कबीरपथ ने बाह्यप्रभावो को इसलिये स्वीकार किया हो ताकि जनता को ज्यादा प्रभावित कर सके। सभी कबीरपंथी शाखाएँ अपने अस्तित्व काल से आज तक 'बीजक' को ही धर्मग्रन्थ के समान मानती चली आ रही है और कबीर ही उनके आदर्श है। मानवता सेवा उनकी आराधना रही है। कबीरपथ की विभिन्न शाखाओ मे कबीर की इच्छा के अनुरुप मानवोपयोगी कार्य किये जा रहे है। कबीरपथ की विभिन्न शाखाओ मे गरीबो के लिये शिक्षा हेतु स्कूल, महाविद्यालय, चिकित्सा हेतु चिकित्सालय आदि की व्यवस्था करके और सुचारु रुप से संचालित करके सराहनीय कार्य किया है।[1] कबीरपंथ की इलाहाबाद की कबीर पारख सस्थान वाली शाखा की स्थापना इसलिए की गयी है ताकि कबीर के वास्तविक साहित्य और सिद्धान्तों का प्रचार–प्रसार किया जा सके।[2] कबीरपथ की काशीवाली शाखा और बुरहानपुरवाली शाखा आज भी कबीर के सिद्धान्तो की सरक्षक है। इस प्रकार कबीरपथ ने बाह्य प्रभाव स्वीकार करते हुए भी दूसरे पथो को भी प्रभावित किया और कबीर के मूल सिद्धान्तो को अक्षुण्य रखा है, सभवत इसी कारण जनसाधारण ने कबीरपथ के बाह्योपचारो को सहजता से स्वीकार कर लिया।

* * * * *

1 कबीर पारख सस्थान, इलाहाबाद के महत श्री धर्मेन्द्र दास जी के साथ शोधकर्ता को दिये गये साक्षात्कार मे।

2 कबीर पारख सस्थान, इलाहाबाद के महत श्री धर्मेन्द्र दास जी के साथ शोधकर्ता को दिये गये साक्षात्कार मे।

सहायक ग्रन्थ सूची

क्रमाक	ग्रन्थ	लेखक, प्रकाशन, प्रकाशन स्थान और सस्करण वर्ष
1	कबीर और कबीरपथ	डॉ0 केदारनाथ द्विवेदी, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, सन् 1995
2.	उत्तरी भारत की सन्त परपरा	परशुराम चतुर्वेदी, लीडर प्रेस, प्रयाग
3	गरीबदास की बानी	बेलविडियर प्रेस, प्रयाग, सन् 1998
4	रैदास की बानी	वेलविडियर प्रेस, प्रयाग, सन् 1997
5	मलूकदास की बानी	वेलविडियर प्रेस, प्रयाग, सन् 1997
6	रामानन्द सम्प्रदाय तथा हिन्दी साहित्य पर उसका प्रभाव	डॉ0 बद्रीनारायन श्रीवास्तव, हिन्दी परिषद, प्रयाग विश्वविद्यालय, सन् 1957
7.	कबीर दर्शन	अभिलाष दास, कबीर पारख सस्थान, इलाहाबाद, सन् 2000
8	दरियासागर	बेलविडियर प्रेस, प्रयाग
9.	कबीर के ज्वलंत रूप	धर्मेन्द्र दास, कबीर पारख सस्थान, इलाहाबाद, सन् 2001
10.	भारतीय इतिहास में मध्यकाल	प्रो0 इरफान हबीब, सहमत, नई दिल्ली, सन् 1999
11	कबीर	आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सन् 1988
12	भक्तमाल	नाभादास, नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, सन् 1951
13.	गुरूग्रन्थ साहब	शिरोमणि गुरूद्वारा प्रबन्धक कमेटी, अमृतसर, सन् 1951
14	उत्तर भारत के निर्गुण पंथ का साहित्य	डॉ0 विष्णु दत्त राकेश, साहित्य भवन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद, सन् 1975

15	कबीरपथ साहित्य,	डॉ0 उमा ठुकराल, दर्शन एव साधना हिन्दी बुक सेन्टर, नई दिल्ली, सन् 1998
16	कबीर तीर्थ एक झलक	सन्त विवेकदास आचार्य, कबीर वाणी प्रकाशक केन्द्र, वाराणसी
17	कवीर साहित्य की प्रासगिकता	सन्त विवेकदास, कबीर वाणी के प्रकाशन केन्द्र, वाराणसी, सन् 1978
18	कवीर राहब	सम्पादक विवेकदास, कबीर वाणी प्रकाशन केन्द्र, वाराणसी, रान् 1978
19	बीजक	कबीर पारख संस्थान, इलाहाबाद, सन् 1999
20	आस्था के पथ	कबीर पारख संस्थान, इलाहाबाद, सन् 1988
21	कवीर भजनावली भाग 1	कबीर पारख सस्थान, इलाहाबाद, सन् 1989
22	कबीर भजनावली भाग 2	कबीर पारख सस्थान, इलाहाबाद, सन् 2000
23	कबीर की उलटवासिया	अभिलाष दास, कबीर पारख सस्थान, इलाहाबाद, सन् 2002
24	कवीर साखी	कबीर पारख सस्थान, इलाहाबाद, सन् 1998
25	कबीर पंथी जीवनचर्या	अभिलाषदास, कबीर पारख सस्थान, इलाहाबाद, सन् 2000
26	कवीर कौन ?	अभिलाष दास, कबीर पारख सस्थान, इलाहाबाद, सन् 2000
27	सद्गुरू कवीर और पारख रिद्धान्त	धर्मेन्द्र दास, कबीर पारख सस्थान, इलाहाबाद, सन् 1999
28	कवीर रादेश	अभिलाषदास, कबीर पारख सस्थान, इलाहाबाद, सन् 1998
29	नादवश का सक्षिप्त इतिहास	आचार्य स्वामी महेश, प्रकाशक चरण शिष्य श्री महंत मंगलदास नादिया, राजनादगाव, मध्य प्रदेश, सन् 1996
30	सद्गरू कबीर सचित्र जीवन दर्शन	महन्त जगदीश दास जी शास्त्री, श्रीमहन्त श्री राम स्वरूपदास जी महाराज साहेब श्री कबीर आश्रम, कबीर रोड, जामनगर, गुजरात, सन् 2001

31	कबीर एक अध्ययन	रामरतन भटनागर, किताब महल, इलाहाबाद, सन् 1946
32	हिन्दी साहित्य का इतिहास	प0 रामचन्द्र शुक्ल, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, स0 2005
33	कबीर ग्रन्थावली	डॉ0 श्याम सुन्दर दास, काशी नगरी प्रचारिणी सभा, काशी, स0 1987
34.	भारत का सास्कृतिक इतिहास	डॉ0 एम0पी0 श्रीवास्तव, इण्डिया बुक एजेन्सी, इलाहाबाद, सन् 2001
35	विश्व साहित्य मे पाप खण्ड–1	डॉ0 आशा द्विवेदी, ए0टू0जेड पब्लिकेशन जीरो रोड, इलाहाबाद, सन् 2000
36	भारत का सामाजिक सास्कृतिक और आर्थिक इतिहास भाग– 2	पी0एन0 चौपड़ा, बी0एन0 पुरी, एम0एस0 दास, मैकमिलन इण्डिया लिमिटेड,, दिल्ली, सन् 1998
37	मध्यकालीन भारत भाग–1	सम्पादक हरिश्चन्द्र वर्मा, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, सन् 1992
38	दादू उपक्रमणिका	आचार्य क्षिति मोहन सेन
39	रेहाना बेगम	अवध के सामाजिक जीवन का इतिहास, कनिष्का पब्लिर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली, सन् 1994 प्रथम सस्करण
40	कबीर नई सदी मे तीन, बाज भी, कपोत भी पपीहा भी	डॉ0 धर्मवीर, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सन् 2000
41.	भारतीय दर्शन आलोचन और अनुशीलन	चन्द्रधर शर्मा मोतीलाल, बनारसी दास पब्लिशर्स प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, सन् 1998 ई0
42	भक्ति आदोलन इतिहास और सस्कृति	सम्पादक कुवर पाल सिह प्रोफेसर, वाणी प्रकाशन, दरियागज नई दिल्ली।
43	उत्तर भारतीय भक्ति आदोलन मे कबीर और उनके निर्गुण पंथ की स्थिति।	लल्लनराय
44	विश्व इतिहास	डॉ0 कालूराम शर्मा, पचशील प्रकाशन, जयपुर, 2000 ई0

45	भारतीय दर्शन की रुप रेखा,	हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा, मोतीलाल बनारसी दास, नई दिल्ली, सन् 1996,
46	मध्यकालीन भारत, 8वी से 18वीं शताब्दी एक सर्वेक्षण,	इमत्याज अहमद, नेशनल पब्लिकेशन खजाची रोड, पटना, सन् 1997
47	कबीर तीर्थ– एक झलक	आचार्य संत विवेक दास, कबीरवाणी, प्रकाशन केन्द्र, वाराणसी।
48	ज्ञानसागर	लक्ष्मी वैकटेश्वर प्रेस, बाम्बे, सं0 2010
49	अनुरागसागर	लक्ष्मी वैकटेश्वर प्रेस, बाम्बे, रा0 1971
50	परमानन्द	कबरी मंशूर, लक्ष्मी वैंकटेश्वर प्रेस, बाम्बे
51	चौका स्वरोदय	लक्ष्मी वैकटेश्वर, प्रेस बाम्बे, स0 2011
52	कबीर वाणी	लक्ष्मी वैकटेश्वर, प्रेस बाम्बे, स0 2011
53	कबीर मंशूर	परमानन्द, लक्ष्मी वैकटेश्वर, प्रेस बाम्बे, स0 2009
54	चौका विधान	बसूदास, कबीरपथी स्वसवेद कार्यालय सीयाबाग, बड़ौदा, स0 2005
55	सत्यज्ञान बोध (नाटक)	श्री काशी साहब, निर्णय मन्दिर, बुरहानपुर, सन् 1956
56	इक्कीस प्रश्न	श्री रामसाहब, कबीर निर्णय मन्दिर, बुरहानपुर, स0 2011
57	पारख विचार	कबीर निर्णय मन्दिर, बुरहानपुर, सन् 1954
58	मूल निर्णय सार	श्री पूरन साहेब, कबीर निर्णय मन्दिर, बुरहानपुर, सन् 1954
59	श्री बालक भजनमाला	रामस्वरुपदास, कबीर निर्णय मन्दिर, बुरहानपुर, सन् 1954
60	कबीर परिचय	गुरुदयाल साहब, कबीर निर्णय मन्दिर, बुरहानपुर, सन् 1954
61	बन्दगी विचार,	प्रकाशमणि नाम साहेब, खरसिया, खरसिया, (बिहार), सन् 1952

62	सद्गुरु कबीर चरित्रम्,	ब्रह्मलीन मुनि, बड़ौदा, बडौदा, स0 2009
63	कबीरोपासना पद्धति,	युगलानन्द बिहारी, लक्ष्मी वेकटेश्वर प्रेस, बम्बई, स0 2013
64.	कबीर कसौटी	लहनासिंह, लक्ष्मी वेक्टेश्वर प्रेस, बम्बई, स0 2013
65		धनीधर्मदास की शब्दावली, वेलिविडियर प्रेस, प्रयाग, सन् 1947
66	सुरति शब्द सवाद,	मदन साहब, आचार्य गद्दी, बडैया, बडैया, सन् 1972
67	शब्द तिलारा	मदन साहब, आचार्य गद्दी बडैया, बडैया, सन् 1963
68	मूल बीजक,	पूरण साहब, लक्ष्मी वैंकटेश्वर प्रेस, बाम्बे
69	कबीर का रहस्यवाद	डॉ0 रामकुमार वर्मा, लीडर प्रेस, प्रयाग, सन् 1957
70	कबीर साहित्य की परख,	प0 परशुराम चतुर्वेदी, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, स0 2021
71	कबीर की विचारधारा,	डॉ0गोविन्द त्रिगुणायत, कानपुर, सन् 1952
72	कबीर साहित्य की भूमिका,	डॉ0 राम रतन भटनागर, लीडर प्रेस, प्रयाग, सन् 1950
73	हिन्दी काव्य मे निर्गुण सम्प्रदाय,	डॉ0 परशुराम चतुर्वेदी, लखनऊ।
74.	मध्यकालीन धर्मसाधना,	डॉ0 हजारीप्रसाद द्विवेदी, इलाहाबाद, सन् 1952
75.	मध्यकालीन भारतीय संस्कृति	डॉ0 गौरीशंकर ओझा
76	मध्यकालीन भारतीय सस्कृति	आशीर्वादीलाल श्रीास्तव
77.	संस्कृति के चार अध्याय	डॉ0 रामधारी सिंह दिनकर
78.	भारतीय संस्कृति और साधना,	प0 गोपीनाथ कविराज, राष्ट्रभाषा परिषद, बिहार, सन् 1964
79	मध्यकालीन सत साहित्य,	डॉ0 रामखेलावन पाण्डेय, हिन्दी प्रचारक, पुस्तकालय, वाराणसी, सन् 1965
80	कबीर–परम्परा	डॉ0 काति कुमार भट्ट, अभिनव भारती, इलाहाबाद, सन् 1975

अन्य भाषाओं के ग्रन्थ

क्र.	ग्रन्थ		लेखक / प्रकाशन
1	आइने अकवरी		अबुलफजल, नवल किशोर प्रेस, लखनऊ।
2	दबिस्ताने मजाहिब	.	मोहसिन फानी, बम्बई, 1262 हिजरी
3	कवीर और उनकी तालीम		महर्षि शिवव्रतलाल, मिशनप्रेस, लुधियाना, सन् 1906
4	कवीरपथ		महिर्ष शिवव्रत लाल, मिशनप्रेस, इलाहाबाद
5	बादशाहनामा	.	अब्दुल हमीद लाहौरी।
6	अकबर द ग्रेट मुगल	:	वी0ए0 स्मिथ
7	कवीर ऐण्ड कवीरपंथ	:	एच0जी0 वेस्टकाट, 1906
8	कवीर ऐण्ड हिज फालोवर्स	:	एफ0ई0की0
9	रेलीजस रोक्ट्स आफ हिन्दुइजम	:	एच0एच0 विलसन, 1846
10	द बीजक आफ कवीर	:	अहमदशाह
11	आउटलाइन ऑफ इस्लामिक कल्चर, भाग -2		ए0एम0 सुरलरी
12	एन आउटलाइन ऑफ द रेलीजस लिटरेचर इन इण्डिया	:	डॉ0 जे0एन0 फर्कुहर, 1920
13	ग्लिम्परोज आफ मेडिवल इण्डियन कलचर	:	डॉ0 यूसुफ हुसैन सनएशिया पब्लिसिंग हाउस बाम्बे, 1962 अलीगढ, यूनिर्वसिटी
14	बाथ,	:	रेलिजन्स ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली सन् 1978

15 इण्डियन हेरिटेज : हुमायूँ कबीर, बम्बई, सन् 1964

16 मेडिवल मिस्टीसिज्म : क्षिति मोहन सेन

17. हिस्ट्रियोग्राफी, रिलीजन एण्ड स्टेट इन मेडिवल इण्डिया : सतीशचन्द्र, नई दिल्ली।

18 इनफ्लुएन्स ऑफ इस्लाम आन इण्डियन कल्चर : डॉ0 ताराचन्द्र, इलाहाबाद, सन् 1946

19 : ब्रह्मवैवर्त पुराण, भारतीय संस्कृति संस्थान, बरेली, सन् 1969

20 : हठयोग प्रदीपिका, वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई, स0 2009

21 मानक हिन्दी कोश : सम्पादक रामचन्द्र वर्मा, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।

पत्र–पत्रिकाएँ

1 बतकही : प्रधान सम्पादक अमित मीत, इलाहाबाद अगस्त 2001

2 पारखप्रकाश : अभिलाषदास, कबीर पारख संस्थान इलाहाबाद, जनवर,–फरवरी, मार्च 2003

3. हिन्दुस्तान (हिन्दी) : लखनऊ, 21 अगस्त 2002

4. राष्ट्रीय सहारा (हस्तक्षेप) : लखनऊ, 27 जून 1999

5 नागरी प्रचारिणी पत्रिका : भाग– 14 बनारस

6	हिन्दुस्तानी भाग–2,	: प्रयाग
7	विश्वभारती पत्रिका, खण्ड–5	. शान्ति निकेतन
8	कबीर सन्देश	: बाराबकी, सन् 1946
9	वश परिचय	कबीर धर्मनगर, दामाखेडा
10.	सम्मेलन पत्रिका	. प्रयाग
11	जर्नल ऑफ दि यूनिवर्सिटी आफ बिहार भाग 2 (अंग्रेजी)	: नवम्बर, 1956
12	सामाजिक धार्मिक आलोचना	(14 से 19 वी शताब्दी मे उ0प्र0 में) पर सेमिनार (भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद नई दिल्ली मध्यकालीन द्वारा आधुनिक इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद 21 फरवरी से 23 फरवरी, 1982
13	द इम्पीरियल	. गजेटियर ऑफ इण्डिया
14.	द सेन्ट्रल इण्डिया	: स्टेट सेन्सस सीरिज रीवा स्टेट, 1881, 1891, 1901, 1911, 1921, 1931, 1941
15	साहित्य सदेश	: संत साहित्य विशेषांक, सन्, 1958
16	मलयागिरीदासगुरु	कबीरपथ की स्मारिका, सतना, सन् 1987
17		: जौरनल आफ दि यूनिवर्सिटी आफ बिहार
18.	सद्गुरु शबद विवेकी, व्यास मुनि दास,	: साधु कबीर, बनारस, सन् 1998